भाकृअनुप
ICAR

अंक 15, 2026

मत्स्य लोक



भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो



परिकल्पना

- बौद्धिक संपदा संरक्षण, सतत उपयोग और भावी पीढ़ी के लिए मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का आकलन और संरक्षण

मिशन

- साझेदारी और अत्याधुनिक तकनीकों की परिचालन रणनीतियों का उपयोग करके मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का संग्रह, सूचीकरण और प्रलेखन

अधिदेश

- मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का अन्वेषण, लक्षण वर्णन और सूचीकरण
- प्राथमिकता वाली प्रजातियों के संरक्षण और उपयोग के लिए मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का अनुरक्षण और परिरक्षण
- जोखिम मूल्यांकन और मत्स्य स्वास्थ्य सहित स्वदेशी और विदेशज जननद्रव्य का मूल्यांकन

मत्स्य लोक

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो की वार्षिक राजभाषा हिंदी गृहपत्रिका, अंक 15, 2026

प्रकाशक
डॉ. काजल चक्रबर्ती
निदेशक, भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो

संपादकीय मंडल
डॉ. काजल चक्रबर्ती
डॉ. ललित कुमार त्यागी
डॉ. ताराचन्द कुमावत
श्री सुभाष चन्द्र
डॉ. अखिलेश कुमार मिश्र
श्री राम सकल चौरसिया
श्री अभिषेक कुमार सिंह

मुद्रकः एपीपी प्रेस, लखनऊ

प्रकाशन एवं समन्वयन
राजभाषा अनुभाग
भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो
कैनाल रिंग रोड, डाकघर-दिलकुशा, लखनऊ-226002, उत्तर प्रदेश, भारत
ईमेलः director.nbfgr@icar.org.in
वेबसाइट: https://www.nbfgr.res.in/

आईएसएसएन: 1656-2454-5457

© भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो
उद्धरणः भाकृअनुप-रा.म.आनु.सं. ब्यूरो, 2026. मत्स्य लोक, अंक 15, भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ, पृष्ठ 160

अस्वीकरणः मत्स्य लोक पत्रिका में प्रकाशित आलेखों एवं रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। प्रकाशक या संपादकीय मंडल का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।



मुखपृष्ठ: मत्स्यावतार, भगवान विष्णु के 10 अवतारों में प्रथम अवतार

पार्श्वपृष्ठ: भाकृअनुप-रा.म.आनु.सं. ब्यूरो, लखनऊ

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो की वार्षिक राजभाषा हिंदी गृहपत्रिका मत्स्य लोक के आगामी अंक हेतु लेख एवं रचनाएं आमंत्रित है।



डॉ. काजल चक्रबर्ती
निदेशक

प्राक्कथन

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों के प्रलेखन, मूल्यांकन, सतत उपयोग, संरक्षण तथा प्रबंधन के लिए समर्पित एक राष्ट्रीय ब्यूरो है। बदलते पर्यावरणीय परिदृश्य, जलवायु परिवर्तन, जलीय प्रदूषण, आवास क्षरण, आक्रामक विदेशज प्रजातियों तथा मत्स्य रोगों जैसी उभरती चुनौतियों के बीच मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का संरक्षण एवं उनका विवेकपूर्ण उपयोग और भी महत्वपूर्ण हो गया है। इसी व्यापक राष्ट्रीय दायित्व की दिशा में ब्यूरो निरंतर अनुसंधान, संरक्षण, तकनीकी विकास, क्षमता निर्माण तथा जन-जागरूकता के माध्यम से योगदान दे रहा है।

वर्तमान समय में मत्स्य क्षेत्र का विकास केवल उत्पादन वृद्धि तक सीमित नहीं रह सकता। जैवविविधता संरक्षण, पारिस्थितिकीय स्थिरता, जलवायु-सहिष्णु मात्स्यिकी, आजीविका सुरक्षा, पोषण, डिजिटल प्रौद्योगिकी तथा ब्लू इकोनॉमी को एकीकृत दृष्टिकोण के साथ आगे बढ़ाना आवश्यक है। इस दिशा में ब्यूरो द्वारा अनुसंधान एवं विकास गतिविधियों को निरंतर व्यापक बनाया जा रहा है। इसी संदर्भ में 'मत्स्य लोक' का वर्तमान अंक विशेष महत्व रखता है। इस अंक में उत्तर प्रदेश के मत्स्य क्षेत्र के विकास से लेकर तालाबों में जल गुणवत्ता, नदीय मत्स्य जैवविविधता, जलवायु परिवर्तन, माइक्रोप्लास्टिक, आक्रामक विदेशी प्रजातियों, मत्स्य रोग एवं जैवसुरक्षा जैसे विषयों को स्थान दिया गया है, जो कि राजभाषा के संवर्द्धन के प्रति सदैव ऊर्जावान एवं निरंतर प्रयासरत रहने की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

मेरा विश्वास है कि 'मत्स्य लोक' वैज्ञानिक जानकारी को सरल एवं सुगम हिंदी में प्रस्तुत करते हुए वैज्ञानिक समुदाय, विद्यार्थियों, मत्स्य पालकों, मछुआरा समुदायों तथा सामान्य पाठकों के बीच उपयोगी ज्ञान-संवाद स्थापित करेगा। हिंदी में वैज्ञानिक लेखन को प्रोत्साहित करना हमारी वैज्ञानिक उपलब्धियों को व्यापक समाज तक पहुँचाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। मैं इस अंक के प्रकाशन के लिए सभी लेखकों, संपादकीय टीम तथा सहयोगी कार्मिकों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ देता हूँ। आशा है कि 'मत्स्य लोक' का यह अंक पाठकों को देश के समृद्ध मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण, सतत उपयोग और प्रबंधन के प्रति जागरूक करने के साथ-साथ भावी अनुसंधान एवं नवाचार के लिए प्रेरित करेगा।

सभी पाठकों को 'मत्स्य लोक 2026' की ओर से मेरी शुभकामनाएँ और धन्यवाद!

काजल

(काजल चक्रबर्ती)

संपादकीय

'मत्स्य लोक' के अंक 15, 2026 को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें हर्ष हो रहा है। इस अंक में भारतीय मत्स्य क्षेत्र से जुड़े विविध वैज्ञानिक, तकनीकी, पारिस्थितिकीय, सामाजिक एवं प्रबंधकीय विषयों को समाहित किया गया है। अंक की विषय-वस्तु मत्स्य उत्पादन से आगे बढ़कर जैवविविधता संरक्षण, जलीय पारिस्थितिकी, जलवायु परिवर्तन, मत्स्य स्वास्थ्य, आजीविका, पोषण सुरक्षा तथा उभरती प्रौद्योगिकियों तक विस्तृत है। अंक का आरंभ विकसित उत्तर प्रदेश हेतु मात्स्यिकी क्षेत्र के विकास की रूपरेखा, दृष्टिकोण एवं संस्थागत प्रयासों से होता है। इसके साथ तालाब प्रबंधन में जल गुणवत्ता, बायोफ्लॉक में सूक्ष्मजीवों की भूमिका, उच्च घनत्व में कैटफिश पालन तथा फ्लॉकपोनिक्स जैसी आधुनिक प्रणालियों पर आलेख सतत एवं संसाधन-कुशल मत्स्य उत्पादन की संभावनाओं को रेखांकित करते हैं। भारत की नदी प्रणालियाँ मत्स्य जैवविविधता की महत्वपूर्ण आधारशिला हैं। तीस्ता, चिनाब और सोन नदियों की मत्स्य विविधता, गंगा नदी पर बाँधों के प्रभाव तथा माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण जैसे विषय जलीय पारिस्थितिक तंत्रों के संरक्षण की आवश्यकता को सामने लाते हैं। वहीं राज्य मछली चीतल के संरक्षण एवं प्रजनन तथा सजावटी मत्स्य प्रजातियों पर आलेख देश की विशिष्ट मत्स्य जैवसंपदा के संरक्षण पर ध्यान आकर्षित करते हैं। जलवायु परिवर्तन, आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ और पर्यावरणीय परिवर्तन मत्स्य संसाधनों के लिए उभरती चुनौतियाँ हैं। इनके साथ प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना, ग्रामीण मात्स्यिकी, सामुदायिक सशक्तीकरण और मछली की पोषण सुरक्षा में भूमिका जैसे विषय मत्स्य क्षेत्र के सामाजिक-आर्थिक महत्व को रेखांकित करते हैं। आधुनिक मात्स्यिकी में गूगल अर्थ इंजन, इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा साइबर सुरक्षा जैसे विषय डिजिटल एवं डेटा-आधारित प्रबंधन की बढ़ती भूमिका को दर्शाते हैं। साथ ही रोग संक्रमण और जैवसुरक्षा से संबंधित आलेख स्वस्थ एवं सुरक्षित मत्स्य उत्पादन के लिए वैज्ञानिक प्रबंधन की आवश्यकता को स्पष्ट करते हैं। राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं कोष, लक्षद्वीप की समुद्री शैवाल, ब्लू इकोनॉमी, तथा जल संरक्षण जैसे विषय इस अंक को व्यापक पर्यावरणीय एवं विकासात्मक संदर्भ प्रदान करते हैं।

'मत्स्य लोक' का मूल उद्देश्य वैज्ञानिक ज्ञान को सरल, तथ्यपरक एवं सुगम हिंदी में व्यापक समाज तक पहुँचाना है। हमें विश्वास है कि यह अंक वैज्ञानिकों, शोधार्थियों, विद्यार्थियों, मत्स्य पालकों, मछुआरा समुदायों और अन्य हितधारकों के लिए उपयोगी ज्ञान-संसाधन सिद्ध होगा तथा भारत के समृद्ध मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों एवं जलीय जैवविविधता के संरक्षण और सतत् उपयोग के प्रति जागरूकता को सुदृढ़ करेगा। हम सभी लेखकों का हृदय से आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने अपने ज्ञान, अनुभव और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को हिंदी माध्यम से पाठकों तक पहुँचाने के लिए योगदान दिया। संपादकीय प्रक्रिया से जुड़े सभी सहयोगियों तथा इस अंक को मूर्त रूप देने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से योगदान देने वाले सभी कार्मिकों के प्रति भी हम कृतज्ञ हैं। आइए, वैज्ञानिक ज्ञान, जनभागीदारी और संस्थागत प्रयासों के समन्वय से भारत की समृद्ध मत्स्य जैवविविधता एवं आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण तथा उनके सतत् उपयोग की दिशा में अपने प्रयासों को निरंतर आगे बढ़ाएँ।

आपके सहयोग और ज्ञानवर्धन की आशा के साथ,

संपादकीय मंडल, मत्स्य लोक



अनुक्रमणिका

1. **विकसित उत्तर प्रदेश हेतु मात्स्यिकी क्षेत्र के विकास की रूपरेखा, दृष्टिकोण एवं संस्थागत प्रयास** 1
काजल चक्रबर्ती एवं ताराचन्द कुमावत

2. **मत्स्य पालन के लिए तालाब प्रबंधन में जल गुणवत्ता का महत्त्व** 7
आदित्य कुमार, राघवेंद्र सिंह, राजकमल मिश्रा, वैशाली एवं मोनिका गुप्ता

3. **बायोफ्लॉक तकनीक में सूक्ष्मजीवों की भूमिका** 10
वैशाली, राज कमल मिश्रा, आदित्य कुमार, राघवेंद्र सिंह, चंद्रभूषण कुमार एवं मोनिका गुप्ता

4. **पाकु मछली (*पियारैक्टस ब्रैकिपोमस*) – एक परिचय, पोषण मूल्य एवं पालन विधियाँ** 14
विजयपाल चौधरी एवं आदित्य कुमार

5. **तीस्ता नदी की मत्स्य जैवविविधता, संरक्षण चुनौतियाँ एवं मछुआरा समुदायों की आजीविका** 18
रजनी चंद्रन, सौरव साहा, अमित सिहं बिष्ट, ललित कुमार त्यागी, कांताराजन जी., राजीव कुमार सिंह एवं काजल चक्रबर्ती

6. **गूगल अर्थ इंजन का मत्स्य संसाधन प्रबंधन में महत्त्व** 21
शुभम कनौजिया, नीतीश बंसल, जसप्रीत सिंह, सुजीत कुमार राय एवं अजेय कुमार पाठक

7. **चिनाब नदी का जलीय पारिस्थितिकी तंत्र: मत्स्य जैव विविधता और संरक्षण के आयाम** 27
जसप्रीत सिंह, रजनी चन्द्रन, मोनिका गुप्ता, अमित सिंह बिष्ट, देव नारायण एवं राजीव कुमार सिंह

8. **उत्तर प्रदेश की राज्य मछली 'चीतल' (*चिताला चिताला*): संवर्धन, संरक्षण, इतिहास एवं प्रजनन तकनीक** 32
अमित कुमार, राघवेंद्र सिंह, अदित्य कुमार, राजकमल मिश्रा, निकिता वर्मा एवं मोनिका गुप्ता

9. **सीमित जल में अधिक उत्पादन: बायोफ्लॉक प्रणाली द्वारा उच्च घनत्व में कैटफिश का पालन** 35
राज कमल मिश्रा, वैशाली, आदित्य कुमार, राघवेंद्र सिंह, चंद्रभूषण कुमार एवं मोनिका गुप्ता

10. **महत्त्वपूर्ण सजावटी मछली: *एट्रोप्लस कैनारेन्सिस*** 40
साईकृष्णन के. आर., रेखा एम. यू., चरण रवि, अभिलाष सी. पी., सारथ वर्गीज़, अम्बिली एम. एन. एवं वी. एस. बशीर

11. **फ्लॉकपोनिक्स: जैवफ्लॉक एवं हाइड्रोपोनिक्स आधारित सतत एकीकृत मत्स्य एवं सब्जी उत्पादन प्रणाली** 44
मित्रसेन मौर्य, राघवेंद्र सिंह, दिनेश कुमार, मोनिका गुप्ता, शशांक सिंह, शिवम सरोज एवं पुनीत पटेल

12. **मत्स्य पारिस्थितिकी एवं प्रबंधन में इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग डेटा का समन्वित उपयोग** 48
सुवंकर राउत, राजलक्ष्मी दलबेहरा, परविंद कुमार एवं सत्यवीर सिंह

13. **सोन नदी की मत्स्य विविधता एवं उसका महत्व** 51
अमित सिंह बिष्ट, ललित कुमार त्यागी, संजय कुमार सिंह, जसप्रीत सिंह, रजनी चंद्रन, रेखा देवी चक्रवर्ती, रवि कुमार एवं राजीव कुमार सिंह

14. **उत्तर प्रदेश में गंगा नदी की मत्स्य जैव-विविधता पर बाँधों का प्रभाव** 54
ललित कुमार त्यागी, वैभव त्रिपाठी, रजनी चंद्रन, राजीव कुमार सिंह एवं आशीष सिंह

15. **जलवायु परिवर्तन और मछलियों के प्रजनन पर उसका प्रभाव** 58
रेखा एम. यू., टीना जयकुमार टी. के. एवं चरण रवि

16. **प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना: भारत में मछुआरों के जीवन स्तर में सुधार एवं नीली क्रांति को बढ़ावा देने में इसकी भूमिका** 62
सुरेंद्र कुमार मौर्य, रजनी चंद्रन, अंकित सिंह एवं राजीव कुमार सिंह

17. **एकीकृत कृषि प्रणाली मे मछली पालन के अंतर्गत मछली प्रजातियों का चयन** 66
मुकुंद कुमार, ब्रह्म प्रकाश, सुधीर कुमार सिंह, वेदप्रकाश सिंह एवं अभिषेक कुमार सिंह

18. **हिमाचल प्रदेश के नदी पारिस्थितिक तंत्र में मीठे पानी की मछलियों की विविधता पर माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण का प्रभाव: एक अदृश्य संकट** 69
धैर्य, आशीष साहू, अखिलेश कुमार मिश्र एवं महेंद्र सिंह

19. **भारत में महाशीर मत्स्य प्रजातियों की विविधता, वर्गीकरण भौगोलिक वितरण और संरक्षण स्थिति** 72
अजेय कुमार पाठक एवं युसरा शर्फ़

20. **लक्षद्वीप की स्वदेशी समुद्री शैवाल: ब्लू इकोनॉमी के नए आयाम** 76
अम्बिली एम.एन. एवं रेखा एम.यू.

21. **मछली – पोषण सुरक्षा और स्वास्थ्य संवर्धन का आधार** 79
अनीता सावनानी, जय प्रकाश वर्मा, राम किशोर एवं अभिषेक कुमार सिंह

22. **आक्रामक विदेशी प्रजातियों का भारत की जैव-विविधता पर दुष्प्रभाव** 83
विक्की कुमार प्रजापति

23. **परिवर्तित जलवायु में जलीय पारितंत्र: संरक्षण की चुनौतियाँ और समाधान** 87
नितिन प्रताप सिंह, मनीषा पटेल एवं आभा मिश्रा

24. **मत्स्य एवं कृषि क्षेत्र में केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) उत्पादन तकनीक का महत्व** 92
आशीष सिंह, संतोष कुमार, दिनेश कुमार, सीपी सिंह, शशांक सिंह, वैभव त्रिपाठी एवं तनुज भारती

25. **ग्रामीण मात्स्यिकी विकास एवं सामुदायिक सशक्तिकरण में अंतरराष्ट्रीय संगठनए राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय योजनाओं की भूमिका** 96
अनिल सिंह, शशांक सिंह, दिनेश कुमार, देवर्षि रंजन, सी. पी. सिंह, सुमन डे एवं आर्या सिंह

26. **मछलियों में *एडवर्डसिएला इक्टालुरी* संक्रमण: कारण, लक्षण एवं रोकथाम** 102
चन्द्रभूषण कुमार, देवर्षि रंजन, तमाल सेठ, अमन राज, पी. के. प्रधान एवं नीरज सूद

27. **मत्स्य संबन्धित जूनोटिक रोग: निदान एवं नियंत्रण** 105
देवर्षि रंजन, चन्द्रभूषण कुमार, अमन राज, राजू बैठा, पी. के. प्रधान एवं नीरज सूद

28. **मछली पालन में जैव सुरक्षा का महत्व: एक व्यापक मार्गदर्शिका** 110
वैभव त्रिपाठी, ललित कुमार त्यागी, रजनी चंद्रन एवं राजीव कुमार सिंह

29. **गंगा नदी में विदेशी मछली प्रजातियाँ: जैव विविधता, पारिस्थितिकीय प्रभाव एवं प्रबंधन रणनीतियाँ** 113
आशीष सिंह, सुरेन्द्र कुमार मौर्य एवं अंकित सिंह

30. **मत्स्य क्षेत्र में साइबर सुरक्षा: भूमिका, चुनौतियाँ, जोखिम, तकनीकी समाधान एवं भविष्य की संभावनाएँ** 116
अजेय कुमार पाठक, विकास कुमार, रवि कुमार, सत्य प्रकाश, युसुरा शर्फ़

31. **मानव जीवन में मछली की महत्ता के दृष्टिगत मछलियों का संरक्षण समय की आवश्यकता** 122
प्रिया त्रिपाठी, अभिषेक कुमार सिंह, ब्रह्म प्रकाश एवं अखिलेश कुमार मिश्र

32. **हर्बल आहार संवर्धक: मछलियों के स्वास्थ्य और तेज़ विकास के लिए प्राकृतिक उपाय** 126
विशाल सोनी, रवी कुमार एवं वैभव त्रिपाठी

33. **हर्मिट केकड़ा: प्रकृति के छोटे खानाबदोश** 129
टीना जयकुमार टी.के., रेखा एम.यू. एवं टी. टी. अजीत कुमार

34. **राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो का राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं रिपॉजिटरी: शिक्षा, जन-जागरूकता और जैव विविधता संरक्षण का सशक्त माध्यम** 133
अमित सिंह बिष्ट, रजनी चंद्रन, राजीव कुमार सिंह एवं काजल चक्रवर्ती

35. **कृषि 5.0: रोबोटिक्स, AI और IoT से संचालित भविष्य की खेती** 138
संगीता श्रीवास्तव, प्रियंका श्रीवास्तव एवं अभय कुमार श्रीवास्तव

36. **सामान्य-स्थिति विश्लेषण मॉडल आधारित स्थायी खुशी** 141
अचल सिंह

37. **ग्रामीण क्षेत्रों में जल संरक्षण के विभिन्न उपाय** 144
विनीता सिंह एवं बी.पी.शाही

38. **एनबीएफजीआर के हम हैं ...शोधकर्ता** 146
अखिलेश कुमार मिश्र

39. **राजभाषा गतिविधियों की झलक** 147

विकसित उत्तर प्रदेश हेतु मात्स्यिकी क्षेत्र के विकास की रूपरेखा, दृष्टिकोण एवं संस्थागत प्रयास

काजल चक्रबर्ती एवं ताराचन्द कुमावत

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

उत्तर प्रदेश में मात्स्यिकी एवं जलीय कृषि क्षेत्र, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, रोजगार सृजन, आजीविका संवर्धन, खाद्य एवं पोषण सुरक्षा तथा जलीय जैव विविधता के संरक्षण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। उत्तर प्रदेश में मत्स्य उत्पादन के लिए विविध एवं व्यापक अंतर्स्थलीय जलीय संसाधन उपलब्ध हैं। वर्ष 2024-25 में राज्य का मत्स्य उत्पादन लगभग 13.31 लाख टन रहा, जो राज्य में मात्स्यिकी क्षेत्र की वर्तमान उत्पादन क्षमता एवं भविष्य की विकास संभावनाओं का महत्वपूर्ण आधार है। वर्ष 2026-2047 के लिए प्रस्तावित यह विकास रूपरेखा राज्य के मात्स्यिकी एवं जलीय कृषि क्षेत्र को उत्पादन-केंद्रित व्यवस्था से आगे बढ़ाकर वैज्ञानिक, सतत्, जलवायु-अनुकूलित, प्रौद्योगिकी-संचालित, बाजार-उन्मुख तथा जैव विविधता-संवेदी क्षेत्र के रूप में विकसित करने की दीर्घकालिक दिशा प्रस्तुत करती है। इसका केंद्रीय लक्ष्य वर्ष 2047 तक मत्स्य उत्पादन को लगभग 41 लाख टन तक पहुँचाना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए केवल जलीय कृषि क्षेत्रफल बढ़ाना पर्याप्त नहीं होगा। इसके साथ गुणवत्तापूर्ण एवं आनुवंशिक रूप से उन्नत मत्स्य बीज, वैज्ञानिक ब्रूडस्टॉक प्रबंधन, मत्स्य आहार, जलीय पशु स्वास्थ्य एवं जैव-सुरक्षा, कैप्चर फिशरीज का वैज्ञानिक प्रबंधन, देशी एवं स्थानिक मत्स्य प्रजातियों का संरक्षण, उच्च-मूल्य प्रजातियों का विविधीकरण, आधुनिक जलीय कृषि प्रणालियाँ, प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन, शीत-श्रृंखला, बाजार एवं विपणन, मानव संसाधन विकास, अनुसंधान एवं नवाचार तथा संस्थागत अभिसरण को समान रूप से सुदृढ़ करना होगा। इस संदर्भ में भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो की वैज्ञानिक एवं संस्थागत क्षमता विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। ब्यूरो वर्ष 1983 से मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों के अन्वेषण, संरक्षण, अभिलक्षण एवं सतत् उपयोग के क्षेत्र में कार्यरत है तथा जलीय जैव विविधता, जीनोमिक्स, संरक्षण जीवविज्ञान, *बहि स्थाने* संरक्षण, जननद्रव्य उपयोग, मत्स्य स्वास्थ्य तथा क्षमता निर्माण जैसे क्षेत्रों में बहुविषयक कार्य कर रहा है।

वर्तमान संसाधन आधार एवं विकास की संभावनाएँ

राज्य में तालाबों, टैंकों, आर्द्रभूमियों, बाढ़भूमि जल निकायों, जलाशयों, नदियों एवं नहरों का व्यापक जलीय संसाधन आधार उपलब्ध है। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा देश की विभिन्न नदी प्रणालियों तथा आर्द्रभूमियों में मत्स्य विविधता के सर्वेक्षण एवं प्रलेखन का व्यापक कार्य किया गया है। उत्तर प्रदेश में गंगा, यमुना, घाघरा/सरयू, गोमती, राप्ती, गंडक, रामगंगा, शारदा, बेतवा, केन, सोन, चम्बल, काली/काली नदी, हिंडन, सई, तमसा/टोंस, वरुणा, पांडु तथा ईसन जैसी प्रमुख नदी प्रणालियाँ राज्य के अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी संसाधन, प्राकृतिक मत्स्य आवास, प्रवासी एवं देशी प्रजातियों के संरक्षण तथा नदी-आधारित आजीविका के लिए महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती हैं।

राज्य के प्रमुख जलाशयों में रिहंद (गोविंद बल्लभ पंत सागर), माताटीला, राजघाट, शारदा सागर, अर्जुन, मौदहा, सिरसी, सपरार, लहचुरा, पहाड़ी, जमरार तथा जिरगो जलाशय विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त बुंदेलखंड एवं विंध्य क्षेत्र के अनेक मध्यम एवं बड़े जलाशय राज्य की जलाशय मात्स्यिकी क्षमता के महत्वपूर्ण आधार हैं। इन जलाशयों में वैज्ञानिक फिंगरलिंग स्टॉकिंग, केज कल्चर, पेन कल्चर, सह-प्रबंधन आधारित मात्स्यिकी, मत्स्य पर्यटन तथा देशी मत्स्य प्रजातियों के संरक्षण की व्यापक संभावनाएँ उपलब्ध हैं।

इसी प्रकार बखीरा आर्द्रभूमि, ऊपरी गंगा नदी क्षेत्र, हैदरपुर आर्द्रभूमि, नवाबगंज पक्षी विहार, सांडी पक्षी विहार, समसपुर पक्षी विहार, समान पक्षी विहार, पार्वती अरगा पक्षी विहार, सरसई नावर झील, सूर सरोवर/कीठम झील, पटना पक्षी विहार, शेखा झील तथा जयप्रकाश नारायण पक्षी विहार/सुरहा ताल जैसी प्रमुख आर्द्रभूमियाँ जैव विविधता, जल-पक्षी आवास, मत्स्य संसाधन संवर्धन, जल शोधन, बाढ़ नियंत्रण और स्थानीय समुदायों की आजीविका के लिए रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। इससे स्पष्ट होता है कि राज्य के जलीय

संसाधनों की जैव विविधता के वैज्ञानिक प्रलेखन को मात्स्यिकी विकास की दीर्घकालिक रणनीति से जोड़ना आवश्यक है।

वर्ष 2047 का मत्स्य उत्पादन दृष्टिकोण

वर्ष 2047 तक राज्य के मत्स्य उत्पादन को लगभग 41 लाख टन तक पहुँचाने के लिए चरणबद्ध उत्पादन लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं, जहां अनुमानित मत्स्य उत्पादन लक्ष्य 2030 में 17.03 लाख टन, 2035 में 23.01 लाख टन, 2040 में 30.09 लाख टन और 2047 तक 41.07 लाख टन होना चाहिए। यह उत्पादन वृद्धि तालाब आधारित जलीय कृषि, आर्द्रभूमि एवं बाढ़भूमि मत्स्य उत्पादन, जलाशय मात्स्यिकी, केज एवं पेन कल्चर, पुनर्चक्रीय जलीय कृषि प्रणाली, बायोफ्लॉक तथा अन्य आधुनिक उत्पादन प्रणालियों के संयुक्त विस्तार पर आधारित होगी।

तालाब आधारित जलीय कृषि का सुदृढ़ीकरण

वर्ष 2047 तक लगभग 1.58 लाख हेक्टेयर तालाब क्षेत्र को उत्पादन में प्रभावी रूप से उपयोग करने तथा उत्पादकता को लगभग 8 टन प्रति हेक्टेयर तक पहुँचाने का लक्ष्य रखा गया है। इससे तालाब आधारित जलीय कृषि से लगभग 12.64 लाख टन मत्स्य उत्पादन प्राप्त करने की संभावना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए राज्य में हैचरी, नर्सरी, ब्रूडस्टॉक एवं बीज प्रमाणीकरण व्यवस्था का व्यापक विस्तार आवश्यक होगा।

आर्द्रभूमि एवं बाढ़भूमि मात्स्यिकी विकास

आर्द्रभूमियाँ एवं बाढ़भूमि का उपयोग उत्पादन के साथ-साथ जैव विविधता संरक्षण, जल-पक्षियों के आवास, बाढ़ नियंत्रण तथा स्थानीय समुदायों की आजीविका के लिए भी होता है। वर्ष 2047 तक लगभग 7.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में मत्स्य उत्पादन की संभावनाओं का उपयोग करने तथा लगभग 3.2 टन प्रति हेक्टेयर उत्पादकता प्राप्त करने का लक्ष्य है। इससे लगभग 24 लाख टन उत्पादन का अनुमान है। आर्द्रभूमियों में मात्स्यिकी संवर्धन कार्यक्रमों को पारिस्थितिकी तंत्र की वहन क्षमता, प्राकृतिक मत्स्य भर्ती, देशी प्रजातियों तथा जल-विज्ञान की अखंडता के अनुरूप संचालित किया जाना चाहिए। किसी भी प्रकार की व्यापक स्टॉकिंग से पूर्व प्रजाति-विशिष्ट एवं पारिस्थितिक मूल्यांकन आवश्यक होगा।

जलाशय मात्स्यिकी विकास

जलाशय उत्तर प्रदेश में कैप्चर फिशरीज तथा कल्चर-आधारित मत्स्य उत्पादन के महत्वपूर्ण संसाधन हैं। जलाशयों में वैज्ञानिक फिंगरलिंग स्टॉकिंग, केज कल्चर, पेन कल्चर तथा सामुदायिक प्रबंधन को बढ़ावा देकर उत्पादन क्षमता का बेहतर उपयोग किया जा सकता है। वर्ष 2047 तक जलाशयों में 2350 केज कल्चर इकाइयाँ, 90 पेन कल्चर इकाइयाँ एवं स्टॉकिंग घनत्व को लगभग 20,000 फिंगरलिंग प्रति हेक्टेयर तक बढ़ाने का लक्ष्य है। जलाशय आधारित मात्स्यिकी विकास में वहन क्षमता, जल गुणवत्ता, मत्स्य स्टॉक संरचना, स्थानीय जैव विविधता तथा अन्य जल उपयोगों को ध्यान में रखना आवश्यक होगा।

आधुनिक एवं गहन जलीय कृषि प्रणालियाँ

पुनर्चक्रीय जलीय कृषि प्रणाली तथा बायोफ्लॉक प्रणाली कम भूमि में अधिक उत्पादन प्राप्त करने की संभावना प्रदान करती हैं। वर्ष 2047 तक आरएएस से लगभग 3 लाख टन तथा बायोफ्लॉक प्रणाली से लगभग 1.19 लाख टन उत्पादन का अनुमान है। इन प्रणालियों के विस्तार के लिए गुणवत्तापूर्ण मत्स्य बीज, उच्च गुणवत्ता वाला मत्स्य आहार, जल गुणवत्ता की निरंतर निगरानी, रोग एवं जैव-सुरक्षा प्रबंधन, ऊर्जा दक्षता, तकनीकी प्रशिक्षण, उत्पादन की आर्थिक व्यवहार्यता, तथा बाजार से सीधा जुड़ाव, आदि पर विशेष ध्यान देना होगा।

गुणवत्तापूर्ण मत्स्य बीज एवं आनुवंशिक संसाधन प्रबंधन

वर्तमान में गुणवत्तापूर्ण बीज, वैज्ञानिक ब्रूडस्टॉक प्रबंधन तथा पर्याप्त ब्रूड बैंक की उपलब्धता एक प्रमुख चुनौती है। इसलिए वर्ष 2047 की रणनीति में लगभग 800 आधुनिक हैचरियों, ब्रूड बैंकों, सजीव मत्स्य जननद्रव्य संसाधन केंद्रों तथा बीज प्रमाणीकरण प्रणाली का विकास महत्वपूर्ण होना चाहिए। इस दिशा में भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो का अनुभव विशेष रूप से उपयोगी है। संस्थान द्वारा उत्तर प्रदेश सहित विभिन्न राज्यों में नौ सजीव मत्स्य जननद्रव्य संसाधन केंद्रों के माध्यम से स्वदेशी एवं स्थानिक मत्स्य जर्मप्लाज्म का संरक्षण किया जा रहा है। लखनऊ स्थित केंद्र में 2025 में 14 मत्स्य प्रजातियों के 685 लाख

स्पॉन का उत्पादन किया गया। भविष्य में उत्तर प्रदेश के लिए प्रमुख मत्स्य प्रजातियों के राज्य स्तरीय ब्रूडस्टॉक का वैज्ञानिक प्रबंधन, आनुवंशिक रूप से उन्नत एवं प्रमाणित बीज उत्पादन, स्वदेशी एवं स्थानिक प्रजातियों के जर्मप्लाज्म का संरक्षण, प्रजाति एवं स्टॉक की आणविक पहचान, आनुवंशिक विविधता की नियमित निगरानी, संकटग्रस्त प्रजातियों के लिए *बहि स्थाने* संरक्षण कार्यक्रम, संरक्षण एवं जलीय कृषि के बीच वैज्ञानिक समन्वय कार्य प्राथमिकता पर किए जाने चाहिए।

देशी एवं स्थानिक मत्स्य जैव विविधता का संरक्षण

देशी एवं स्थानिक मछली प्रजातियाँ न केवल पारिस्थितिक संतुलन के लिए महत्वपूर्ण हैं, बल्कि भविष्य के आनुवंशिक संसाधनों का आधार भी हैं। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा देश के विभिन्न जलीय पारितंत्रों में मत्स्य विविधता के अन्वेषण एवं प्रलेखन के दौरान अनेक नई प्रजातियों एवं नए वितरण अभिलेखों की पहचान की गई है। इस वैज्ञानिक क्षमता का उपयोग उत्तर प्रदेश में देशी मत्स्य प्रजातियों की सूची एवं वितरण मानचित्रण, संकटग्रस्त एवं दुर्लभ प्रजातियों की पहचान, आनुवंशिक विविधता का आकलन, प्राकृतिक आबादियों की निगरानी, महत्वपूर्ण आवासों की पहचान, *बहि स्थाने* संरक्षण, संरक्षण-आधारित प्रजनन, तथा पुनर्स्थापन एवं पुनःस्थापनात्मक स्टॉक संवर्धन के लिए किया जा सकता है।

संरक्षण जलीय कृषि एवं प्रजाति विविधीकरण

उच्च-मूल्य खाद्य एवं सजावटी मत्स्य प्रजातियों का विविधीकरण राज्य के मात्स्यिकी क्षेत्र को अधिक लाभकारी एवं बाजार-उन्मुख बना सकता है। वर्ष 2047 तक नई खाद्य मत्स्य प्रजातियों, सजावटी मत्स्य प्रजातियों, प्रजनन केंद्रों तथा प्रजाति-विशिष्ट उत्पादन क्लस्टरों के विस्तार का प्रस्ताव है। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा अनेक देशी एवं स्थानिक प्रजातियों के केष्टिव प्रजनन प्रोटोकॉल का मानकीकरण किया गया है तथा कुछ संकटग्रस्त स्थानिक प्रजातियों के जीवन-चक्र को केष्टिव अवस्था में पूर्ण करने में सफलता प्राप्त हुई है। इस अनुभव का उपयोग उत्तर प्रदेश में ऐसी प्रजातियों के लिए किया जा सकता है जिनका संरक्षण प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव कम करने तथा वैकल्पिक आजीविका विकसित करने दोनों में योगदान दे सकता है।

राजकीय मत्स्य की अवधारणा

राजकीय मत्स्य की अवधारणा को राष्ट्रीय स्तर पर 24 राज्यों एवं 2 केंद्रशासित प्रदेशों द्वारा राजकीय मत्स्य की अवधारणा अपनाई जा चुकी है। उत्तर प्रदेश में राजकीय मत्स्य *'चिताला चिताला'* के संरक्षण को वैज्ञानिक अभिलक्षण, प्राकृतिक आबादी का सर्वेक्षण, आनुवंशिक विविधता का आकलन, जर्मप्लाज्म संरक्षण, *बहि स्थाने* संरक्षण, संरक्षण-आधारित जलीय कृषि, विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में जन-जागरूकता, सामुदायिक संरक्षण कार्यक्रम, तथा मात्स्यिकी पर्यटन एवं राज्य की जलीय जैव विविधता से संबंधित प्रचार गतिविधियों से जोड़ा जा सकता है।

मत्स्य आहार सुरक्षा

वर्तमान में राज्य में उपलब्ध मत्स्य आहार उत्पादन क्षमता भविष्य की आवश्यकताओं की तुलना में अपर्याप्त है। वर्ष 2047 तक लगभग 60 लाख टन मत्स्य आहार उत्पादन तथा लगभग 360 आहार मिलों की आवश्यकता का लक्ष्य प्रस्तावित है। इसके लिए क्षेत्रीय मत्स्य आहार उत्पादन केंद्र, कच्चे माल की सुरक्षित आपूर्ति, आहार गुणवत्ता परीक्षण प्रयोगशालाएँ, स्थानीय स्तर पर कम लागत वाले संतुलित आहार, आहार सुरक्षा मानक, सार्वजनिक-निजी भागीदारी, तथा किसानों को वैज्ञानिक आहार प्रबंधन का प्रशिक्षण आवश्यक होगा।

जलीय पशु स्वास्थ्य, रोग निगरानी एवं जैव-सुरक्षा

जलीय कृषि के विस्तार के साथ रोगों का जोखिम भी बढ़ेगा। अतः वर्ष 2047 तक 75 मत्स्य रोग निदान प्रयोगशालाओं के विकास का लक्ष्य रखा गया है। इसके साथ राज्यव्यापी रोग निगरानी, पूर्व चेतावनी, रोग पूर्वानुमान, जलीय संगरोध तथा स्वास्थ्य प्रमाणन प्रणाली विकसित की जानी चाहिए। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो जलीय जंतु रोगों की राष्ट्रीय निगरानी तथा भारतीय मत्स्य एवं पशु प्रतिजैविक प्रतिरोध नेटवर्क जैसे राष्ट्रीय कार्यक्रमों में नेतृत्वकारी भूमिका निभा रहा है। संस्थान द्वारा रोगजनकों के निदान, प्रतिजैविक प्रतिरोध प्रोफाइलिंग, टीका

विकास, रोगजनक निष्क्रियकरण, माइक्रोबायोम अध्ययन, प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया तथा उपचारात्मक हस्तक्षेपों पर कार्य किया गया है। इस वैज्ञानिक क्षमता का उपयोग राज्य में एकीकृत जलीय स्वास्थ्य प्रबंधन प्रणाली स्थापित करने में किया जा सकता है।

मत्स्य आनुवंशिकी एवं जीनोमिक्स आधारित विकास

भविष्य के मात्स्यिकी क्षेत्र में आनुवंशिक संसाधन प्रबंधन तथा जीनोमिक्स की भूमिका तेजी से बढ़ेगी। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा अनेक महत्वपूर्ण मत्स्य प्रजातियों के संपूर्ण जीनोम अनुक्रमण में योगदान दिया गया है तथा गुणसूत्र-स्तरीय जीनोम असेम्बली, जीनोमिक डेटाबेस, आणविक नैदानिक तकनीकों तथा आनुवंशिक स्टॉक मूल्यांकन जैसे क्षेत्रों में कार्य किया गया है। उत्तर प्रदेश में इन तकनीकों का उपयोग आनुवंशिक रूप से श्रेष्ठ ब्रूडस्टॉक की पहचान, प्रजाति प्रमाणीकरण, मिश्रित या संकर आबादियों की पहचान, आनुवंशिक स्टॉक संरचना का आकलन, आनुवंशिक विविधता संरक्षण, चयनात्मक प्रजनन, रोग प्रतिरोधी मत्स्य आबादी का विकास, तथा जलवायु-अनुकूलित मत्स्य उत्पादन के लिए आनुवंशिक संसाधनों की पहचान आदि क्षेत्रों में किया जा सकता है।

बहि स्थाने संरक्षण

बहि स्थाने संरक्षण को केवल जीवित जर्मप्लाज्म तक सीमित न रखते हुए कोशिका रेखा, मिल्ट क्रायोपरिरक्षण तथा अन्य जैविक संसाधनों तक विस्तारित किया जाना चाहिए। भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो के राष्ट्रीय मत्स्य कोशिका रेखा भंडार में व्यापक कोशिका रेखा संग्रह सुरक्षित है तथा संस्थान द्वारा नई कोशिका रेखाओं का विकास भी किया गया है। इसके अतिरिक्त, दीर्घकालिक मत्स्य मिल्ट क्रायोपरिरक्षण के लिए हर्बल प्रतिऑक्सीकारकों के उपयोग की दिशा में भी उपलब्धियाँ प्राप्त हुई हैं। उत्तर प्रदेश में ऐसी तकनीकों का उपयोग महत्वपूर्ण देशी एवं संकटग्रस्त प्रजातियों के दीर्घकालिक आनुवंशिक संरक्षण के लिए किया जा सकता है। घटती हुई मत्स्य आबादियों के पुनर्स्थापन के लिए वैज्ञानिक रैंचिंग, नदी-आधारित रैंचिंग तथा स्टॉक संवर्धन कार्यक्रमों का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। इन कार्यक्रमों का अंतिम उद्देश्य ऐसी स्वतः पुनरुत्पादित एवं आत्मनिर्भर मत्स्य आबादियों की बहाली होना चाहिए जो निरंतर बाहरी स्टॉकिंग पर निर्भर न रहें। इस दिशा में प्रजाति-विशिष्ट आनुवंशिक पहचान एवं जर्मप्लाज्म प्रबंधन विशेष रूप से उपयोगी होगा।

जलवायु-अनुकूलित मात्स्यिकी विकास

वर्ष 2047 की रणनीति में जलवायु-अनुकूलता को मूलभूत सिद्धांत के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। इसके लिए जल-कुशल जलीय कृषि, जलवायु-अनुकूलित प्रजातियाँ, जल गुणवत्ता निगरानी, वैकल्पिक उत्पादन प्रणालियाँ, आरएएस, बायोफ्लॉक, नवीकरणीय ऊर्जा, जलाशय आधारित विविधीकरण, सूखा एवं बाढ़ जोखिम प्रबंधन, तथा पारिस्थितिकी तंत्र पुनर्स्थापन को बढ़ावा देना आवश्यक होगा।

मनोरंजक मात्स्यिकी एवं मात्स्यिकी पर्यटन

जलाशयों एवं आर्द्रभूमियों में नियंत्रित एवं वैज्ञानिक मनोरंजक मात्स्यिकी को पारिस्थितिकी पर्यटन से जोड़कर अतिरिक्त आय एवं रोजगार के अवसर विकसित किए जा सकते हैं। इसमें स्थानीय समुदायों की भागीदारी, मात्स्यिकी संसाधनों का संरक्षण, स्वच्छता, पर्यावरणीय वहन क्षमता तथा नियंत्रित मत्स्य पकड़ के नियमों को सुनिश्चित करना आवश्यक होगा। वर्ष 2047 तक लगभग 25 मनोरंजक मात्स्यिकी इकाइयों के विकास का प्रस्ताव इस दिशा में प्रारंभिक आधार प्रदान करता है।

मत्स्य प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन

आधुनिक स्वच्छ मत्स्य बाजार, बर्फ संयंत्र, शीत भंडार, प्रशीतित परिवहन, स्वच्छ जीवित मछली विक्रय केंद्र, संग्रहण एवं प्राथमिक प्रसंस्करण केंद्र, सहकारी विपणन केंद्र, तथा डिजिटल बाजार सूचना प्रणाली विकसित करना आवश्यक होगा। वर्ष 2047 तक 75 शीत-श्रृंखला अवसंरचना, तथा 375 बाजार एवं विक्रय संबंधी सुविधाओं के विस्तार का लक्ष्य रखा गया है। आधुनिक प्रसंस्करण पार्कों में सफाई, शल्क हटाने, आंतरिक अंगों की सफाई, त्वचा हटाने, फिलेट निर्माण तथा पैकेजिंग की सुविधाएँ विकसित की जानी चाहिए। इसके बाद तत्काल पकाने योग्य उत्पाद, तत्काल खाने योग्य उत्पाद, मत्स्य कटलेट, मत्स्य सॉसेज, सूखी एवं धूम्रित मछली, उच्च-मूल्य मत्स्य उत्पाद, तथा निर्यात-उन्मुख उत्पाद के विकास को प्रोत्साहित किया जा सकता है। वर्ष

2047 तक 4 लाख टन से अधिक वार्षिक मत्स्य प्रसंस्करण क्षमता विकसित करने की परिकल्पना है।

मत्स्य उपभोग एवं पोषण सुरक्षा

मात्स्यिकी क्षेत्र को राज्य की पोषण सुरक्षा रणनीति से जोड़ना आवश्यक है। वर्ष 2047 तक प्रति व्यक्ति वार्षिक मछली उपभोग को लगभग 12-15 किलोग्राम तक बढ़ाने का लक्ष्य है। इसके लिए मछली के पोषण संबंधी लाभों पर जन-जागरूकता, विद्यालयों एवं समुदायों में पोषण शिक्षा, मूल्य-वर्धित मत्स्य उत्पाद, सुरक्षित एवं स्वच्छ मछली बाजार, मत्स्य महोत्सव, तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं पोषण कार्यक्रमों में मछली की भूमिका को बढ़ावा दिया जा सकता है।

क्षेत्रीय मात्स्यिकी विकास क्लस्टर

उत्तर प्रदेश की भौगोलिक एवं जलीय संसाधन विविधता को देखते हुए एक समान विकास मॉडल के बजाय क्षेत्र-विशिष्ट क्लस्टर दृष्टिकोण अपनाना अधिक प्रभावी होगा।

क्षेत्र	प्रमुख विकास प्राथमिकता
पश्चिमी उत्तर प्रदेश	गहन जलीय कृषि, बायोफ्लॉक, आरए-एस, प्रसंस्करण एवं शहरी बाजार
मध्य उत्तर प्रदेश	मत्स्य बीज, ब्रूड बैंक, सजावटी मत्स्य पालन, जलीय स्वास्थ्य एवं अनुसंधान
पूर्वी उत्तर प्रदेश	आर्द्रभूमि मत्स्य पालन, कार्प पालन, एकीकृत जलीय कृषि
तराई क्षेत्र	जलाशय मत्स्य पालन, केज कल्चर एवं देशी मत्स्य संरक्षण
बुंदेलखंड	जलाशय आधारित मत्स्य पालन एवं जलवायु-अनुकूलित जलीय कृषि
विंध्य क्षेत्र	बड़े जलाशय, केज कल्चर, प्रसंस्करण एवं बाह्य बाजार

डिजिटल मात्स्यिकी प्रबंधन

एकीकृत डिजिटल प्रणाली में मत्स्य पालक पंजीकरण, तालाब एवं जलाशय सूची, मत्स्य बीज आपूर्ति, ब्रूडस्टॉक अभिलेख, उत्पादन एवं उत्पादकता, रोग निगरानी, जल गुणवत्ता, बाजार मूल्य, प्रसंस्करण क्षमता, शीत-श्रृंखला, मात्स्यिकी संसाधन जैव विविधता, तथा क्षेत्र-विशिष्ट विकास संकेतक सूचनाएँ सम्मिलित की जा सकती हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता एवं इंटरनेट आधारित उपकरणों का उपयोग उत्पादन पूर्वानुमान, रोग पूर्व चेतावनी, जल गुणवत्ता प्रबंधन तथा बाजार सूचना में किया जा सकता है। संलग्न संस्थागत उपलब्धियों में डिजिटल प्रशासन, डेटा प्रबंधन तथा जैव-सूचना विज्ञान अवसंरचना को सुदृढ़ किए जाने का उल्लेख है।

क्षमता निर्माण एवं विस्तार तंत्र

वर्ष 2047 तक लगभग 825 खंड-स्तरीय मात्स्यिकी प्रसार अधिकारियों की व्यवस्था तथा 1,000 तक क्षमता निर्माण एवं जागरूकता कार्यक्रमों का लक्ष्य प्रस्तावित है। संस्थान द्वारा विभिन्न राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों में व्यापक विस्तार कार्यक्रमों के माध्यम से वर्ष 2025 में 6,000 से अधिक कृषकों को लाभान्वित किया गया तथा विकसित कृषि संकल्प अभियान के अंतर्गत 12,588 से अधिक कृषकों को उन्नत कृषि एवं मात्स्यिकी प्रौद्योगिकियों के प्रति जागरूक किया गया। उत्तर प्रदेश में इसी प्रकार के कार्यक्रमों को कृषक क्षेत्र विद्यालय, प्रदर्शन इकाइयों, मात्स्यिकी प्रशिक्षण केंद्रों, किसान उत्पादक संगठनों एवं डिजिटल परामर्श सेवाओं से जोड़ा जाना चाहिए।

महिला एवं सामुदायिक भागीदारी

महिला स्वयं सहायता समूहों, मात्स्यिकी उत्पादक समूहों तथा सामुदायिक मात्स्यिकी उद्यमों के माध्यम से मछली विक्रय, मात्स्यिकी प्रसंस्करण, मूल्य-वर्धित उत्पाद, सजावटी मछली पालन, बीज उत्पादन, सामुदायिक तालाब प्रबंधन जैसी गतिविधियों को बढ़ावा दिया जा सकता है। महिला मात्स्यिकी कृषकों के कौशल विकास में संस्थान के कार्य को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तकनीकी मान्यता प्राप्त होना इस दिशा में क्षमता निर्माण के महत्व को रेखांकित करता है।

संस्थागत अभिसरण एवं साझेदारी

वर्ष 2047 के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए राज्य मात्स्यिकी विभाग, अनुसंधान संस्थानों, विश्वविद्यालयों, जैव विविधता बोर्ड, पंचायती संस्थाओं, मत्स्यजीवी संगठनों, किसान उत्पादक संगठनों, तथा वित्तीय संस्थाओं के बीच समन्वित कार्य आवश्यक होगा। संस्थान ने जनजातीय समुदायों,

मात्स्यिकी विभाग एवं शैक्षणिक संस्थानों के साथ समझौता ज्ञापनों एवं सहयोगात्मक गतिविधियों के माध्यम से संस्थागत समन्वय को सुदृढ़ किया है। उत्तर प्रदेश में इसी प्रकार अनुसंधान-नीति-उद्योग-कृषक के बीच चार-तरफा सहयोग तंत्र विकसित किया जाना चाहिए।

सरकारी योजनाओं के साथ अभिसरण

मात्स्यिकी क्षेत्र की व्यापक विकास आवश्यकताओं को देखते हुए विभिन्न केंद्र एवं राज्य योजनाओं का समेकित उपयोग किया जाना चाहिए। प्रमुख क्षेत्रों में मात्स्यिकी अवसंरचना, बीज एवं हैचरी, ब्रूड बैंक, केज एवं पेन कल्चर, शीत-श्रृंखला, प्रसंस्करण, मत्स्य स्वास्थ्य, कौशल विकास, उद्यमिता, महिला सशक्तीकरण तथा किसान उत्पादक संगठन शामिल हैं। विशेष रूप से प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना, प्रधानमंत्री मत्स्य किसान समृद्धि सह-योजना, मत्स्य पालन हेतु किसान क्रेडिट कार्ड, मत्स्य किसान उत्पादक संगठन, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन, कृषि अवसंरचना निधि, मात्स्यिकी एवं जलीय कृषि अवसंरचना विकास निधि, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, कौशल विकास कार्यक्रम, तथा उद्यमिता एवं नवाचार आधारित कार्यक्रम योजनाओं के बीच अभिसरण उपयोगी होगा।

उत्तर प्रदेश में भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो की भूमिका

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो उत्तर प्रदेश के मात्स्यिकी क्षेत्र के विकास हेतु एक प्रमुख वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान-केंद्र के रूप में कार्यरत है। मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का सर्वेक्षण एवं अभिलक्षण, देशी एवं स्थानिक मत्स्य जर्मप्लाज्म का संरक्षण, सजीव जर्मप्लाज्म संसाधन केंद्र, आनुवंशिक एवं जीनोमिक संसाधन, प्रजाति एवं स्टॉक की आणविक पहचान, संकटग्रस्त प्रजातियों का संरक्षण, केप्टिव प्रजनन प्रोटोकॉल, मत्स्य रोग निदान एवं निगरानी, प्रतिजैविक प्रतिरोध निगरानी, मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन, *बहि स्थाने* संरक्षण, मत्स्य मिल्ट क्रायोपरिरक्षण, जैव-सूचना विज्ञान, कृषक क्षमता निर्माण, तथा नीतिगत एवं संस्थागत परामर्श के लिए संस्थान उत्तर प्रदेश राज्य के लिए प्रत्यक्ष रूप से तकनीकी भागीदार है।

उत्तर प्रदेश में मात्स्यिकी एवं जलीय कृषि विकास की वर्ष 2026-2047 की रूपरेखा राज्य के मात्स्यिकी क्षेत्र के व्यापक रूपांतरण की दिशा प्रस्तुत करती है। अतः उत्तर प्रदेश की मात्स्यिकी विकास दृष्टि को केवल "41 लाख टन उत्पादन" के लक्ष्य के रूप में नहीं, बल्कि 'उत्पादन वृद्धि, आनुवंशिक संसाधन संरक्षण, जैव विविधता संरक्षण, जलीय स्वास्थ्य, मूल्य संवर्धन, आजीविका संवर्धन, एवं जलवायु-अनुकूलता' पर आधारित समेकित मात्स्यिकी विकास मॉडल के रूप में स्थापित किया जाना चाहिए।यह समेकित दृष्टिकोण उत्तर प्रदेश को वर्ष 2047 तक सतत्, समावेशी, वैज्ञानिक, जलवायु-अनुकूलित एवं वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्धी मात्स्यिकी एवं जलीय कृषि राज्य के रूप में विकसित करने की आधारभूमि प्रदान कर सकता है।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।

बिन निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥

आधुनिक हिंदी साहित्य के जनक भारतेंदु हरिश्चंद्र

मत्स्य पालन के लिए तालाब प्रबंधन में जल गुणवत्ता का महत्त्व

आदित्य कुमार, राघवेंद्र सिंह, राजकमल मिश्रा, वैशाली एवं मोनिका गुप्ता

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

मत्स्य पालन वर्तमान समय में कृषि आधारित आय का एक महत्वपूर्ण एवं लाभकारी व्यवसाय बन चुका है। बढ़ती जनसंख्या एवं पौष्टिक आहार की आवश्यकता को देखते हुए मत्स्य उत्पादन में निरंतर वृद्धि की आवश्यकता है। सफल मत्स्य पालन का मुख्य आधार उचित तालाब प्रबंधन एवं जल गुणवत्ता का संतुलन है। जल ही मछलियों का प्राकृतिक आवास होता है, इसलिए उसकी गुणवत्ता सीधे रूप से मछलियों की वृद्धि, स्वास्थ्य, प्रजनन, उत्पादन क्षमता एवं जीवित रहने की दर को प्रभावित करती है। यदि तालाब के पानी की गुणवत्ता उपयुक्त हो तो मछलियों की वृद्धि तीव्र होती है, रोग कम होते हैं तथा उत्पादन अधिक प्राप्त होता है। इसके विपरीत खराब जल गुणवत्ता से मछलियों में तनाव, रोग, भोजन ग्रहण करने की क्षमता में कमी तथा मृत्यु तक हो सकती है।

तालाब के जल की गुणवत्ता अनेक भौतिक, रासायनिक एवं जैविक कारकों पर निर्भर करती है। इनमें तापमान, घुलित ऑक्सीजन, pH, कार्बन डाइऑक्साइड, अमोनिया, पारदर्शिता, क्षारीयता, कठोरता तथा प्लवकों की मात्रा प्रमुख हैं। इन सभी कारकों का संतुलन बनाए रखना तालाब प्रबंधन का महत्वपूर्ण भाग है।

जल गुणवत्ता का महत्व

जल गुणवत्ता का मुख्य उद्देश्य तालाब में ऐसा वातावरण बनाए रखना है जिसमें मछलियाँ स्वस्थ रूप से बढ़ सकें और अधिकतम उत्पादन प्राप्त हो सके। अच्छी जल गुणवत्ता निम्नलिखित प्रकार से लाभकारी होती है—

1. मछलियों की वृद्धि दर में वृद्धि होती है।
2. रोगों की संभावना कम होती है।
3. भोजन उपयोग क्षमता बेहतर होती है।
4. प्रजनन एवं बीज उत्पादन में सुधार होता है।
5. मछलियों की मृत्यु दर कम होती है।
6. तालाब की उत्पादकता एवं किसान की आय बढ़ती है।

जल गुणवत्ता के प्रमुख घटक

1. तापमान

तापमान जल गुणवत्ता का अत्यंत महत्वपूर्ण कारक है। यह मछलियों की शारीरिक क्रियाओं, भोजन ग्रहण करने की क्षमता, वृद्धि तथा प्रजनन को प्रभावित करता है। प्रत्येक मछली प्रजाति के लिए उपयुक्त तापमान अलग-अलग होता है, परंतु सामान्यतः भारतीय प्रमुख कार्प के लिए 25°C से 32°C तापमान उपयुक्त माना जाता है।

अत्यधिक तापमान में—

- मछलियों में तनाव उत्पन्न होता है।
- ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है।
- भोजन ग्रहण करने की क्षमता घटती है।
- रोगों की संभावना बढ़ जाती है।

तापमान नियंत्रण के उपाय

- तालाब में पर्याप्त जल स्तर बनाए रखना।
- अधिक गर्मी में जल का आंशिक परिवर्तन करना।
- तालाब के किनारे वृक्षारोपण करना।



2. घुलित ऑक्सीजन

घुलित ऑक्सीजन मछलियों के श्वसन के लिए आवश्यक होती है। यह जल गुणवत्ता का सबसे महत्वपूर्ण घटक माना जाता है। तालाब में सामान्यतः 5 mg/L या उससे अधिक घुलित ऑक्सीजन उपयुक्त मानी जाती है।

ऑक्सीजन की कमी के लक्षण

- मछलियाँ पानी की सतह पर आने लगती हैं।
- भोजन कम खाती हैं।
- वृद्धि दर कम हो जाती है।
- गंभीर स्थिति में मछलियों की मृत्यु हो सकती है।



ऑक्सीजन की कमी के कारण

- अत्यधिक जैविक पदार्थों का संचय।
- अधिक मात्रा में आहार देना।
- अत्यधिक प्लवक वृद्धि।
- सड़े-गले पदार्थों का जमाव।



नियंत्रण उपाय

- एरेशन का उपयोग।
- नियमित जल परिवर्तन।
- संतुलित आहार प्रबंधन।
- तालाब की समय-समय पर सफाई।

3. pH मान

pH जल की अम्लीयता एवं क्षारीयता को दर्शाता है। मत्स्य पालन हेतु सामान्यतः pH 7.0 से 8.5 के बीच उपयुक्त माना जाता है।

कम pH (अम्लीय जल) के प्रभाव

- मछलियों की वृद्धि प्रभावित होती है।
- रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होती है।
- प्रजनन प्रभावित होता है।

अधिक pH (अत्यधिक क्षारीय जल) के प्रभाव

- अमोनिया की विषाक्तता बढ़ जाती है।
- गलफड़ों को क्षति पहुँचती है।



pH नियंत्रण के उपाय

- अम्लीय जल में चूने का प्रयोग।
- अधिक क्षारीय जल में ताजा पानी मिलाना।
- जैविक पदार्थों का संतुलित उपयोग।

4. अमोनिया

तालाब में बचा हुआ भोजन, मछलियों का मल-मूत्र एवं जैविक पदार्थों के विघटन से अमोनिया उत्पन्न होती है। अधिक मात्रा में अमोनिया मछलियों के लिए अत्यंत विषैली होती है।

अमोनिया के दुष्प्रभाव

- गलफड़ों को नुकसान।
- श्वसन में कठिनाई।
- वृद्धि में कमी।
- मछलियों की मृत्यु।

नियंत्रण उपाय

- संतुलित मात्रा में आहार देना।
- नियमित जल परिवर्तन।
- जैविक अपशिष्ट हटाना।
- बायोफिल्टर एवं प्रोबायोटिक्स का प्रयोग।

5. जल की पारदर्शिता

पानी की पारदर्शिता तालाब में प्लवकों की मात्रा को दर्शाती है। सामान्यतः 30–40 सेमी पारदर्शिता उपयुक्त मानी जाती है।

अत्यधिक पारदर्शिता

- पोषक तत्वों की कमी का संकेत।
- प्लवकों की कम मात्रा।

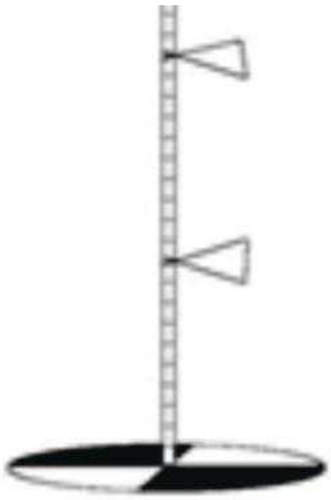

कम पारदर्शिता

- अत्यधिक प्लवक वृद्धि।
- ऑक्सीजन की कमी की संभावना।

नियंत्रण उपाय

- उर्वरकों का संतुलित प्रयोग।
- नियमित जल परीक्षण।
- अतिरिक्त शैवाल नियंत्रण।

6. क्षारीयता एवं कठोरता

क्षारीयता जल की pH स्थिर रखने की क्षमता को दर्शाती है, जबकि कठोरता कैल्शियम एवं मैग्नीशियम की मात्रा पर निर्भर करती है।

महत्व

- प्लवक उत्पादन में सहायता।
- pH स्थिरता बनाए रखना।
- मछलियों की वृद्धि में सहायक।

नियंत्रण उपाय

- आवश्यकतानुसार चूने का प्रयोग।
- नियमित जल परीक्षण।

मत्स्य पालन में जल गुणवत्ता का प्रबंधन अत्यंत महत्वपूर्ण है। तालाब का पानी मछलियों के जीवन, स्वास्थ्य एवं उत्पादन का आधार होता है। इसलिए सफल मत्स्य पालन के लिए जल के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों का संतुलन बनाए रखना आवश्यक है। नियमित जल परीक्षण, संतुलित आहार प्रबंधन, उचित एरेशन तथा वैज्ञानिक तालाब प्रबंधन तकनीकों को अपनाकर उच्च मत्स्य उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। जल गुणवत्ता का सही प्रबंधन न केवल मछलियों की उत्पादकता बढ़ाता है, बल्कि मत्स्य किसानों की आय एवं आर्थिक स्थिति में भी सुधार लाता है।

तकनीक बदलेगी, पर हिंदी की ताकत बनी रहेगी।

बायोफ्लॉक तकनीक में सूक्ष्मजीवों की भूमिका

वैशाली, राज कमल मिश्रा, आदित्य कुमार, राघवेंद्र सिंह, चंद्रभूषण कुमार एवं मोनिका गुप्ता

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्य उत्पादन की मांग लगातार बढ़ रही है। मछली पालन विश्व का सबसे तेजी से विकसित होने वाला खाद्य उत्पादन क्षेत्र बन चुका है। अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए सघन मत्स्य पालन प्रणालियों का उपयोग बढ़ रहा है, लेकिन इसके साथ पानी की गुणवत्ता में गिरावट, अमोनिया की वृद्धि तथा पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं। इन समस्याओं के समाधान के रूप में बायोफ्लॉक तकनीक एक आधुनिक एवं पर्यावरण अनुकूल प्रणाली के रूप में विकसित हुई है। बायोफ्लॉक तकनीक की सफलता का मुख्य आधार सूक्ष्मजीव हैं। ये सूक्ष्मजीव पानी में उपस्थित अपशिष्ट पदार्थों को उपयोगी जैविक पदार्थों में बदल देते हैं। परिणामस्वरूप पानी की गुणवत्ता बनी रहती है तथा मछलियों को अतिरिक्त प्राकृतिक भोजन प्राप्त होता है।

सूक्ष्मजीव क्या हैं?

सूक्ष्मजीव अत्यंत छोटे जीव होते हैं जिन्हें सामान्य आंखों से नहीं देखा जा सकता। इनमें मुख्य रूप से: बैक्टीरिया, शैवाल, फंगस, प्रोटोजोआ शामिल होते हैं। बायोफ्लॉक प्रणाली में मुख्य रूप से लाभकारी हेटरोट्रॉफिक बैक्टीरिया महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

बायोफ्लॉक में सूक्ष्मजीवों की भूमिका

अमोनिया नियंत्रण

मछलियों का मल तथा बचा हुआ भोजन पानी में अमोनिया उत्पन्न करता है। अधिक मात्रा में अमोनिया मछलियों के लिए अत्यंत विषैला होता है और उनकी वृद्धि तथा स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। लाभकारी बैक्टीरिया इस अमोनिया को उपयोग करके अपने शरीर में प्रोटीन बनाते हैं। इससे पानी में अमोनिया की मात्रा कम हो जाती है और पानी सुरक्षित बना रहता है।

बायोफ्लॉक निर्माण

जब पानी में कार्बन स्रोत जैसे गुड़, शीरा या गेहूं का आटा मिलाया जाता है, तब लाभकारी बैक्टीरिया तेजी से वृद्धि करते हैं। ये सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थों को एकत्रित करके छोटे-छोटे जैविक कण बनाते हैं, जिन्हें "बायोफ्लॉक" कहा जाता है।

अतिरिक्त प्राकृतिक भोजन

बायोफ्लॉक में प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज तत्व उपस्थित होते हैं। मछलियां इन फ्लॉक्स को खाकर पोषण प्राप्त करती हैं। इससे फीड लागत कम होती है तथा वृद्धि बेहतर होती है।

पानी की गुणवत्ता बनाए रखना

सूक्ष्मजीव कार्बनिक अपशिष्ट पदार्थों का विघटन करते हैं तथा विषैले तत्वों की मात्रा कम करते हैं। इससे पानी साफ बना रहता है तथा पानी बदलने की आवश्यकता कम हो जाती है।

रोग नियंत्रण में सहायता

लाभकारी बैक्टीरिया हानिकारक रोगजनक जीवों की वृद्धि को कम करते हैं। इससे रोगों की संभावना कम होती है तथा मछलियों की जीवित रहने की क्षमता बढ़ती है।

बायोफ्लॉक में प्रमुख सूक्ष्मजीव

बैसिलस, नाइट्रोसोमोनास, नाइट्रोबैक्टर, लैक्टोबैसिलस, कवक, शैवाल, प्रोटोजोआ, ये सूक्ष्मजीव अपशिष्ट नियंत्रण तथा पोषण चक्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

बायोफ्लॉक की सूक्ष्मजीव समुदाय की संरचना

बायोफ्लॉक में पाए जाने वाले सूक्ष्मजीव हमेशा एक जैसे नहीं रहते। उनकी संख्या और प्रकार कार्बन स्रोत, तापमान, लवणता, पालन घनत्व तथा मछलियों की प्रजातियों के अनुसार बदलते रहते हैं। बायोफ्लॉक में विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीव पाए जाते हैं, जिन्हें सामान्यतः अलग-अलग समूहों में वर्गीकृत किया जाता है।



चित्र 1. विभिन्न सूक्ष्म जीवों की वृद्धि को प्रदर्शित करती पेट्री प्लेटें, जो बायोफ्लॉक में उपस्थित जीवाणु समुदायों की विविधता को दर्शाती हैं।

विषमपोषी जीवाणु

विषमपोषी जीवाणु बायोफ्लॉक प्रणाली के सबसे महत्वपूर्ण सूक्ष्मजीव होते हैं। ये पानी में मौजूद अमोनिया तथा कार्बनिक अपशिष्ट का उपयोग करके अपने शरीर में प्रोटीन बनाते हैं। यह प्रक्रिया स्वपोषी नाइट्रीकरण जीवाणुओं की तुलना में समान आधार पदार्थ पर लगभग दस गुना अधिक तीव्र गति से संपन्न होती है और पानी में विषैले अमोनिया की मात्रा कम करने में मदद करती है। इसी कारण बायोफ्लॉक प्रणाली में पानी की गुणवत्ता बनी रहती है तथा बार-बार पानी बदलने की आवश्यकता कम हो जाती है। ये जीवाणु बचा हुआ भोजन, मल पदार्थ, मृत जीव तथा अन्य कार्बनिक अवशेषों पर भी वृद्धि करते हैं और अपशिष्ट पदार्थों को विघटित करके पानी को साफ रखने में सहायता करते हैं।

नाइट्रीकरण जीवाणु

नाइट्रीकरण जीवाणु दो कार्यात्मक समूहों में विभाजित किए जाते हैं: अमोनिया-ऑक्सीकरण जीवाणु तथा नाइट्राइट-ऑक्सीकरण जीवाणु। अमोनिया-ऑक्सीकरण समूह में *नाइट्रोसोमोनास, नाइट्रोसोस्पाइरा* तथा *नाइट्रोसोकोकस* जैसे वंश सम्मिलित हैं, जो अमोनिया-नाइट्रोजन को नाइट्राइट-नाइट्रोजन में परिवर्तित करते हैं। दूसरी ओर, *नाइट्रोबैक्टर, नाइट्रोस्पाइरा* तथा *नाइट्रोस्पिना* जैसे वंश नाइट्राइट को नाइट्रेट में परिवर्तित करने की प्रक्रिया पूर्ण करते हैं। विषमपोषी जीवाणुओं के विपरीत, नाइट्रीकरण जीवाणु अनिवार्य स्वपोषी एवं वायवीय प्रकृति के होते हैं। ये ऊर्जा के लिए कार्बनिक कार्बन के स्थान पर अकार्बनिक नाइट्रोजन यौगिकों पर निर्भर रहते हैं तथा वृद्धि के लिए घुलित ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है।

प्रकाश-स्वपोषी सूक्ष्मजीव (शैवाल एवं सायनोबैक्टीरिया)

सूक्ष्म शैवाल एवं सायनोबैक्टीरिया सहित पादप-प्लवक बायोफ्लॉक प्रणाली में नाइट्रोजन रूपांतरण के प्रकाश-स्वपोषी मार्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये जीव प्रकाश-संश्लेषण के माध्यम से अमोनिया-नाइट्रोजन का अवशोषण करते हैं तथा उप-उत्पाद के रूप में ऑक्सीजन उत्पन्न करते हैं, जिससे उथली एवं पर्याप्त प्रकाशयुक्त प्रणालियों में घुलित ऑक्सीजन का एक महत्वपूर्ण स्रोत उपलब्ध होता है।सूक्ष्म शैवालों में प्रोटीन की मात्रा सामान्यतः उनके शुष्क भार का लगभग 30–65 प्रतिशत होती है। अतः जब इन्हें संवर्धित जीवों द्वारा ग्रहण किया जाता है, तब ये बायोफ्लॉक के पोषणीय महत्व में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

प्रोटोजोआ एवं सिलिएट्स

प्रोटोजोआ तथा विशेष रूप से सिलिएट्स बायोफ्लॉक समुदायों में अत्यंत महत्वपूर्ण नियामक भूमिका निभाते हैं। सिलिएट्स प्राकृतिक पर्यावरण में प्रोटोजोआ का सबसे बड़ा समूह माने जाते हैं। ये जीव जीवाणुओं, सायनोबैक्टीरिया तथा छोटे पादप-प्लवकों का उपभोग करते हैं, जिससे किसी एक जीवाणु समूह की अत्यधिक वृद्धि को नियंत्रित किया जा सकता है।इसके परिणामस्वरूप सूक्ष्मजीवी समुदाय की विविधता एवं कार्यात्मक संतुलन बना रहता है। इसके अतिरिक्त, ये निलंबित जीवाणु जैवद्रव्य की अत्यधिक मात्रा को कम करके जल की स्पष्टता में भी सुधार करते हैं।

कवक, यीस्ट तथा अन्य सूक्ष्मजीव

कवक एवं यीस्ट जटिल कार्बनिक पदार्थों के अपघटन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, विशेष रूप से बहुशर्करा तथा

संरचनात्मक कार्बोहाइड्रेट जैसे यौगिकों के विघटन में, जिन्हें जीवाणु अपेक्षाकृत कम दक्षता से अपघटित करते हैं। इस प्रकार ये पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण तथा फ्लॉक की संरचनात्मक स्थिरता बनाए रखने में योगदान देते हैं।

बायोफ्लॉक में सूक्ष्मजीवी क्रियाविधियाँ

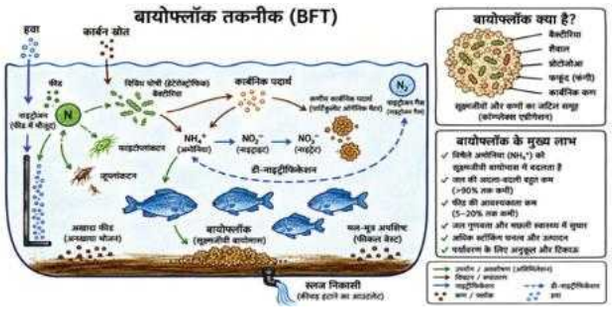

चित्र 2. बायोफ्लॉक प्रणाली में सूक्ष्मजीवी- मध्यस्थित पोषक तत्व चक्रण

फ्लॉक निर्माण एवं सूक्ष्मजीवी समुच्चयन

बायोफ्लॉक का निर्माण एक जटिल प्रक्रिया है, अनेक सूक्ष्मजीव बाह्य कोशिकीय बहुलकीय पदार्थों का स्राव करते हैं, जिनमें प्रोटीन, बहुशर्कराएँ तथा ह्यूमिक पदार्थ सम्मिलित होते हैं। ये पदार्थ सूक्ष्मजीवों की बाह्य सतह पर एक परत निर्मित करते हैं और जैविक आसंजकों के रूप में कार्य करते हैं, जिससे समीपस्थ कोशिकाएँ तथा कार्बनिक कण परस्पर जुड़कर एक सुसंगठित फ्लॉक मैट्रिक्स का निर्माण करते हैं।विद्युतस्थैतिक बल भी इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, क्योंकि ये कोशिकाओं के मध्य विद्यमान प्रतिकर्षण बलों को कम करते हैं तथा वैन डेर वाल्स आकर्षण बलों को कोशिकाओं को निकट लाने में सक्षम बनाते हैं।

नाइट्रोजन रूपांतरण मार्ग

बायोफ्लॉक प्रणाली में नाइट्रोजन रूपांतरण के तीन प्रमुख मार्ग एक साथ सक्रिय रहते हैं, पहला मार्ग प्रकाश-स्वपोषी अवशोषण है, जिसमें पादप-प्लवक प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया के दौरान अमोनिया-नाइट्रोजन का अवशोषण करते हैं। दूसरा मार्ग रासायनिक-स्वपोषी नाइट्रीकरण है, जिसके अंतर्गत अमोनिया ऑक्सीकरण करने वाले जीवाणु अमोनिया-नाइट्रोजन को नाइट्राइट-नाइट्रोजन में परिवर्तित करते हैं, तथा नाइट्राइट ऑक्सीकरण करने वाले जीवाणु नाइट्राइट को अपेक्षाकृत कम विषैले नाइट्रेट-नाइट्रोजन में परिवर्तित करते हैं। यह प्रक्रिया प्रणाली से नाइट्रोजन को हटाती नहीं है, बल्कि उसके विषैले प्रभाव को कम करती है।तीसरा तथा बायोफ्लॉक परिस्थितियों में सामान्यतः प्रमुख मार्ग विषमपोषी आत्मसात प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से विषमपोषी जीवाणु घुलित अकार्बनिक नाइट्रोजन को सीधे अपने जीवाणु जैवद्रव्य में सम्मिलित कर लेते हैं।

जल गुणवत्ता प्रबंधन में सूक्ष्मजीवों की भूमिका

पारंपरिक गहन जलीय कृषि प्रणालियों में उत्सर्जन तथा आहार के अपघटन से उत्पन्न नाइट्रोजनयुक्त अपशिष्ट तीव्र गति से एकत्रित होते हैं, जिसके कारण बार-बार जल परिवर्तन की आवश्यकता होती है। यह प्रक्रिया न केवल महंगी होती है, बल्कि संसाधनों की दृष्टि से अलाभकारी तथा पर्यावरणीय प्रदूषण का कारण भी बनती है। इसके विपरीत, बायोफ्लॉक प्रणाली में विषमपोषी अमोनिया-आत्मसातकारी जीवाणु तथा रासायनिक-स्वपोषी नाइट्रीकारी जीवाणु मिलकर इन अपशिष्टों का उसी प्रणाली के भीतर प्रबंधन करते हैं। अमोनिया-नाइट्रोजन जलीय जीवों के लिए सर्वाधिक विषैला नाइट्रोजनयुक्त यौगिक माना जाता है। कार्बन की पर्याप्त उपलब्धता होने पर विषमपोषी जीवाणु कुछ घंटों से कुछ दिनों के भीतर अमोनिया को अपने जैवद्रव्य में स्थिर कर लेते हैं और इसे जीवाणु जैवद्रव्य में परिवर्तित कर देते हैं। यह प्रक्रिया केवल नाइट्रीकारी जीवाणुओं की तुलना में कहीं अधिक तीव्र होती है। विभिन्न अध्ययनों से यह भी स्पष्ट हुआ है कि बायोफ्लॉक प्रणाली में कुल अमोनिया-नाइट्रोजन तथा नाइट्राइट-नाइट्रोजन की मात्रा में उल्लेखनीय कमी आती है।

बायोफ्लॉक में सूक्ष्मजीवी जैवद्रव्य की पोषणीय भूमिका

जल गुणवत्ता नियंत्रण के अतिरिक्त, विषमपोषी जीवाणुओं द्वारा उत्पादित एकल-कोशिकीय प्रोटीन सीधे झींगा, तिलापिया तथा कार्प जैसी छनन-आहार ग्रहण करने वाली प्रजातियों द्वारा उपयोग किया जाता है। अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि बायोफ्लॉक में एलानिन, ग्लूटामेट, आर्जिनिन तथा ग्लाइसिन जैसे मुक्त अमीनो अम्ल उपस्थित

होते हैं, जिससे संकेत मिलता है कि बायोफ्लॉक कणों को जीव सक्रिय रूप से भोजन के रूप में पहचानते और ग्रहण करते हैं।

बायोफ्लॉक का वसा अंश विशेष पोषणीय महत्व रखता है। यह पाया गया है कि बायोफ्लॉक परिस्थितियों में पाले गए जीवों की पाचन ग्रंथियों में कुल वसा संचय नियंत्रण समूहों की तुलना में अधिक होता है। इसी प्रकार बायोफ्लॉक प्रणाली में संवर्धित मादा जीवों के अंडों में आवश्यक वसीय अम्लों जैसे एराकिडोनिक अम्ल, ईकोसापेंटेनोइक अम्ल तथा डोकोसाहेक्सेनोइक अम्ल का स्तर अधिक पाया गया है। ये वसीय अम्ल लार्वा विकास, प्रजनन क्षमता तथा प्रतिरक्षा कार्यों के लिए अत्यंत आवश्यक होते हैं। इसके अतिरिक्त, बायोफ्लॉक संवर्धित जीवों में पाचन एंजाइमों की सक्रियता भी बढ़ाता है, जो संभवतः सूक्ष्मजीवी जैवद्रव्य में उपस्थित बाह्य एंजाइमों तथा जैव सक्रिय यौगिकों के कारण होता है।

बायोफ्लॉक सूक्ष्मजीवों के प्रोबायोटिक गुण एवं रोग नियंत्रण कार्य

बायोफ्लॉक सूक्ष्मजीवी समुदायों का एक अत्यंत महत्वपूर्ण गुण उनकी रोगजनकों के प्रसार को नियंत्रित करने तथा मेजबान जीव की प्रतिरक्षा क्षमता बढ़ाने की क्षमता है।

प्रतिरक्षा उद्दीपन

बायोफ्लॉक में सूक्ष्मजीव-संबद्ध आणविक प्रतिरूप उपस्थित होते हैं, जिनमें पेप्टिडोग्लाइकैन, लिपोपॉलीसैकेराइड तथा बीटा-ग्लूकान जैसे यौगिक सम्मिलित होते हैं। मछलियों या झींगों द्वारा इन यौगिकों के सेवन के पश्चात ये जन्मजात प्रतिरक्षा प्रणाली को सक्रिय करते हैं तथा फागोसाइटोसिस एवं पूरक प्रणाली जैसी गैर-विशिष्ट प्रतिरक्षी क्रियाओं को प्रोत्साहित करते हैं।

इसके अतिरिक्त बायोफ्लॉक में कैरोटिनॉइड, क्लोरोफिल, बहुशर्कराएँ, फाइटोस्टेरॉल, ब्रोमोफेनॉल, टॉरिन तथा वसा-विलेय विटामिन जैसे अनेक जैव सक्रिय पदार्थ पाए जाते हैं, जिनमें प्रतिरक्षा-वर्धक गुण पाए गए हैं।

मछलियों में सीरम लाइसोजाइम गतिविधि जन्मजात प्रतिरक्षा का महत्वपूर्ण संकेतक मानी जाती है। यह जीवाणु कोशिका भित्ति को विघटित करके फागोसाइटिक क्रियाओं को सक्रिय करती है। बायोफ्लॉक परिस्थितियों में पाली गई मछलियों में कुल इम्युनोग्लोबुलिन, मायलोपेरॉक्सिडेज तथा लाइसोजाइम स्तर अधिक पाए गए हैं।

प्रतिस्पर्धात्मक बहिष्करण एवं क्वोरम सेंसिंग अवरोधन

प्रत्यक्ष प्रतिरक्षा उद्दीपन के अतिरिक्त बायोफ्लॉक सूक्ष्मजीव रोगजनकों को प्रतिस्पर्धात्मक बहिष्करण के माध्यम से भी नियंत्रित करते हैं। लाभकारी सूक्ष्मजीव स्थान एवं संसाधनों के लिए हानिकारक जीवों से प्रतिस्पर्धा करते हैं तथा प्रतिजैविक पदार्थों का निर्माण करके रोगजनकों की वृद्धि को रोकते हैं।

पॉली-बीटा-हाइड्रॉक्सीब्यूटाइरेट एक ऐसा जैव बहुलक है जो विभिन्न जीवाणुओं द्वारा तनाव की स्थिति में ऊर्जा भंडारण पदार्थ के रूप में उत्पादित किया जाता है। यह बायोफ्लॉक में उपस्थित महत्वपूर्ण यौगिकों में से एक है। यह प्रीबायोटिक के रूप में भी कार्य करता है तथा लाभकारी आंत्र सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को प्रोत्साहित करता है।

आर्थिक एवं पर्यावरणीय महत्व

आहार लागत जलीय कृषि के कुल व्यय का लगभग आधा भाग होती है, जबकि विषमपोषी जीवाणुओं द्वारा प्रणाली के भीतर सूक्ष्मजीवी प्रोटीन उत्पादन व्यावसायिक आहार की आवश्यकता को कम कर देता है। क्योंकि यह प्रणाली न्यूनतम अथवा शून्य जल परिवर्तन पर आधारित होती है, इसलिए जल पंपिंग, उपचार तथा अपशिष्ट जल निष्कासन से संबंधित लागतों में भी पर्याप्त कमी आती है।

सूक्ष्मजीव बायोफ्लॉक प्रौद्योगिकी के केवल सहायक घटक नहीं हैं, बल्कि इसकी संपूर्ण कार्यप्रणाली का मूल आधार हैं। अमोनिया को एकल-कोशिकीय प्रोटीन में परिवर्तित करने वाले विषमपोषी जीवाणु, अवशिष्ट नाइट्रोजन का विषहरण करने वाले नाइट्रीकारी जीवाणु, ऑक्सीजन एवं जैवद्रव्य प्रदान करने वाले प्रकाश-स्वपोषी शैवाल, सूक्ष्मजीवी समुदाय संरचना को नियंत्रित करने वाले प्रोटोजोआ तथा जटिल कार्बनिक पदार्थों का पुनर्चक्रण करने वाले कवक एवं यीस्ट सामूहिक रूप से संवर्धन टैंक के भीतर एक जीवित जैव-भूरासायनिक रिएक्टर का निर्माण करते हैं।

पाकु मछली (*पियारैक्टस ब्रैकिपोमस*) – एक परिचय, पोषण मूल्य एवं पालन विधियाँ

विजयपाल चौधरी[1] एवं आदित्य कुमार[2]

[1]तमिलनाडु डॉ. जे. जयललिता मत्स्य विश्वविद्यालय, नागपट्टिनम

[2]भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

भारत में मत्स्य पालन एक अत्यंत महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि होने के साथ-साथ विभिन्न संसाधनों एवं संभावनाओं से युक्त एक समृद्ध क्षेत्र है। विश्व स्तर पर मत्स्य पालन के माध्यम से मत्स्य उत्पादन करने वाले प्रमुख देशों में भारत का महत्वपूर्ण स्थान है। वर्तमान में भारत प्रतिवर्ष लगभग 9.06 मिलियन मीट्रिक टन मत्स्य उत्पादन के साथ विश्व में दूसरे स्थान पर है। कुल मत्स्य उत्पादन में अंतर्देशीय (मीठे पानी) मत्स्य पालन का योगदान 95 प्रतिशत से अधिक है। भारत में मीठे पानी का मत्स्य पालन एक प्रमुख कृषि व्यवसाय है तथा देश के कुल मत्स्य उत्पादन में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। तकनीकी प्रगति एवं मत्स्य पालन की उन्नत विधियों के कारण अंतर्देशीय मत्स्य उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। सामान्यतः कतला, रोहू, मृगल तथा मीठे पानी की झींगा जैसी प्रजातियों का पालन किया जाता है। आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु तथा पश्चिम बंगाल जैसे राज्य अंतर्देशीय मत्स्य उत्पादन में अग्रणी हैं। इसके अतिरिक्त मत्स्य पालन किसानों की आय बढ़ाने तथा आर्थिक विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। इन्हीं प्रमुख मत्स्य प्रजातियों में पाकु भी एक महत्वपूर्ण प्रजाति है। इसकी तीव्र वृद्धि दर, सर्वाहारी भोजन की आदत, विभिन्न परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता तथा उच्च पोषण मूल्य इसे मत्स्य पालन के लिए उपयुक्त प्रजाति बनाते हैं।

पाकु के नाम से प्रसिद्ध *पियारैक्टस ब्रैकिपोमस* मूल रूप से दक्षिण अमेरिका की अमेज़न तथा ओरिनोको नदी प्रणालियों की देशज मछली है। तमिलनाडु में इसे पापलेट, मूप्सन, पाकु, लाल पेट वाला पाकु, एरी वावल अथवा पारै आदि विभिन्न नामों से जाना जाता है। यह सेरासाल्मिडी कुल की मछली है तथा पिरान्हा एवं सिल्वर डॉलर मछलियों की निकट संबंधी प्रजाति है। प्राकृतिक रूप से यह नदियों, नहरों एवं झीलों में पाई जाती है।

कोलंबिया, ब्राज़ील, पेरू, वेनेज़ुएला, मध्य अमेरिका, वियतनाम, थाईलैंड, मलेशिया, बांग्लादेश तथा चीन सहित अनेक देशों में पाकु एक महत्वपूर्ण पालन योग्य मत्स्य प्रजाति मानी जाती है। पेरू में पाकु का पालन ग्रामीण मत्स्य किसानों के लिए भोजन एवं अतिरिक्त आय का प्रमुख स्रोत है। चीन में वर्ष 1985 से इसका उत्पादन किया जा रहा है तथा वर्तमान में



चूना डालना



मछली बीज संचयन के लिए तैयार तालाब

इसका बड़े पैमाने पर पालन किया जाता है। इसकी तीव्र वृद्धि एवं अधिक उत्पादन क्षमता के कारण यह दक्षिण चीन के अधिकांश अंतर्देशीय जलाशयों में व्यापक रूप से पाई जाती है। भारत में इस मत्स्य प्रजाति का पालन वर्ष 2005 से किया जा रहा है। वर्ष 2024 से भारत सरकार के केंद्रीय मत्स्य विभाग ने इसके व्यवस्थित पालन की अनुमति प्रदान की है। इसके बाद राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड ने भारत में पाकु मत्स्य पालन के लिए आवश्यक दिशा-निर्देश भी जारी किए हैं। इसलिए वर्तमान समय में पाकु मत्स्य पालन के संबंध में जानकारी प्राप्त करना अत्यंत आवश्यक है।

जैविक गुण

लाल पेट वाली पाकु मछली अन्य पाकु प्रजातियों के समान दिखाई देने के कारण इसकी पहचान करना तथा अन्य प्रजातियों से अलग पहचानना कुछ कठिन होता है। इसका शरीर गहरा तथा दोनों ओर से चपटा होता है। इसके शरीर का ऊपरी भाग एवं पृष्ठीय पंख चाँदी के रंग के होते हैं, जबकि पेट तथा वक्षीय पंख लाल रंग के दिखाई देते हैं। इसके अतिरिक्त इस मछली में पृष्ठीय पंख के पीछे तथा पूँछ के पंख के बीच एक छोटा एडिपोज़ (वसायुक्त) पंख पाया जाता है। नर मछली का एडिपोज़ पंख त्रिकोणीय तथा नुकीला होता है, जबकि मादा मछली का एडिपोज़ पंख गोलाकार एवं मुड़ा हुआ होता है। इस मछली के दाँत भोजन को चबाने के अनुकूल कठोर, चपटे तथा दो पंक्तियों में व्यवस्थित होते हैं। देखने में इसके दाँत मनुष्य के दाँतों के समान चौकोर दिखाई देते हैं। पाकु मछली सर्वाहारी प्रकृति की होती है। यह जलीय पौधों, फलों, बीजों, छोटे कीटों तथा छोटी मछलियों को भोजन के रूप में ग्रहण करती है। यह लगभग तीन वर्ष की आयु के बाद लैंगिक परिपक्वता प्राप्त करती है। सामान्यतः वर्षा ऋतु में यह अंडे देकर प्रजनन करती है। प्रजनन काल में एक मादा मछली लगभग 1.5 से 2.0 लाख तक अंडे देती है।

पाकु मछली पालन की विधियाँ

स्टॉकिंग (बीज संचयन) से पूर्व तालाब की तैयारी

पाकु मछली पालन के लिए 40% बालू मिश्रित चिकनी मिट्टी वाला तालाब उपयुक्त माना जाता है। मिट्टी का पीएच 6.5–7.0 के बीच होना चाहिए, क्योंकि इससे जल का पीएच 7.0–8.0 के बीच बनाए रखने में सहायता मिलती है। हालांकि, पाकु मछली की वृद्धि के लिए जल का पीएच 7.5–8.9 तक भी उपयुक्त रहता है। पालन तालाब की गहराई कम से कम 1.5 मीटर होनी चाहिए। तालाब में पानी के प्रवेश तथा निकास की पाइपें एक-दूसरे के विपरीत दिशा में स्थापित की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त, तालाब का तल इस प्रकार बनाया जाना चाहिए कि जहाँ से पानी प्रवेश करता है वह भाग थोड़ा ऊँचा तथा जहाँ से पानी निकास होता है वह भाग थोड़ा नीचा रहे। इससे मछलियों की कटाई (हार्वेस्टिंग) तथा पानी की निकासी सरल हो जाती है। पालन तालाब में उचित पीएच बनाए रखने के लिए सबसे पहले तालाब में चूने का प्रयोग करना चाहिए। चूँकि पाकु एक सर्वाहारी मछली है, इसलिए तालाब में पादप एवं जंतु प्लवकों (फाइटोप्लैंकटन एवं ज़ूप्लैंकटन) की वृद्धि बढ़ाने के लिए तालाब में उर्वरक डालना आवश्यक है। मछली बीज के संचयन से दो सप्ताह पूर्व तालाब में प्राकृतिक भोजन (लाइव फूड) की उपलब्धता बढ़ाने के लिए प्रति हेक्टेयर 5000 किलोग्राम गोबर तथा 10 किलोग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग करना चाहिए।

हैचरी से पालन तालाब तक मछली बीज लाने से पूर्व अपनाई जाने वाली सावधानियाँ

पालन के लिए हैचरी से मछली बीज खरीदते समय कम से कम 10 ग्राम भार वाले मछली बीज का चयन करना चाहिए, जिससे अधिक जीवित रहने की संभावना रहती है। इसके अतिरिक्त, चयनित सभी मछली बीज समान आकार के होने चाहिए। मछली बीज स्वस्थ, सक्रिय तथा परजीवी संक्रमण एवं किसी भी प्रकार की चोट से मुक्त होने चाहिए।

मछली बीज को हैचरी से ले जाने से पहले दूरी के अनुसार 6 से 12 घंटे तक हैप्पा अथवा टंकियों में अनुकूलन कराना आवश्यक है।

एक पॉलीथीन बैग (आकार – 74 से.मी. × 46 से.मी., मोटाई – 0.0625 मिमी) में एक-तिहाई भाग पानी तथा दो-तिहाई भाग ऑक्सीजन भरकर लगभग 200 मछली बीज सुरक्षित रूप से परिवहन किए जा सकते हैं।

मछली बीज को हैचरी से पालन तालाब तक प्रातःकाल अथवा सायंकाल के समय ले जाना अधिक उपयुक्त होता है। मछली बीज को तालाब में छोड़ने से पहले पॉलीथीन बैग

सहित उन्हें 10–15 मिनट तक तालाब के पानी में तैराकर रखना चाहिए। ऐसा करने से मछली बीज तापीय आघात से सुरक्षित रहते हैं। इसके बाद मछली बीज को धीरे-धीरे पॉलीथीन बैग से निकालकर तालाब में छोड़ देना चाहिए।

मछली बीज संचयन घनत्व

राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड की अनुशंसा के अनुसार, जब पाकु मछली का एकल पालन किया जाता है, तब लगभग 10 ग्राम भार वाले मछली बीजों का संचयन प्रति वर्ग मीटर 1 बीज अथवा प्रति हेक्टेयर 10,000 मछली बीज की दर से किया जा सकता है। तथापि, तमिलनाडु के अधिकांश मत्स्य पालक नर्सरी पालन प्रणाली में प्रति हेक्टेयर 50,000 से 1,00,000 मछली बीज का संचयन कर उन्हें तालाब में पालन करने के पश्चात झीलों में पालन हेतु विक्रय कर अच्छा लाभ अर्जित करते हैं। इसके अतिरिक्त, भारतीय प्रमुख कार्प मछलियों के साथ मिश्रित मत्स्य पालन में पाकु मछली का पालन करते समय कुल संचयन का 15–20 प्रतिशत पाकु मछली बीज तालाब में छोड़ा जा सकता है।



पाकु मछली के बीज

आहार एवं भोजन प्रबंधन

पाकु मछलियाँ तालाब के मध्य जलस्तर में उपलब्ध भोजन का उपभोग करती हैं। इनके आहार के रूप में मूंगफली खली तथा चावल की भूसी के मिश्रण का उपयोग किया जा सकता है। यदि तैरने वाला पेलेट आहार दिया जाए, तो उसमें 25–30% प्रोटीन, 4–6% वसा तथा 1% विटामिन एवं खनिज मिश्रण होना चाहिए। मछलियों को प्रतिदिन दो बार, प्रातः एवं सायंकाल भोजन देना चाहिए। प्रारंभिक अवस्था में मछलियों के कुल शरीर भार का 5% आहार देना चाहिए। इसके बाद मछलियों की वृद्धि के अनुसार आहार की मात्रा को घटाकर 2–3% किया जा सकता है। यदि उचित आहार प्रबंधन का पालन नहीं किया जाता है, तो ये मछलियाँ अन्य मछलियों के पंख (फिन) काटने लगती हैं। इस समस्या से बचने के लिए नियमित समयांतराल पर पर्याप्त मात्रा में आहार उपलब्ध कराना आवश्यक है।

जल गुणवत्ता प्रबंधन

पालन तालाब में प्रत्येक दो सप्ताह के अंतराल पर उर्वरक का प्रयोग करने से जल में प्राकृतिक भोजन (प्लवकों) का उत्पादन संतुलित बना रहता है। यदि जैविक उर्वरक का उपयोग किया जाए, तो 0.5 टन गोबर प्रति हेक्टेयर अथवा रासायनिक उर्वरक के रूप में 10 किलोग्राम यूरिया एवं 15 किलोग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से तालाब में डालना चाहिए। इससे तालाब में पादप एवं जंतु प्लवकों का उत्पादन बढ़ता है। समय-समय पर तालाब के जल की गुणवत्ता का परीक्षण करते रहना चाहिए तथा यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जल का पीएच 7.5–8.3, घुलित ऑक्सीजन 7.0 मि.ग्रा./लीटर, कठोरता 50–400 मि.ग्रा./लीटर, क्षारीयता 50–300 मि.ग्रा./लीटर तथा अमोनिया 0.5 मि.ग्रा./लीटर या उससे कम हो।

रोग प्रबंधन एवं नमूना संग्रह

सामान्यतः पाकु मछलियाँ किसी भी प्रमुख रोग से अधिक प्रभावित नहीं होती हैं। तथापि, ग्रीष्म ऋतु में यदि तालाब में जल की गहराई 1 मीटर से कम हो जाए, तो चेचक (पॉक्स) रोग की संभावना बढ़ जाती है। इसी प्रकार, यदि तालाब में शैवाल की अत्यधिक वृद्धि हो जाए, तो वे मछलियों के गलफड़ों में अवरोध उत्पन्न कर उनकी मृत्यु का कारण बन सकते हैं। इससे बचाव के लिए तालाब में जल की गहराई 1 मीटर से कम नहीं होने देनी चाहिए तथा समय-समय पर सेकी डिस्क की सहायता से शैवाल की सघनता का आकलन कर उसका उचित प्रबंधन करना चाहिए।

मछलियों की समान एवं स्वस्थ वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक 15 दिन के अंतराल पर कास्ट नेट की सहायता से मछलियों का नमूना लेना चाहिए। नमूना संग्रह के समय यह

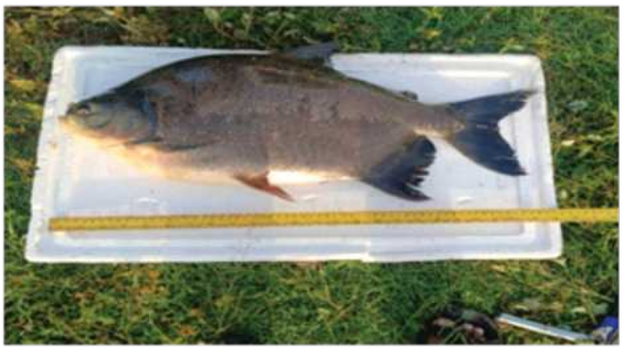

एक विकसित (वयस्क) पाकु मछली



अवतरण हुई कुल पाकु मछलियाँ

भी सुनिश्चित करना चाहिए कि मछलियों में किसी प्रकार के रोग या संक्रमण के लक्षण तो नहीं हैं।

अवतरण

पाकु मछलियाँ लगभग 7–8 माह में 800 ग्राम से 1 किलोग्राम तक का भार प्राप्त कर कटाई के लिए तैयार हो जाती हैं। सामान्यतः प्रति हेक्टेयर 8 से 10 टन तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

पाकु मछली का पोषण मूल्य

- पाकु मछली के मांस में कुल अमीनो अम्लों का लगभग 80% आवश्यक अमीनो अम्ल होते हैं। इसमें लगभग 17% प्रोटीन तथा 1.1% वसा पाई जाती है।
- इसमें उपस्थित ओमेगा-3 वसीय अम्ल (हृदय स्वास्थ्य तथा मस्तिष्क के विकास के लिए लाभकारी होते हैं।
- पाकु मछली में विटामिन A, B तथा D पाए जाते हैं, जो हड्डियों के स्वास्थ्य, रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा उपापचय को बढ़ाने में सहायक होते हैं।
- इसमें उपस्थित विटामिन A आँखों के स्वास्थ्य को बनाए रखने तथा आयु से संबंधित नेत्र समस्याओं की रोकथाम में सहायक होता है।
- पाकु मछली खनिज तत्वों का भी अच्छा स्रोत है। इसमें उपस्थित सेलेनियम प्रतिरक्षा तंत्र को सुदृढ़ करता है तथा कोशिकाओं को क्षति से बचाने में सहायता करता है।

"विश्व पटल पर हिंदी के प्रति बढ़ता सम्मान देशवासियों के लिए गर्व और प्रेरणा का विषय है।"

नरेन्द्र मोदी

तीस्ता नदी की मत्स्य जैवविविधता, संरक्षण चुनौतियाँ एवं मछुआरा समुदायों की आजीविका

रजनी चंद्रन, सौरव साहा, अमित सिहं बिष्ट, ललित कुमार त्यागी, कांताराजन जी., राजीव कुमार सिंह एवं काजल चक्रबर्ती

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

तीस्ता नदी पूर्वी हिमालय की एक प्रमुख अंतरराष्ट्रीय नदी है, जिसका उद्गम सिक्किम के उच्च हिमालयी क्षेत्र में स्थित छोम्बो चू हिमनदीय तंत्र से होता है। लगभग 393 किलोमीटर लंबी यह नदी सिक्किम एवं पश्चिम बंगाल से प्रवाहित होकर बांग्लादेश में प्रवेश करती है तथा अंततः ब्रह्मपुत्र (जमुना) नदी तंत्र में समाहित हो जाती है। भारत एवं बांग्लादेश के मध्य साझा जल संसाधनों में तीस्ता नदी का विशेष महत्व है, क्योंकि यह दोनों देशों की पारिस्थितिकी, कृषि, मत्स्य उत्पादन तथा स्थानीय अर्थव्यवस्था को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है।

तीस्ता नदी अपनी समृद्ध मत्स्य जैवविविधता के लिए प्रसिद्ध है तथा इसे हिमालयी क्षेत्र की सर्वाधिक महत्वपूर्ण मत्स्य संपन्न नदियों में सम्मिलित किया जाता है। नदी विभिन्न पारिस्थितिक तंत्रों, जल प्रवाह अवस्थाओं तथा आवासीय विविधताओं के कारण अनेक स्वदेशी एवं आर्थिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मत्स्य प्रजातियों का आश्रय स्थल है। इसके अतिरिक्त, नदी पर आश्रित मछुआरा समुदायों की आजीविका, खाद्य सुरक्षा तथा सांस्कृतिक परंपराएँ भी नदी की पारिस्थितिकीय स्थिरता से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई हैं।

वर्तमान समय में तीस्ता नदी अनेक मानवजनित एवं प्राकृतिक दबावों का सामना कर रही है। जलविद्युत परियोजनाओं एवं बाँध निर्माण के कारण आवास विखंडन, अनियंत्रित मत्स्याखेट, बाह्य एवं आक्रामक प्रजातियों का प्रसार, प्रदूषण तथा जलवायु परिवर्तनजनित घटनाएँ इसकी



पारिस्थितिकीय अखंडता के लिए गंभीर चुनौती बन चुकी हैं। फलस्वरूप अनेक मत्स्य प्रजातियों की संरक्षण स्थिति चिंताजनक होती जा रही है। प्रस्तुत लेख में तीस्ता नदी की भौगोलिक एवं जलवैज्ञानिक विशेषताओं, मत्स्य जैवविविधता, संरक्षण स्थिति, प्रमुख खतरों तथा मछुआरा समुदायों की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

भौगोलिक एवं जलवैज्ञानिक विशेषताएँ

तीस्ता नदी का जलग्रहण क्षेत्र हिमालयी पर्वतीय भूभाग से लेकर बांग्लादेश के मैदानी क्षेत्रों तक विस्तृत है। ऊपरी भाग में तीव्र ढाल, शीत जल, उच्च वेग तथा पथरीले तल वाली परिस्थितियाँ पाई जाती हैं, जबकि निचले भाग में अपेक्षाकृत धीमा प्रवाह, अधिक अवसादन तथा विस्तृत बाढ़ मैदान विकसित होते हैं। इस प्रकार नदी के विभिन्न भागों में विविध प्रकार के जलीय आवास निर्मित होते हैं, जो विभिन्न मत्स्य समुदायों के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करते हैं।

तीस्ता नदी का प्रवाह मुख्यतः मानसूनी वर्षा एवं हिमनदीय पिघलन पर निर्भर करता है। मानसून काल (जून–सितम्बर) में जल प्रवाह अत्यधिक बढ़ जाता है, जबकि शीत एवं ग्रीष्म ऋतु में अपेक्षाकृत निम्न प्रवाह की स्थिति रहती है। प्रवाह की यह मौसमी परिवर्तनशीलता मत्स्य प्रजनन, प्रवासन, भोजन उपलब्धता तथा आवास संरचना को प्रभावित करती है।

फ्लैश फ्लड एवं पारिस्थितिकीय प्रभाव

हिमालयी नदियों की भाँति तीस्ता नदी भी क्लाउडबर्स्ट तथा ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड (GLOF) जैसी चरम जलवैज्ञानिक घटनाओं के प्रति अत्यंत संवेदनशील है। अक्टूबर 2023 में दक्षिण ल्होनक झील क्षेत्र में हुई GLOF घटना ने तीस्ता नदी तंत्र को व्यापक रूप से प्रभावित किया। इस घटना के परिणामस्वरूप नदी प्रवाह में अचानक वृद्धि हुई, जिससे अवसंरचनात्मक क्षति, आवास विनाश तथा मत्स्य संसाधनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

ऐसी घटनाएँ नदी की भौतिक संरचना को परिवर्तित कर देती हैं, जिसके परिणामस्वरूप प्रजनन स्थलों का विनाश, अंडों एवं किशोर अवस्थाओं की मृत्यु तथा जलीय जैवविविधता में अस्थायी अथवा दीर्घकालिक परिवर्तन देखने को मिलते हैं। इसके अतिरिक्त, नदी तटवर्ती समुदायों की आजीविका भी गंभीर रूप से प्रभावित होती है।

तीस्ता नदी की मत्स्य जैवविविधता

उपलब्ध अध्ययनों के अनुसार तीस्ता नदी में 70 से अधिक मत्स्य प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें साइप्रिनिडी (Cyprinidae) परिवार की प्रजातियाँ सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करती हैं। इसके अतिरिक्त सिसोरीडी (Sisoridae), बैगरीडी (Bagridae), नेमाचेलिडी (Nemacheilidae) तथा कोबितिडी (Cobitidae) परिवारों की अनेक प्रजातियाँ भी नदी में पाई जाती हैं।

तेज़ प्रवाह वाले पर्वतीय क्षेत्रों में विशेष रूप से हिलस्ट्रीम मछलियों का प्रभुत्व देखा जाता है, जो पथरीले तल एवं तीव्र जलधाराओं के अनुकूल विकसित हुई हैं। वहीं निचले क्षेत्रों में कार्प एवं कैटफिश समूह की प्रजातियाँ अपेक्षाकृत अधिक संख्या में पाई जाती हैं।

मत्स्य विविधता के आकलन हेतु प्रयुक्त विभिन्न जैवविविधता सूचकांकों—जैसे शैनन-वीनर विविधता सूचकांक, मार्गालेफ समृद्धि सूचकांक एवं समता सूचकांक—के उच्च मान तीस्ता नदी में संतुलित एवं समृद्ध मत्स्य समुदाय की उपस्थिति को दर्शाते हैं। अध्ययन यह भी संकेत करते हैं कि मानसूनोत्तर अवधि में मत्स्य उत्पादकता एवं विविधता सर्वाधिक होती है।

संरक्षण स्थिति एवं प्रमुख खतरे

तीस्ता नदी की अनेक मत्स्य प्रजातियाँ संरक्षण की दृष्टि से संवेदनशील अथवा संकटग्रस्त श्रेणियों में सम्मिलित हैं। क्षेत्रीय स्तर पर किए गए आकलनों के अनुसार लगभग 45 प्रतिशत से अधिक प्रजातियाँ विभिन्न प्रकार के संरक्षण जोखिमों का सामना कर रही हैं। विशेष रूप से प्रवासी प्रजातियाँ, सीमित वितरण क्षेत्र वाली प्रजातियाँ तथा विशिष्ट आवासों पर निर्भर हिलस्ट्रीम मछलियाँ अधिक प्रभावित हैं।

अत्यधिक मत्स्याखेट

अनियंत्रित मत्स्याखेट, अवैध मत्स्य उपकरणों का उपयोग तथा प्रजनन काल में मत्स्य दोहन प्राकृतिक मत्स्य भंडारों के पुनर्जनन को बाधित करते हैं।

बाँध एवं जलविद्युत परियोजनाएँ

तीस्ता नदी पर निर्मित एवं प्रस्तावित जलविद्युत परियोजनाएँ नदी की प्राकृतिक प्रवाह प्रणाली को परिवर्तित कर रही हैं। इन परियोजनाओं के कारण आवास विखंडन, प्रवासी मार्गों का अवरोध तथा तलछट परिवहन में परिवर्तन जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

बाह्य एवं आक्रामक प्रजातियाँ

बाह्य प्रजातियों का अनियंत्रित प्रवेश स्थानीय मत्स्य समुदायों के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करता है। ये प्रजातियाँ भोजन एवं आवास के लिए प्रतिस्पर्धा करती हैं तथा कई मामलों में स्थानीय प्रजातियों के विस्थापन का कारण बनती हैं।

प्रदूषण एवं आवास क्षरण

कृषि अपवाह, घरेलू अपशिष्ट, निर्माण गतिविधियाँ तथा तटीय क्षेत्रों का अतिक्रमण नदी की जल गुणवत्ता एवं आवासीय संरचना को प्रभावित करते हैं। इसके परिणामस्वरूप मत्स्य उत्पादन एवं जैवविविधता में गिरावट देखी जाती है।

मछुआरा समुदाय एवं आजीविका

तीस्ता नदी पर आश्रित मछुआरा समुदाय नदी पारिस्थितिकी तंत्र के अभिन्न अंग हैं। ये समुदाय प्रत्यक्ष रूप से मत्स्याखेट, मत्स्य विपणन एवं प्रसंस्करण गतिविधियों से जुड़े हुए हैं। नदी उनकी आय, पोषण सुरक्षा तथा सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान का प्रमुख आधार है।

यद्यपि समुदायों के पास स्थानीय पारिस्थितिकीय ज्ञान का समृद्ध भंडार उपलब्ध है, तथापि उन्हें सीमित आर्थिक अवसरों, संसाधन क्षरण, नीतिगत उपेक्षा एवं विकास परियोजनाओं के कारण उत्पन्न विस्थापन जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कई अध्ययनों ने यह रेखांकित किया है कि संसाधन प्रबंधन एवं संरक्षण योजनाओं में स्थानीय समुदायों की सहभागिता सुनिश्चित किए बिना दीर्घकालिक संरक्षण सफलता प्राप्त करना कठिन है।

अतः समुदाय-आधारित मत्स्य प्रबंधन, वैकल्पिक आजीविका विकास, क्षमता निर्माण तथा जनजागरूकता कार्यक्रमों को संरक्षण रणनीतियों का अभिन्न घटक बनाया जाना चाहिए।

तीस्ता नदी पूर्वी हिमालय की एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय नदी है, जो समृद्ध मत्स्य जैवविविधता तथा लाखों लोगों की आजीविका का आधार प्रदान करती है। तथापि, जलविद्युत परियोजनाओं, अत्यधिक मत्स्याखेट, आवास क्षरण, आक्रामक प्रजातियों तथा जलवायु परिवर्तनजनित घटनाओं के कारण इसकी पारिस्थितिकीय स्थिरता निरंतर प्रभावित हो रही है।

नदी की जैवविविधता एवं मत्स्य संसाधनों के दीर्घकालिक संरक्षण हेतु भारत एवं बांग्लादेश के मध्य समन्वित नदी प्रबंधन, वैज्ञानिक मत्स्याखेट विनियमन, आवास संरक्षण, मत्स्य मार्गों की बहाली, सतत विकास नीतियाँ तथा स्थानीय समुदायों की सक्रिय भागीदारी अनिवार्य है। साथ ही, निरंतर अनुसंधान, दीर्घकालिक निगरानी तथा जन-जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से तीस्ता नदी पारितंत्र के संरक्षण को सुदृढ़ किया जा सकता है। यही प्रयास भविष्य में इस महत्वपूर्ण नदी तंत्र की पारिस्थितिकीय अखंडता एवं सामाजिक-आर्थिक उपयोगिता को बनाए रखने में सहायक सिद्ध होंगे।

"राष्ट्रभाषा के बिना आजादी बेकार है।"

- अवनींद्रकुमार विद्यालंकार।

गूगल अर्थ इंजन का मत्स्य संसाधन प्रबंधन में महत्त्व

शुभम कनौजिया[1], नीतीश बंसल[1], जसप्रीत सिंह[2], सुजीत कुमार राय[1] एवं अजेय कुमार पाठक[2]

[1]चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

[2]भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

मत्स्य संसाधन पृथ्वी पर जीवन के सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों में से एक हैं। विश्व की लगभग 3.2 अरब जनसंख्या अपनी कुल प्रोटीन आवश्यकता का एक महत्वपूर्ण हिस्सा मछली एवं मत्स्य उत्पादों से प्राप्त करती है। भारत जैसे विकासशील देशों में मत्स्य उद्योग का न केवल खाद्य सुरक्षा में, बल्कि आर्थिक विकास और रोजगार सृजन में भी अतुलनीय योगदान है। 21वीं सदी में मत्स्य संसाधन अनेक गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। ये चुनौतियाँ केवल मछलियों की संख्या और मत्स्य उत्पादन को ही प्रभावित नहीं कर रही हैं, बल्कि जलीय जैव विविधता, पर्यावरणीय संतुलन तथा लाखों लोगों की आजीविका के लिए भी चिंता का विषय बन चुकी हैं। इन चुनौतियों में जल प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आवासों का क्षरण तथा अति-दोहन सबसे प्रमुख हैं। औद्योगिक अपशिष्ट, कृषि में प्रयुक्त रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशक, अनुपचारित सीवेज तथा प्लास्टिक कचरे के कारण नदियाँ, झीलें और समुद्री क्षेत्र लगातार प्रदूषित हो रहे हैं। इससे जल की गुणवत्ता घटती है, घुलित ऑक्सीजन कम होती है और मछलियों के स्वास्थ्य, वृद्धि तथा प्रजनन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। माइक्रोप्लास्टिक और तेल रिसाव जैसी समस्याएँ समुद्री जीवों के साथ-साथ मानव स्वास्थ्य के लिए भी खतरा बनती जा रही हैं। जलवायु परिवर्तन ने भी मत्स्य संसाधनों पर गहरा प्रभाव डाला है। बढ़ते वैश्विक तापमान के कारण जल का तापमान बढ़ रहा है, जिससे कई मछली प्रजातियाँ अपने पारंपरिक आवास छोड़कर अन्य क्षेत्रों की ओर प्रवास कर रही हैं। अनियमित मानसून, बाढ़, सूखा, समुद्र स्तर में वृद्धि तथा समुद्री अम्लीकरण जैसी घटनाएँ मछलियों के प्रजनन, भोजन की उपलब्धता और प्राकृतिक आवासों को प्रभावित कर रही हैं। इसके साथ ही तटीय विकास, बाँध निर्माण, नदी तल खनन, आर्द्रभूमियों का विनाश तथा मैंग्रोव और प्रवाल भित्तियों का क्षरण मछलियों के प्रजनन एवं पालन-पोषण के लिए आवश्यक प्राकृतिक आवासों को नष्ट कर रहा है।

आज के समय में मत्स्य संसाधनों के समक्ष बढ़ती चुनौतियों- जैसे जल प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आवासों का क्षरण और अति-दोहन, से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए केवल पारंपरिक मत्स्य प्रबंधन विधियाँ पर्याप्त नहीं हैं। विशाल समुद्री क्षेत्रों, नदियों, झीलों और आर्द्रभूमियों की नियमित निगरानी, जल गुणवत्ता में होने वाले परिवर्तनों का आकलन तथा मत्स्य संसाधनों की वास्तविक स्थिति का पता लगाने के लिए आधुनिक तकनीकों का उपयोग आवश्यक हो गया है। इन तकनीकों की सहायता से बड़े भौगोलिक क्षेत्रों का कम समय और कम लागत में अध्ययन किया जा सकता है। साथ ही, वास्तविक समय में प्राप्त आँकड़ों के आधार पर मछलियों के प्रवास, जल गुणवत्ता, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव तथा पर्यावरणीय बदलावों की सटीक जानकारी प्राप्त होती है। कई वर्षों या दशकों के उपग्रह आँकड़ों का विश्लेषण करके दीर्घकालिक प्रवृत्तियों को समझना भी संभव हो जाता है, जिससे वैज्ञानिकों और नीति-निर्माताओं को संरक्षण एवं प्रबंधन संबंधी बेहतर निर्णय लेने में सहायता मिलती है। वर्तमान में भौगोलिक सूचना प्रणाली, दूरस्थ संवेदन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन लर्निंग, तथा बिग डेटा एनालिटिक्स जैसी आधुनिक प्रौद्योगिकियाँ मत्स्य संसाधन प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

गूगल अर्थ इंजन

गूगल अर्थ इंजन (जीईई) एक शक्तिशाली, क्लाउड-आधारित भू-स्थानिक विश्लेषण मंच है, जो उपग्रह चित्रों के विशाल अभिलेखागार, उच्च-प्रदर्शन संगणन क्षमता और स्थानिक विश्लेषण उपकरणों को एकीकृत रूप में उपलब्ध कराता है। यह प्लेटफॉर्म पृथ्वी विज्ञान, पर्यावरण अध्ययन तथा संसाधन प्रबंधन से संबंधित अनुसंधान में विशेष रूप से उपयोगी है, क्योंकि यह उपयोगकर्ता को बड़े पैमाने पर उपग्रह डेटा को डाउनलोड किए बिना ही ऑनलाइन प्रोसेस करने, विश्लेषित करने और दृश्यीकृत करने की सुविधा देता है। इसी

कारण जीईई समय, श्रम और तकनीकी संसाधनों की बचत करते हुए त्वरित तथा सटीक विश्लेषण की संभावना प्रदान करता है।

मत्स्य संसाधन अध्ययन के संदर्भ में जीईई की उपयोगिता अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह मंच जलस्रोतों की पहचान, जल निकायों के स्थानिक वितरण, आवास उपयुक्तता, भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तन, तथा जल गुणवत्ता से संबंधित संकेतकों के आकलन में सहायक होता है। नदी, झील, आर्द्रभूमि और तटीय क्षेत्रों जैसे जलीय पारिस्थितिक तंत्रों में होने वाले स्थानिक और कालिक परिवर्तनों का अध्ययन जीईई के माध्यम से अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। उपग्रह-आधारित सूचनाओं के साथ भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) तकनीकों के संयोजन से मछली आवासों की स्थिति, संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान और संसाधनों के स्थानिक वितरण को समझना सरल हो जाता है।

पारंपरिक भू-स्थानिक तकनीकों की तुलना में जीईई अधिक उन्नत इसलिए माना जाता है क्योंकि इसमें डेटा संग्रह, भंडारण, प्रोसेसिंग और विज़ुअलाइज़ेशन एक ही ऑनलाइन वातावरण में उपलब्ध होते हैं। पारंपरिक पद्धतियों में अक्सर उपग्रह चित्रों को डाउनलोड करना, भारी सॉफ़्टवेयर पर अलग-अलग प्रोसेसिंग करना और स्थानीय कंप्यूटर संसाधनों पर निर्भर रहना पड़ता है, जिससे समय अधिक लगता है और बड़े डेटा सेट पर काम करना कठिन हो जाता है। इसके विपरीत जीईई क्लाउड कम्प्यूटिंग की मदद से विशाल डेटा को तेज़ी से संसाधित करता है, जिससे बड़े भौगोलिक क्षेत्र और लंबे समय-काल के लिए विश्लेषण संभव हो पाता है। इसके अतिरिक्त, यह प्लेटफॉर्म कई उपग्रह स्रोतों को एक साथ जोड़कर तुलनात्मक अध्ययन, स्वचालित टाइम-सीरीज़ विश्लेषण और बार-बार दोहराए जा सकने वाले शोध कार्यों को अधिक सुलभ बनाता है। इसी कारण जीईई पारंपरिक भू-स्थानिक तकनीकों की अपेक्षा अधिक दक्ष, मापनीय और शोध-अनुकूल है।

नीतिनिर्माण के क्षेत्र में भी जीईई की भूमिका उल्लेखनीय है। मत्स्य प्रबंधन, संरक्षण योजना, संसाधन मूल्यांकन और पर्यावरणीय निगरानी के लिए आवश्यक साक्ष्य-आधारित निर्णयों में यह मंच उपयोगी समर्थन प्रदान करता है। इसके माध्यम से तैयार किए गए मानचित्र, प्रवृत्ति-विश्लेषण और स्थानिक मॉडल नीति-निर्माताओं को यह समझने में सहायता करते हैं कि किस क्षेत्र में संरक्षण प्राथमिकता दी जानी चाहिए, कहाँ मानवजनित दबाव अधिक है, और किन जल क्षेत्रों में प्रबंधन हस्तक्षेप की आवश्यकता है। इस प्रकार जीईई शोधकर्ताओं, प्रशासकों और नीति-निर्माताओं के बीच एक महत्वपूर्ण सेतु का कार्य करता है।

जीईई की प्रमुख विशेषताएँ:

- **विशाल डेटाबेस:** जीईई में 40 से अधिक वर्षों के उपग्रह चित्रों का संग्रह है। इसमें लैंडसैट, सेंटिनल, मॉडिस, और अन्य उपग्रहों से प्राप्त पेटाबाइट स्तर का डेटा उपलब्ध है।
- **उच्च संगणना शक्ति:** गूगल के विशाल क्लाउड इन्फ्रास्ट्रक्चर की सहायता से जटिल भू-स्थानिक विश्लेषण मिनटों में संभव है, जो अन्यथा महीनों का समय लेते।
- **निःशुल्क शैक्षणिक पहुँच:** शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों और गैर-व्यावसायिक संस्थानों के लिए जीईई निःशुल्क उपलब्ध है।
- **जावास्क्रिप्ट और पाइथन एपीआई:** जीईई में जावास्क्रिप्ट आधारित कोड एडिटर और पाइथन एपीआई के माध्यम से प्रोग्रामिंग की सुविधा उपलब्ध है।
- **वास्तविक समय विश्लेषण:** जीईई नवीनतम उपग्रह डेटा का त्वरित विश्लेषण कर वास्तविक समय में परिणाम प्रदान करने में सक्षम है।

जीईई कार्य प्रणाली

अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण:

गूगल अर्थ इंजन में किसी भी विश्लेषण का प्रथम चरण अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण होता है। अध्ययन क्षेत्र को आयत, बहुभुज अथवा बिंदु के रूप में जीईई के मानचित्र पर परिभाषित किया जा सकता है। यदि सीमा फ़ाइल उपलब्ध हो, तो उसे जीईई एसेट्स में अपलोड करके उपयोग किया जाता है। यह सीमा जिला, राज्य, नदी-जलग्रहण क्षेत्र, जलाशय, तटीय विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र , मैंग्रोव क्षेत्र अथवा समुद्री संरक्षित क्षेत्र जैसी किसी भी भौगोलिक इकाई की हो सकती है। अध्ययन क्षेत्र को कोड एडिटर में ee.Geometry.Polygon() अथवा

ड्रॉइंग टूल्स की सहायता से भी परिभाषित किया जा सकता है।

उपग्रह डेटा का चयन एवं आयात:

अध्ययन क्षेत्र निर्धारित होने के बाद जीईई डाटा कैटलॉग से आवश्यक उपग्रह डेटा का चयन किया जाता है। अध्ययन के उद्देश्य के अनुसार सेंटिनल -2, लैंडसैट 8/9, मोदिस तथा सेंटिनल -1 एसएआर जैसे डेटासेट उपयोग किए जाते हैं। साथ ही अध्ययन अवधि निर्धारित कर ee.ImageCollection() तथा filterDate() फ़ंक्शन द्वारा डेटा आयात किया जाता है।

चित्रों का चयन एवं फ़िल्टरिंग:

डेटा आयात के पश्चात केवल उपयुक्त उपग्रह चित्रों का चयन किया जाता है। इसके लिए filterDate() द्वारा तिथि, filterBounds() द्वारा अध्ययन क्षेत्र तथा क्लाउड कवर प्रतिशत के आधार पर छवियों को फ़िल्टर किया जाता है। सामान्यतः 10–20% से कम बादलों वाली छवियाँ चयनित की जाती हैं। सेंटिनल -2, के QA60 तथा लैंडसैट के पिक्सेल क्यू ए बैंड का उपयोग करके क्लाउड मास्किंग की जाती है। अंत में मोज़ेक अथवा मीडियन कम्पोजिट तैयार करके बादल-रहित एवं उच्च गुणवत्ता वाली समेकित छवि प्राप्त की जाती है।

छवि प्रसंस्करण:

इस चरण में आवश्यक स्पेक्ट्रल बैंड (हरा, लाल, निकट-अवरक्त तथा लघु-तरंग अवरक्त) का चयन कर विभिन्न स्पेक्ट्रल सूचकांकों की गणना की जाती है। जल निकायों की पहचान के लिए सामान्यीकृत अंतर जल सूचकांक (NDWI), शहरी क्षेत्रों में जल विश्लेषण हेतु संशोधित सामान्यीकृत अंतर जल सूचकांक (MNDWI), जल की मटमैलेपन के लिए सामान्यीकृत अंतर अशांतता सूचकांक (NDTI), समुद्री उत्पादकता के लिए क्लोरोफिल सूचकांक तथा MODIS डेटा से समुद्री सतह तापमान (SST) का आकलन किया जाता है। सतही परावर्तन डेटा के उपयोग से रेडियोमेट्रिक एवं वायुमंडलीय सुधार पहले से ही उपलब्ध होते हैं।

परिणामों का दृश्यांकन:

प्रसंस्कृत परिणामों को Map.addLayer() द्वारा इंटरैक्टिव मानचित्र पर प्रदर्शित किया जाता है। दृश्यीकरण पैरामीटर (visParams) के माध्यम से रंग-संयोजन, न्यूनतम-अधिकतम मान तथा बैंड संयोजन निर्धारित किए जाते हैं। कृत्रिम रंग संयोजन, टाइम-सीरीज़ ग्राफ (ui.Chart.image.series()),विभक्त पटल, तुलना तथा अर्थ इंजन एप्स के माध्यम से परिणामों को प्रभावी रूप से प्रदर्शित किया जा सकता है।

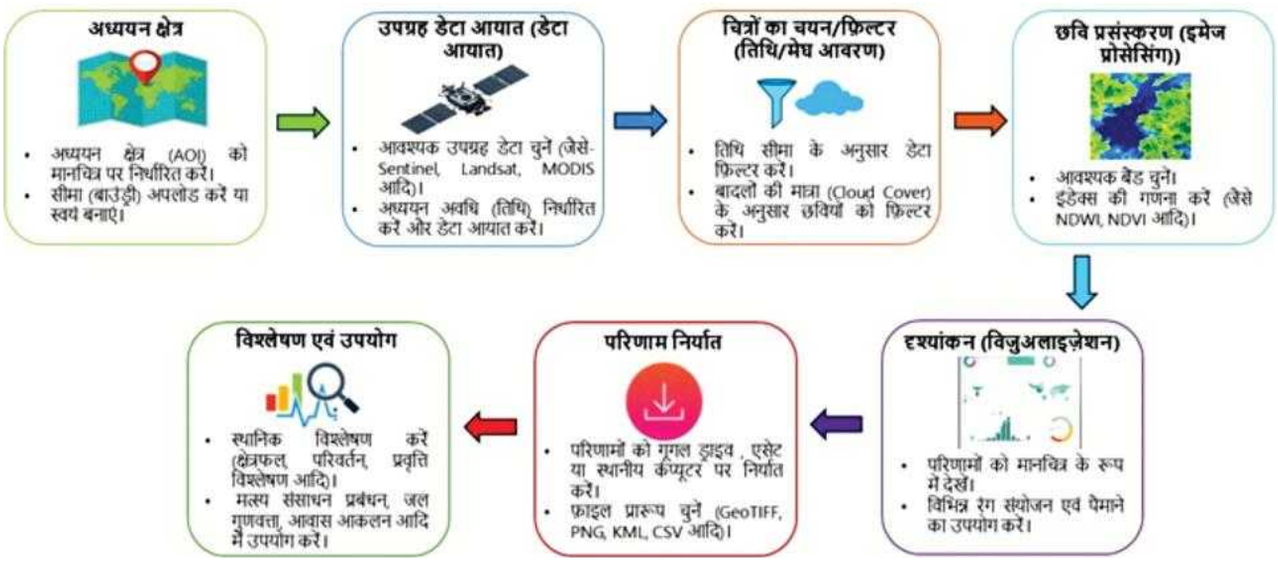

चित्र .1 गूगल अर्थ इंजन की कार्य प्रणाली

परिणामों का निर्यात:

विश्लेषण पूर्ण होने के बाद तैयार मानचित्रों एवं सांख्यिकीय परिणामों को निर्यात किया जाता है। Export.image.toDrive() द्वारा GeoTIFF प्रारूप में, Export.image.toAsset() द्वारा GEE Assets में तथा Export.table.toDrive() द्वारा CSV/XLSX प्रारूप में डेटा निर्यात किया जा सकता है। आवश्यकता अनुसार KML/KMZ, PNG तथा अन्य प्रारूप भी उपयोग किए जा सकते हैं। Sentinel-2 डेटा के लिए सामान्यतः 10 मीटर (Scale = 10) स्थानिक विभेदन निर्धारित किया जाता है।

विश्लेषण एवं अनुप्रयोग:

अंतिम चरण में प्राप्त परिणामों का स्थानिक विश्लेषण, परिवर्तन पहचान, समय-श्रृंखला विश्लेषण तथा क्षेत्रफल गणना की जाती है। इन परिणामों का उपयोग जल गुणवत्ता, मैंग्रोव आवास परिवर्तन, जलाशय क्षेत्रफल, मत्स्य उत्पादन क्षमता तथा संभावित मत्स्याखेट क्षेत्र के आकलन में किया जाता

उपलब्ध डेटासेट - मत्स्य प्रबंधन हेतु

जीईई के डेटा कैटलॉग में मत्स्य प्रबंधन के लिए प्रासंगिक निम्नलिखित प्रमुख डेटासेट उपलब्ध हैं। इन्हें एक क्लिक से किसी भी जीईई स्क्रिप्ट में आयात किया जा सकता है:

Landsat 8/9 OLI	30 मी०	जल गुणवत्ता, तटीय आवास, NDWI मानचित्रण	LANDSAT/LC09/C02/T1_L2
Sentinel -2 MSI	10–20 मी०	मैंग्रोव, प्रवाल भित्ति, मत्स्य तालाब	COPERNICUS/S2_SR_HARMONIZED
Sentinel -1 SAR	10–40 मी०	IUU जहाज़ पहचान, तटीय बाढ़ निगरानी	COPERNICUS/S1_GRD
MODIS Terra/ Aqua	250 मी०–1 कि०मी०	SST, Chl-a, समुद्री रंग, HAB निगरानी	MODIS/061/MOD09GA
VIIRS (Suomi-NPP)	375–750 मी०	रात्रि प्रकाश से मछली नाव पहचान	NOAA/VIIRS/001/VNP09GA
JRC Surface Water	30 मी०	अंतर्देशीय जलाशय परिवर्तन (1984–अब)	JRC/GSW1_4/GlobalSurfaceWater
GFW Fishing Hours	0.01°	वैश्विक मत्स्याखेट प्रयास घंटे	GFW/GFF/V1/fishing_hours
ERA5 (ECMWF)	~28 कि०मी०	पवन, तरंग, वर्षा — जलवायु चर	ECMWF/ERA5_LAND/DAILY_AGGR
NOAA AVHRR	1.1 कि०मी०	दीर्घकालिक SST (1981–अब)	NOAA/CDR/AVHRR/SR/V5

कोड-आधारित पुनरुत्पादन, साझाकरण और प्रमाणन

जीईई की सर्वाधिक क्रांतिकारी विशेषता यह है कि संपूर्ण विश्लेषण - डेटा आयात से लेकर अंतिम नक्शे तक, एक कोड स्क्रिप्ट में संरक्षित रहता है। यह पारंपरिक भू-स्थानिक सॉफ्टवेयर की मैन्युअल, अपुनरुत्पादनीय प्रक्रियाओं से मौलिक रूप से भिन्न है।

वैज्ञानिक पुनरुत्पादनीयता

- जीईई स्क्रिप्ट को एक यूआरएल के माध्यम से किसी भी शोधकर्ता के साथ साझा किया जा सकता है , वह उसी डेटा पर उसी विश्लेषण को चलाकर ठीक वही परिणाम प्राप्त करेगा।
- नए डेटा आने पर. filterDate() पैरामीटर बदलकर तत्काल अद्यतन परिणाम प्राप्त होते हैं, पूरी प्रक्रिया दोहराने की आवश्यकता नहीं।

साझाकरण और सहयोग

- **जीईई एसेट्स:** विश्लेषित डेटा, कस्टम मास्क और वेक्टर फ़ाइलें जीईई एसेट्स के रूप में सहकर्मियों के साथ साझा।

- **अर्थ इंजन एप्स:** नीति-निर्माताओं और मत्स्यपालकों के लिए कोडिंग-रहित इंटरैक्टिव वेब ऐप, स्मार्टफोन पर भी पहुँच।
- **गिटहब एकीकरण:** जीईई स्क्रिप्ट गिटहब पर संस्करण-नियंत्रण के साथ संग्रहीत, जिससे टीम-कार्य और दीर्घकालिक प्रबंधन सुगम होता है।

4.3 पारदर्शिता और प्रमाणन

- वैज्ञानिक प्रकाशनों में जीईई कोड का डीओआई या गिटहब लिंक देकर विश्लेषण को सत्यापन-योग्य बनाया जाता है।
- नीति-निर्माण में उपयोग होने वाले जीईई विश्लेषण का ऑडिट किया जा सकता है - जो पारंपरिक 'ब्लैक बॉक्स' विधियों से मौलिक रूप से उच्चतर है।

जीईई के प्रमुख उपयोग-क्षेत्र

जल निकाय-मानचित्रण एवं जल आवरण परिवर्तन

जीईई जल संसाधनों के स्थानिक एवं समयगत विश्लेषण के लिए एक अत्यंत प्रभावी क्लाउड-आधारित भू-स्थानिक प्लेटफ़ॉर्म है। यह बहु-स्रोत उपग्रह डेटासेट का उपयोग करके नदियों, झीलों, जलाशयों, आर्द्रभूमियों तथा तटीय जल निकायों के विस्तार में होने वाले परिवर्तनों का तीव्र एवं सटीक विश्लेषण करने में सक्षम है। जीईई में उपलब्ध विशाल उपग्रह अभिलेखागार और समानांतर प्रोसेसिंग क्षमता के कारण बहुवर्षीय तथा बहु-मौसमी जल आवरण परिवर्तन का अध्ययन कुछ ही मिनटों में किया जा सकता है। जल निकायों की पहचान के लिए सामान्यतः सामान्यीकृत अंतर जल सूचकांक, संशोधित सामान्यीकृत अंतर जल सूचकांक, स्वचालित जल निष्कर्षण सूचकांक जैसे स्पेक्ट्रल सूचकांकों का उपयोग किया जाता है, जिनके माध्यम से जल एवं गैर-जल क्षेत्रों का स्वचालित वर्गीकरण संभव होता है। उदाहरणस्वरूप, सेंटिनल-2 (10 मी. स्थानिक विभेदन) आधारित अर्ध-स्वचालित तकनीक का उपयोग करके छोटे जलाशयों एवं तालाबों का मानचित्रण तथा विभिन्न वर्षों में उनके जल क्षेत्रफल में होने वाले परिवर्तनों का सटीक आकलन किया जा सकता है।

मत्स्य आवास की पहचान एवं मानचित्रण

मत्स्य संसाधनों के संरक्षण एवं सतत प्रबंधन के लिए उपयुक्त आवास की पहचान अत्यंत आवश्यक है, और गूगल अर्थ इंजन इस कार्य के लिए एक प्रभावशाली मंच प्रदान करता है। जीईई विभिन्न उपग्रह चित्रों, स्थलाकृतिक एवं पर्यावरणीय डेटा का एकीकृत विश्लेषण कर नदियों, झीलों, आर्द्रभूमियों, मैंग्रोव, समुद्री तटीय क्षेत्रों तथा प्रवाल भित्तियों जैसे महत्वपूर्ण मत्स्य आवासों का स्थानिक मानचित्रण करने में सक्षम है। यह सामान्यीकृत अंतर वनस्पति सूचकांक, उन्नत वनस्पति सूचकांक तथा अन्य वनस्पति एवं जल सूचकांकों के माध्यम से जलीय वनस्पति, तटीय वनस्पति एवं आवासीय गुणवत्ता का मूल्यांकन करता है। इसके अतिरिक्त, नदी के गहरे जल क्षेत्र , संभावित प्रजनन स्थल, पोषण स्थल तथा प्रवासन मार्गों की पहचान भी सुदूर संवेदन डेटा के माध्यम से की जा सकती है।

पर्यावरणीय संकेतकों की निगरानी

मत्स्य संसाधनों का वितरण एवं उत्पादकता जल की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक परिस्थितियों से गहराई से प्रभावित होती है। गूगल अर्थ इंजन विभिन्न उपग्रह-आधारित पर्यावरणीय संकेतकों की सतत निगरानी कर मत्स्य आवास की गुणवत्ता एवं संभावित उत्पादकता का मूल्यांकन करने में सहायता करता है। समुद्री एवं अंतर्देशीय जल निकायों के लिए समुद्र की सतह का तापमान, क्लोरोफिल-ए, आविलता, कुल निलंबित ठोस पदार्थ तथा रंगीन घुलित कार्बनिक पदार्थ जैसे मापदंडों का विश्लेषण मोदिस, सेंटिनल -3 तथा अन्य उपग्रह मिशनों के माध्यम से किया जाता है। इन संकेतकों के आधार पर प्राथमिक उत्पादकता, प्लवक की उपलब्धता तथा पोषक तत्वों की स्थिति का अप्रत्यक्ष आकलन संभव होता है, जो मछलियों की उपस्थिति एवं घनत्व के महत्वपूर्ण संकेतक हैं।

मछली वितरण मॉडलिंग एवं संभावित मत्स्य क्षेत्र पूर्वानुमान

गूगल अर्थ इंजन सुदूर संवेदन आधारित पर्यावरणीय चरों को सांख्यिकीय एवं मशीन लर्निंग तकनीकों के साथ एकीकृत कर मछली वितरण तथा आवास उपयुक्तता का पूर्वानुमान लगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जीईई के

माध्यम से समुद्र की सतह का तापमान, क्लोरोफिल-ए, एनडीडब्ल्यूआई, बैथिमेट्री, खारापन, आविलता तथा अन्य पर्यावरणीय डेटा को एकीकृत कर प्रजाति वितरण मॉडल (एस डी एम्), पर्यावास उपयुक्तता मॉडल (एच एस एम), अधिकतम एन्ट्रॉपी (मैक्स Ent), बेतरतीब जंगल तथा अन्य कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित मॉडल विकसित किए जा सकते हैं। इन मॉडलों के माध्यम से विभिन्न मछली प्रजातियों के संभावित वितरण क्षेत्रों, प्रजनन स्थलों तथा संभावित मत्स्य क्षेत्रों का स्थानिक पूर्वानुमान तैयार किया जाता है। यह तकनीक जलवायु परिवर्तन, मौसमी परिवर्तन तथा पर्यावरणीय बदलावों के प्रभाव का विश्लेषण करने में भी सहायक है।

भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण मानचित्रण

भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण मानचित्रण पृथ्वी की सतह पर विभिन्न प्राकृतिक एवं मानव-निर्मित आवरणों, जैसे वन, कृषि भूमि, जल निकाय, घासभूमि, नगरीय क्षेत्र तथा बंजर भूमि के स्थानिक वितरण एवं समय के साथ होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करने की एक महत्वपूर्ण भू-स्थानिक तकनीक है। गूगल अर्थ इंजन इस कार्य के लिए एक अत्यंत प्रभावी क्लाउड-आधारित मंच उपलब्ध कराता है, जहाँ विभिन्न उपग्रह डेटासेट का उपयोग करके बड़े भौगोलिक क्षेत्रों का तीव्र एवं सटीक विश्लेषण किया जा सकता है। जीईई की समानांतर प्रोसेसिंग क्षमता एवं विशाल उपग्रह अभिलेखागार के कारण बहुवर्षीय भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तन का अध्ययन बिना स्थानीय उच्च-क्षमता वाले कंप्यूटर के संभव हो जाता है। भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण मानचित्रण में उपग्रह चित्रों का पूर्व-प्रसंस्करण, जैसे क्लाउड मास्किंग, वायुमंडलीय सुधार तथा इमेज कंपोजिट किया जाता है। इसके बाद स्पेक्ट्रल बैंड, वनस्पति एवं जल सूचकांक तथा अन्य भू-स्थानिक चर का उपयोग करके विभिन्न भूमि आवरण वर्गों का वर्गीकरण किया जाता है। जीईई में पर्यवेक्षित वर्गीकरण (जैसे बेतरतीब जंगल, सपोर्ट वेक्टर मशीन, कार्ट) तथा अनपर्यवेक्षित वर्गीकरण (जैसे K-Means) जैसी उन्नत मशीन लर्निंग तकनीकों का उपयोग कर उच्च सटीकता वाले भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण के मानचित्र तैयार किए जा सकते हैं।

गूगल अर्थ इंजन मत्स्य संसाधन प्रबंधन में एक अत्यंत उपयोगी, तेज़ और किफायती भू-स्थानिक मंच है. यह जल निकायों के मानचित्रण, आवास पहचान, जल गुणवत्ता निगरानी, मछली वितरण मॉडलिंग और भूमि उपयोग-भूमि आवरण विश्लेषण में सटीक परिणाम प्रदान करता है. इसकी क्लाउड-आधारित संरचना बड़े उपग्रह आँकड़ों को बिना डाउनलोड किए संसाधित करने की सुविधा देती है, जिससे समय, श्रम और संसाधनों की बचत होती है. जीईई की मदद से वैज्ञानिक दीर्घकालिक पर्यावरणीय परिवर्तनों को समझकर बेहतर संरक्षण रणनीतियाँ बना सकते हैं. नीति-निर्माताओं के लिए भी यह साक्ष्य-आधारित निर्णय लेने में सहायक है. इस प्रकार, भविष्य में सतत मत्स्य प्रबंधन और जलीय पारिस्थितिकी संरक्षण में जीईई की भूमिका और भी अधिक महत्वपूर्ण होगी ।

"हिंदी का काम देश का काम है, समूचे राष्ट्रनिर्माण का प्रश्न है।"

- बाबूराम सक्सेना

चिनाब नदी का जलीय पारिस्थितिकी तंत्र: मत्स्य जैव विविधता और संरक्षण के आयाम

जसप्रीत सिंह, रजनी चन्द्रन, मोनिका गुप्ता, अमित सिंह बिष्ट, देव नारायण एवं राजीव कुमार सिंह

भाकृअनुप – राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

यह लेख चिनाब नदी के जलीय पारिस्थितिकी तंत्र, उसकी समृद्ध जैव विविधता और मौजूदा खतरों का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। हिमालय की ऊंचाई से निकलने वाली यह नदी 'स्नो ट्राउट' और 'गोल्डन महशीर' जैसी विशिष्ट स्थानिक मछलियों के साथ-साथ सूक्ष्म जीवों और जलीय वनस्पतियों का प्रमुख प्राकृतिक आवास है। वर्तमान में, बड़े जलविद्युत बांधों (आवास विखंडन), जलवायु परिवर्तन, माइक्रोप्लास्टिक्स व भारी धातु प्रदूषण, तथा अत्यधिक मछली पकड़ने के कारण इस संवेदनशील पारिस्थितिकी तंत्र पर गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए ठोस संरक्षण रणनीतिया जैसे प्राकृतिक आवासों की बहाली, एक्स-सीटू संरक्षण, समुदाय-आधारित मत्स्य पालन, जीआईएस के माध्यम से प्रजनन स्थलों की मैपिंग और पारिस्थितिक जोखिम सूचकांकों की कड़ी निगरानी शामिल है। निष्कर्षतः, जलीय जीवन को बचाने के लिए बुनियादी ढांचे के विकास और पारिस्थितिक संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करना अत्यंत आवश्यक है।

भारत और पाकिस्तान के बीच बहने वाली चिनाब नदी, सिंधु जल प्रणाली की सबसे प्रमुख और विशाल नदियों में से एक है। वैदिक साहित्य में इसे 'असिन्की' के नाम से भी जाना जाता था। इसका उद्गम, प्रवाह और इसके बेसिन की जैव विविधता न केवल पारिस्थितिक दृष्टिकोण से, बल्कि लाखों लोगों की आजीविका के लिए भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। चिनाब नदी का उद्गम हिमाचल प्रदेश के लाहौल और स्पीति जिले में बारालाचा-ला दर्रे के पास से होता है। यह दर्रा समुद्र तल से लगभग 4,890 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। मुख्यतः इस नदी का निर्माण दो मुख्य धाराओं 'चंद्रा' और 'भागा' के मिलने से होता है। ये दोनों धाराएं हिमाचल प्रदेश के 'टांडी' नामक स्थान पर मिलती हैं, जिसके बाद इसे चन्द्रभागा और चिनाब कहा जाता है। इस नदी की कुल लंबाई लगभग 974 किलोमीटर है। भारत में यह नदी मुख्य रूप से हिमाचल प्रदेश (लाहौल-स्पीति और चंबा-पांगी घाटी) और जम्मू-कश्मीर (किश्तवाड़, डोडा, रामबन, रियासी, उधमपुर और अखनूर) से होकर बहती है। हिमाचल में इसका प्रवाह लगभग 130 किमी और जम्मू-कश्मीर में लगभग 504 किमी है, जिसके बाद यह पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में प्रवेश कर जाती है। पाकिस्तान में यह नदी झेलम और रावी नदियों को अपने में समाहित करते हुए, अंततः उच शरीफ (बहावलपुर) के पास सतलुज नदी में मिल जाती है, और 'पंजनद' का निर्माण करती है, जो आगे जाकर सिंधु नदी में विलीन हो जाती है। बाएं किनारे पर इसकी प्रमुख सहायक नदियाँ मरुसुदर, मियार नाला, अंस तथा बाएं किनारे पर तवी, नीरू, और चंद्रा है। भारत 'रन-ऑफ़-द-रिवर' तकनीक का उपयोग करके कई बड़े जलविद्युत प्रोजेक्ट चिनाब नदी पर संचालित करता है:

- सलाल बांध : रियासी जिले में स्थित।
- बगलिहार बांध : रामबन जिले में।
- दुलहस्ती परियोजना : किश्तवाड़ में स्थित।
- पाकल दुल और रैटल जलविद्युत परियोजना: ये किश्तवाड़ जिले में निर्माणाधीन/प्रस्तावित प्रमुख प्रोजेक्ट हैं।

यद्यपि चिनाब बेसिन के पहाड़ी क्षेत्रों (जैसे लाहौल और स्पीति) में जनसंख्या घनत्व काफी कम है, लेकिन जैसे-जैसे नदी मैदानी इलाकों (जम्मू के अखनूर और पाकिस्तान के पंजाब प्रांत) में प्रवेश करती है, लाखों लोगों की आजीविका इस पर निर्भर हो जाती है। भारत के जम्मू क्षेत्र में रणबीर और प्रताप नहरें सिंचाई का मुख्य साधन हैं। वहीं, पाकिस्तान के पंजाब प्रांत (जिसे देश की 'ब्रेडबास्केट' कहा जाता है) की लगभग 70-80% कृषि भूमि सीधे तौर पर चिनाब नदी के पानी और नहरों पर निर्भर है। इस नदी का जल पीने, कृषि और बिजली उत्पादन के लिए दोनों देशों की एक बहुत बड़ी आबादी (करोड़ों लोगों) की जीवनरेखा है।



चित्र 1: चिनाब नदी की पारिस्थितिकी अ) उद्गम स्थान के पास चिनाब नदी ब) अखनूर मे चिनाब नदी स) चिनाब पर उपस्थित सलाल बांध

जलीय जैव विविधता

हिमालय की बर्फीली चोटियों से निकलकर मैदानी इलाकों तक बहने वाली चिनाब नदी केवल एक विशाल जलस्रोत नहीं है, बल्कि यह एक जटिल और अत्यंत संवेदनशील जलीय पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करती है। समुद्र तल से लगभग 4,890 मीटर की ऊंचाई से शुरू होने वाली इस नदी का ठंडा पानी, तेज़ प्रवाह और पथरीला तल जलीय जीवों के लिए एक विशिष्ट आवास प्रदान करता है। जलीय पारिस्थितिकी और मत्स्य जैव विविधता के दृष्टिकोण से चिनाब नदी का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है। चिनाब का ठंडा जल मुख्य रूप से हिमालयी स्थानिक प्रजातियों का घर है। इस नदी में मछलियों का वितरण जल की गुणवत्ता, घुलनशील ऑक्सीजन, और तलछट की प्रकृति पर अत्यधिक निर्भर करता है।इन परिस्थितियों मे, मछलियों ने ठंडे, तेज़ बहाव वाले पानी में जीवित रहने के लिए शारीरिक रूप से कई विशेष अनुकूलन किए हैं। इनके शरीर पर शल्क बहुत कम या बिल्कुल नहीं होते हैं जिससे पानी का घर्षण कम होता है। इनका शरीर धारारेखीय होता है और इनके पेट के पंख इतने मजबूत होते हैं कि ये तेज़ बहाव में भी चट्टानों से आसानी से चिपकी रह सकती हैं। ठंडे पानी के पारिस्थितिकी तंत्र की सबसे प्रमुख और पारिस्थितिक रूप से महत्वपूर्ण प्रजाति स्नो ट्राउट है। यह प्रजाति ठंडे और तेज़ बहाव वाले पानी के अत्यधिक अनुकूल होती है और हिमालयी नदियों के स्वास्थ्य की एक प्रमुख संकेतक मानी जाती है। नदी में सिप्रिनिडे परिवार की मछलियों की बहुतायत है। नदी के ऊपरी हिस्सों में जहाँ ठंडे पानी की प्रजातियाँ पाई जाती हैं, वहीं निचले और अपेक्षाकृत गर्म हिस्सों में गोल्डन महशीर और विभिन्न प्रकार की कैटफ़िश ओर अन्य प्रजातियाँ पाई जाती हैं।

चिनाब नदी मे पाए जानी वाली मुख्य स्थानिक एवं विदेशज मत्स्य प्रजातियाँ

परिवार	प्रजाति नाम	सामान्य नाम
स्थानिक प्रजातियाँ		
सिप्रिनिडे	*साईज़ोथोरैक्स रिचर्डसोनी*	स्नो ट्राउट
	साईज़ोथोरैक्स प्लेजियोस्टोमस	स्नो ट्राउट
	साईज़ोथोरैक्स एसोसिनस	स्नो ट्राउट
	साईज़ोथोरैक्स लैबियाटस	स्नो ट्राउट
	टोर पुटिटोरा	*गोल्डन महशीर*
	लेबियो रोहिता	रोहू
	सिरहिनस मृगला	*मृगल*
	कैबडिओ मोरार	मोरारी
	एम्ब्लीफैरिंगोडोन मोला	मोला
	बैरिलियस बेन्डेलिसिस	भरेली
	बैरिलियस स्पी .	भरेली
सिसोरिडे	*ग्लाइप्टोस्टर्नम रेटिकुलटम*	हिमालयी कैटफिश
	बगारियस बगारियस	गूँच
बगरिडे	*मिस्टस ब्लीकरी*	मिस्टस
चन्नाइडे	*चन्ना पंक्टाटा*	स्पॉटेड स्नेकहेड
	चन्ना गचुआ	
चंडिडे	*चंदा नामा*	ग्लास फिश
बेलोंटिडीए	*कोलिसा फासिआटा ओ*	बैंडेड गौरामी
	कोलिसा ललिया	ड्वार्फ गौरामी
विदेशज प्रजातियाँ		
सिप्रिनिडे	*साइप्रिनस कार्पियो*	*कॉमन कार्प*
	टेनोफैरिंगोडोन इडेला	*ग्रास कार्प*
	हाइपोफ्थाल्मिकथिस मोलिट्रिक्स	*सिल्वर कार्प*
सीचीलीडे	*ओरियोक्रोमिस निलोटिकस*	*नाइल तिलापिया*
	ओरियोक्रोमिस मोसाम्बिकस	*तिलापिया*
सैलमोनिडे	*ओंकोरहिन्चस मायकिस*	रेनबो ट्राउट
	साल्मो ट्रुटा फ़ारियो	ब्राउन ट्राउट

अन्य जलीय जीव

खाद्य श्रृंखला में ऊर्जा के ट्रॉफिक ट्रांसफर के लिए ये सूक्ष्म जीव अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं, विशेषकर मछलियों (जैसे स्नो ट्राउट और महशीर) के भोजन के रूप में:

मैक्रो-ज़ूबेंथोस

नदी के चट्टानी और तेज़ बहाव वाले क्षेत्रों में जलीय कीड़े पाए जाते हैं:

- एफेमेरोप्टेरा (Mayflies): इनकी प्रचुरता नदी के स्वच्छ और ऑक्सीजन युक्त पानी का संकेत देती है।
- ट्राइकोप्टेरा (Caddisflies) और प्लेक्टोप्टेरा (Stoneflies) के निम्फ भी ऊपरी ठंडे क्षेत्रों में पाए जाते हैं।

ज़ूप्लैंकटन

निचले और शांत जल वाले क्षेत्रों में सूक्ष्म जीवों की उच्च विविधता होती है:

- रोटीफेरा: कई प्रजातियां, जो पानी की गुणवत्ता और पोषक तत्वों की स्थिति दर्शाती हैं।
- कोपेपोडा: *ओस्फ्रैंटिकम लैब्रोनेक्टम*
- क्लैडोसेरा: *अलोना रेक्टेंगुला, बोस्मिना लोंगिरोस्ट्रिस*
- ओस्ट्राकोडा: *साइक्लोसाइप्रिस ग्लोबोसा*
- प्रोटोज़ोआ: *आर्सेला आर्टोक्राई*

जलीय वनस्पतियाँ

नदी की वनस्पतियों में मुख्य रूप से फाइटोप्लैंकटन, पेरीफाइटन - चट्टानों पर उगी काई, और किनारों पर पाए जाने वाले मैक्रोफाइट्स शामिल हैं:

फाइटोप्लैंकटन और एल्गी

- **बैसिलेरियोफाइसी:** ये नदी के बेसिन में सबसे प्रमुख हैं और जल गुणवत्ता के उत्कृष्ट जैविक संकेतक माने जाते हैं। प्रमुख जेनेरा: *एक्नांथेस, एम्फोरा ओवलिस, सिंबेला सिस्टुला, सिंबेला ट्युमिडा, कोकोनिस प्लेसेंटुला, डायटोमा वल्गारे, फ्रैगिलेरिया, गोमफोनिमा*
- **क्लोरोफाइसी :** *क्लोरेला, कॉस्मेरियम, क्लोस्टेरियम, स्टिजिओक्लोनियम, यूलोथ्रिक्स, ज़ाइग्नेमा*
- **साइनोफाइसी :** *अनाबेना, लिंग्ब्या, ऑसिलेटोरिया टेनुइस, रिवुलेरिया*

मैक्रोफाइट्स

नदी के किनारों और उथले क्षेत्रों में मुख्य रूप से पोएसी और एस्टेरेसी परिवार की जलीय और अर्ध-जलीय वनस्पतियाँ पाई जाती हैं।

बदलते परिवेश में जलीय जीवन पर उभरते खतरे

वर्तमान में, चिनाब नदी का पारिस्थितिकी तंत्र कई प्राकृतिक और मानव-जनित दबावों का सामना कर रहा है, जो इसकी जैव विविधता के लिए गंभीर संकट पैदा कर रहे हैं:

जलविद्युत परियोजनाएं और आवास विखंडन: नदियों पर बनने वाले बड़े बांधों और बैराजों के कारण नदियों का प्राकृतिक जुड़ाव टूट रहा है। इससे मछलियों के प्रजनन के लिए होने वाले प्राकृतिक प्रवास में गंभीर बाधा आती है।

अत्यधिक मछली पकड़ना : अवैध और विनाशकारी तरीकों से मछली पकड़ने के कारण स्नो ट्राउट की आबादी में लगातार कमी आ रही है।

सूक्ष्म प्लास्टिक और जल प्रदूषण: नदियों के जल और तलछट में माइक्रोप्लास्टिक्स का बढ़ता स्तर एक गंभीर चिंता का विषय है। ये सूक्ष्म कण जलीय जीवों की खाद्य श्रृंखला में

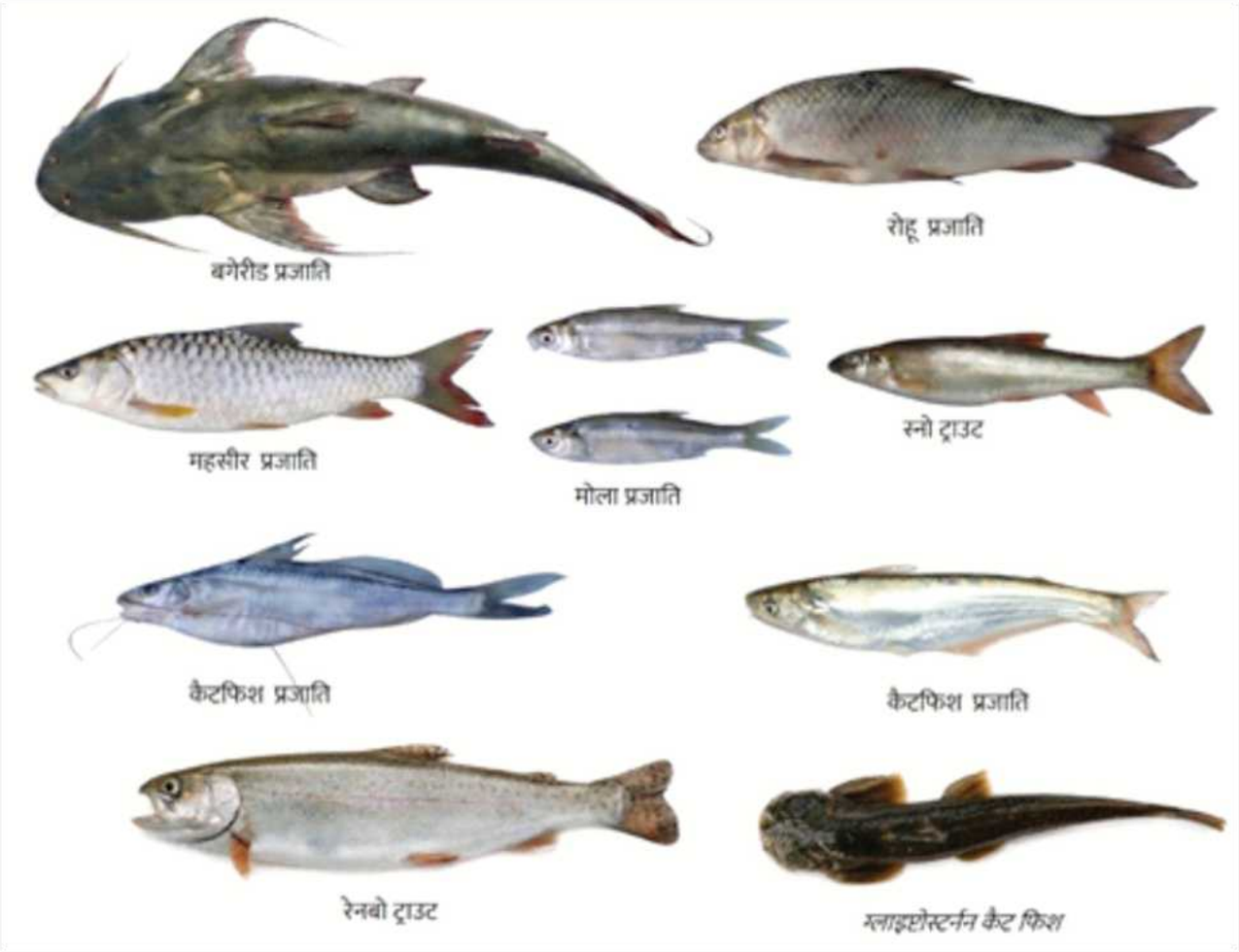

चित्र 2 चिनाब नदी मे पाए जानी वाली कुछ मत्स्य प्रजातियाँ

प्रवेश कर रहे हैं। मछलियों में माइक्रोप्लास्टिक्स का 'ट्रॉफिक ट्रांसफर' उनकी वृद्धि, प्रजनन क्षमता और सम्पूर्ण स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है। इसके साथ ही कृषि अपशिष्ट और औद्योगिक कचरे के कारण नदी में भारी धातुओं का प्रदूषण भी पारिस्थितिक जोखिम को बढ़ा रहा है और पानी की गुणवत्ता तेज़ी से गिर रही है। इस प्रदूषण का सीधा असर मछलियों के प्रजनन और उनके जीवित रहने की क्षमता पर पड़ रहा है।

जलवायु परिवर्तन और ग्लेशियरों का पिघलना: तापमान में वृद्धि के कारण हिमालयी ग्लेशियर तेज़ी से पिघल रहे हैं, जिससे नदी के जल प्रवाह में भारी बदलाव आ रहे हैं। पानी के तापमान में मामूली वृद्धि भी ठंडे पानी की प्रजातियों, विशेषकर स्नो ट्राउट के लिए सीधा खतरा है। इसके अलावा, अचानक आने वाली बाढ़ मछलियों के प्राकृतिक आवासों और उनके अंडों को नष्ट कर देती है।

विदेशी प्रजातियों का खतरा: इन जलीय प्रणालियों में विदेशी मछलियों के आ जाने से भोजन और आवास के लिए भारी प्रतिस्पर्धा पैदा हो गई है, जिससे मूल स्नो ट्राउट मछलियों के अस्तित्व पर संकट मंडरा रहा है।

संरक्षण की प्रमुख चुनौतियां एवं मुख्य रणनीतियां

हाल के वर्षों में चिनाब जैसी नदियों के पारिस्थितिकी तंत्र को कई गंभीर खतरों का सामना करना पड़ रहा है, जो सीधे तौर पर स्नो ट्राउट और अन्य मछलियों के जीवन चक्र को प्रभावित कर रहे हैं। इस अनमोल जैव विविधता और चिनाब बेसिन के जलीय जीवों को बचाने के लिए ठोस और विज्ञान-आधारित कदम उठाने की आवश्यकता है:

- **प्राकृतिक आवास की बहाली:** नदियों के पारिस्थितिकी तंत्र को बचाने के लिए प्राकृतिक आवासों की बहाली करना अत्यंत आवश्यक है।
- **एक्स-सीटू संरक्षण:** विलुप्त होने की कगार पर खड़ी प्रजातियों को बचाने के लिए लाइव जीन बैंक और क्रायोप्रिजर्वेशन जैसी उन्नत तकनीक अपनाकर इनके अनुवांशिक गुणों को संरक्षित किया जाना चाहिए।
- **समुदाय आधारित मत्स्य पालन:** स्थानीय पर्वतीय समुदायों को संरक्षण से जोड़ना सबसे महत्वपूर्ण कदम है। समुदाय द्वारा लागू किए गए स्थायी मत्स्य पालन नियमों के ज़रिए अत्यधिक दोहन को रोका जा सकता है।
- **जीआईएस आधारित आवास अध्ययन:** भौगोलिक सूचना प्रणाली का उपयोग करके नदी बेसिन में मछलियों के महत्वपूर्ण प्रजनन स्थलों और अनुकूल आवासों की सटीक मैपिंग की जा सकती है। इससे नदी के किनारे विशिष्ट संरक्षण क्षेत्रों को चिन्हित करने में मदद मिलती है।
- **पारिस्थितिक जोखिम सूचकांक की निगरानी:** जल और तलछट में प्रदूषण के स्तर को मापने के लिए नियमित डेटा विश्लेषण आवश्यक है। माइक्रोप्लास्टिक्स और अन्य प्रदूषकों के प्रभाव को कम करने के लिए कड़े नीतियां लागू की जानी चाहिए।

चिनाब नदी हिमालयी पारिस्थितिकी का एक जीवंत हिस्सा है। बुनियादी ढांचे के विकास और ऊर्जा की आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ नदी के पारिस्थितिक स्वास्थ्य को बनाए रखना आज के समय की सबसे बड़ी चुनौती है। जीआईएस आधारित सटीक वैज्ञानिक प्रबंधन और सूक्ष्म प्रदूषकों पर नियंत्रण के माध्यम से ही हम स्नो ट्राउट जैसी अमूल्य प्रजातियों और इस हिमालयी जीवनरेखा को भविष्य के लिए सुरक्षित रख सकते हैं।

उत्तर प्रदेश की राज्य मछली 'चीतल' (*चिताला चिताला*): संवर्धन, संरक्षण, इतिहास एवं प्रजनन तकनीक

अमित कुमार, राघवेंद्र सिंह, अदित्य कुमार, राजकमल मिश्रा, निकिता वर्मा एवं मोनिका गुप्ता

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

परिचय

जलीय जैव-विविधता किसी भी देश या राज्य के पारिस्थितिकी तंत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होती है। उत्तर प्रदेश, जो अपनी समृद्ध नदी प्रणालियों जैसे गंगा, यमुना, घाघरा और गोमती के लिए जाना जाता है, ने अपनी इसी जलीय धरोहर को संजोने के लिए 'चीतल' मछली को आधिकारिक तौर पर राजकीय मछली घोषित किया है। चीतल न केवल अपनी अनूठी शारीरिक बनावट के लिए जानी जाती है, बल्कि यह नदियों के स्वास्थ्य और स्वच्छता की भी एक प्रमुख संकेतक है।

नामकरण और वैज्ञानिक वर्गीकरण

वैज्ञानिक नाम: चिताला चिताला

सामान्य नाम: चीतल, चितला

अंग्रेजी नाम: हम्प्ड फेदरबैक

वर्गीकरण: यह 'नोटोप्टेरिडे' परिवार से संबंधित है, जिन्हें आमतौर पर उनकी पतली और लंबी पूंछ के कारण 'फेदरबैक' कहा जाता है।

शारीरिक बनावट और पहचान

चीतल को नदियों की सबसे सुंदर और अनोखी मछलियों में से एक माना जाता है। इसकी कुछ प्रमुख शारीरिक विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

कूबड़दार शरीर: इसका शरीर पार्श्व रूप से काफी चपटा होता है और पीठ पर एक बड़ा कूबड़ होता है।

रंग और धब्बे: इसके शरीर का ऊपरी हिस्सा चांदी की तरह चमकीला और पीठ का हिस्सा भूरा-चांदी जैसा होता है। इसकी पूंछ के पास शरीर के निचले हिस्से पर सुंदर, गहरे गोल धब्बे होते हैं, जो इसकी सबसे बड़ी पहचान हैं।

पंख: इसका पृष्ठीय पंख बहुत छोटा और पंख के समान होता है, जबकि इसका गुदा पंख अत्यंत लंबा होता है जो पूंछ के पंख से पूरी तरह जुड़ा होता है। यह तरंग जैसी गति करते हुए पानी में आगे और पीछे दोनों तरफ तैर सकती है।

आकार: एक पूर्ण विकसित चीतल लगभग 100 से 120 सेंटीमीटर (1-1.2 मीटर) तक लंबी हो सकती है और इसका वजन 10 से 15 किलोग्राम या उससे अधिक हो सकता है।

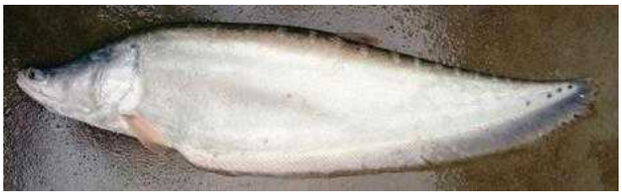

चित्र: चीतल मछली

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं वर्तमान संकट

ऐतिहासिक महत्व और सांस्कृतिक जुड़ाव

ऐतिहासिक रूप से, चीतल भारतीय उपमहाद्वीप की एक अत्यंत प्रतिष्ठित मछली रही है। भारत (विशेषकर उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, असम), बांग्लादेश, नेपाल और पाकिस्तान की प्रमुख नदी प्रणालियों — गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र और सिंधु में यह प्रचुर मात्रा में पाई जाती थी।

उत्तर प्रदेश की अवध और गंगा-जमुना संस्कृति में चीतल को केवल भोजन के रूप में नहीं, बल्कि समृद्धि के प्रतीक के रूप में देखा जाता था। स्वच्छ और गहरे पानी में रहने की इसकी आदत के कारण, नदियों में चीतल की उपस्थिति को जल की शुद्धता का पैमाना माना जाता था। प्राचीन समय में राजा-महाराजाओं और स्थानीय मछुआरों के बीच इसके शिकार और स्वाद को लेकर विशेष चर्चाएं होती थीं, क्योंकि इसका मांस बेहद स्वादिष्ट और पौष्टिक माना जाता है।

वर्तमान स्थिति और संकट के कारण

पिछले तीन से चार दशकों में, मानवीय गतिविधियों और पर्यावरणीय बदलावों के कारण चीतल की आबादी पर गहरा संकट मंडरा रहा है। अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ ने इसे अपनी रेड लिस्ट में 'संकट निकट' की श्रेणी में रखा है। कुछ क्षेत्रों में यह विलुप्त होने की कगार पर पहुंच चुकी है।

इस भारी गिरावट के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं:

- **अंधाधुंध और अवैध शिकार**: इसके स्वादिष्ट मांस और बाजार में ऊंची कीमत होने के कारण, मानसून के दौरान (जब यह प्रजनन करती है) भी इसका बड़े पैमाने पर शिकार किया गया।
- **आवास का नष्ट होना**: नदियों पर बांधों और बैराजों के निर्माण के कारण पानी का प्राकृतिक प्रवाह बाधित हुआ है, जिससे इनके प्रजनन स्थल नष्ट हो गए हैं।
- **जल प्रदूषण**: औद्योगिक कचरे, शहरी सीवेज और कृषि में उपयोग होने वाले कीटनाशकों के नदियों में मिलने से पानी की गुणवत्ता खराब हुई है, जो चीतल के अस्तित्व के लिए घातक साबित हो रही है।
- **विदेशी मछलियों का आक्रमण**: नदियों में 'थाई मांगुर' जैसी आक्रामक विदेशी प्रजातियों के आ जाने से चीतल के बच्चों को जीवित रहने में कठिनाई हो रही है।

प्रजनन तकनीक

चीतल के संरक्षण के लिए केवल प्राकृतिक प्रजनन पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है। इसलिए, वैज्ञानिकों और मत्स्य पालन विशेषज्ञों ने इसके कृत्रिम प्रजनन की तकनीक विकसित की है।

प्राकृतिक प्रजनन

समय: चीतल का प्राकृतिक प्रजनन काल मानसून के महीनों (मई से अगस्त) के दौरान होता है।

स्थान: यह नदियों के उन उथले किनारों को चुनती है जहाँ जलीय पौधे, डूबी हुई लकड़ियाँ या पत्थर होते हैं।

पैतृक देखभाल: चीतल में अद्भुत पैतृक देखभाल पाई जाती है। मादा चीतल पत्थरों या लकड़ी के लट्ठों पर चिपचिपे अंडे देती है। इसके बाद, नर चीतल उन अंडों की सुरक्षा की जिम्मेदारी संभालता है। वह अंडों को अन्य शिकारियों से बचाता है और अपने पंखों से पानी हिलाकर अंडों को लगातार ऑक्सीजन पहुँचाता रहता है।

कृत्रिम और नियंत्रित प्रजनन

नदियों में इसकी संख्या बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो जैसी संस्थाओं ने इसकी नियंत्रित प्रजनन तकनीक तैयार की है:

- ब्रूडर का चयन और रखरखाव: सबसे पहले स्वस्थ और परिपक्व नर और मादा चीतल (वजन लगभग 2-4 किलो) को चुना जाता है। इन्हें विशेष तालाबों में उच्च प्रोटीन युक्त आहार देकर तैयार किया जाता है।
- हार्मोनल इंजेक्शन: प्राकृतिक रूप से हैचरी में अंडे न देने के कारण, इन्हें कृत्रिम हार्मोन जैसे Ovaprim या Ovatide का इंजेक्शन दिया जाता है।
- अंडा देना और निषेचन: इंजेक्शन के बाद, इन्हें ब्रीडिंग पूल में छोड़ दिया जाता है, जहाँ पहले से ही अंडों के चिपकने के लिए पीवीसी पाइप या लकड़ी के तख्ते रखे जाते हैं। मादा इन पर अंडे देती है और नर उन्हें निषेचित करता है।
- अंडों का स्फुटन: निषेचित अंडों को विशेष हैचरी जार या फ्लोइंग वाटर सिस्टम में रखा जाता है। लगभग 5 से 7 दिनों (पानी के तापमान के आधार पर) में अंडों से छोटे बच्चे बाहर निकल आते हैं।

संवर्धन, संरक्षण के प्रयास एवं भविष्य की राह

- संवर्धन और तालाबों में पालन

चीतल एक मांसाहारी मछली है, इसलिए इसका एकल पालन थोड़ा कठिन होता है। हालांकि, आधुनिक मत्स्य पालन में इसका सफल संवर्धन किया जा रहा है।

- पॉलीकल्चर: इसे भारतीय प्रमुख कार्प मछलियों (रोहू, कतला, म्रिगल) के साथ पाला जाता है। तालाब में यह कार्प मछलियों को नुकसान नहीं पहुँचाती, बल्कि तालाब में मौजूद अवांछित छोटी जंगली मछलियों, कीड़े-मकोड़ों और मेंढक के बच्चों को खाती है। इससे तालाब का संतुलन बना रहता है।
- पानी के मानक: चीतल पालन के लिए पानी का तापमान



चित्र : 1,2 – चीतल मछली के अंडे देने और आसानी से अंडे इकट्ठा करने के लिए कृत्रिम व्यवस्था; (लोलाई, लखनऊ डिवीजन, उत्तर प्रदेश)
चित्र : 3,4 – पेड़ों की शाखाओं का उपयोग करके आश्रय प्रदान करके कृत्रिम तालाब में चीतल मछली का पालन

26°C से 30°C और pH मान 6 से 8 के बीच होना सबसे उत्तम माना जाता है।

- रिवर रैचिंग – एक क्रांतिकारी कदम

उत्तर प्रदेश सरकार और केंद्रीय मत्स्य पालन मंत्रालय द्वारा 'रिवर रैचिंग' कार्यक्रम चलाया जा रहा है। इसके अंतर्गत हैचरी में वैज्ञानिक विधि से तैयार किए गए चीतल के लाखों फिंगरलिंग्स (मछली के बच्चों) को प्रतिवर्ष गंगा, यमुना और उनकी सहायक नदियों में छोड़ा जाता है।

हाल के वर्षों में वाराणसी, प्रयागराज और लखनऊ में नदियों के विभिन्न घाटों पर बड़े पैमाने पर रिवर रैचिंग की गई है, जिससे नदियों में चीतल की आबादी में सुधार देखा जा रहा है।

[हैचरी में कृत्रिम प्रजनन] —> [फिंगरलिंग्स का विकास] —> [रिवर रैचिंग (नदियों में छोड़ना)] —> [पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन]

भविष्य की राह और सुझाव

चीतल का संरक्षण केवल सरकार के प्रयासों से संभव नहीं है, इसके लिए जन-भागीदारी आवश्यक है:

- मछुआरों में जागरूकता: प्रजनन काल (मई-अगस्त) के दौरान चीतल के शिकार पर पूर्ण प्रतिबंध का कड़ाई से पालन होना चाहिए। मछुआरों को जागरूक किया जाना चाहिए कि यदि जाल में अंडों से भरी चीतल आए, तो उसे वापस नदी में छोड़ दें।
- आवास का संरक्षण: नदियों के उन हिस्सों को 'संरक्षित क्षेत्र' घोषित किया जाना चाहिए जहाँ चीतल प्राकृतिक रूप से अंडे देती है।
- प्रदूषण पर नियंत्रण: नदियों में गिरने वाले औद्योगिक अपशिष्टों पर कड़ा नियंत्रण लगाना बेहद जरूरी है।

चीतल उत्तर प्रदेश का राजकीय गौरव है। इसका संवर्धन और संरक्षण न केवल हमारी जलीय जैव-विविधता को बचाए रखने के लिए जरूरी है, बल्कि यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था और मछुआरा समुदाय की आजीविका को सुदृढ़ करने का भी एक बेहतरीन जरिया है। सरकार की 'रिवर रैचिंग' नीति और वैज्ञानिकों की 'कृत्रिम प्रजनन' तकनीक के समन्वय से चीतल को विलुप्त होने से बचाया जा सकता है।

सीमित जल में अधिक उत्पादन: बायोफ्लॉक प्रणाली द्वारा उच्च घनत्व में कैटफिश का पालन

राज कमल मिश्रा, वैशाली, आदित्य कुमार, राघवेंद्र सिंह, चंद्रभूषण कुमार एवं मोनिका गुप्ता

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

भारत में बढ़ती जनसंख्या के साथ-साथ पौष्टिक खाद्य पदार्थों की मांग भी तेजी से बढ़ रही है। मत्स्य पालन क्षेत्र इस मांग को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। परंपरागत मत्स्य पालन में अधिक जल, भूमि तथा नियमित जल परिवर्तन की आवश्यकता होती है, जिससे उत्पादन लागत बढ़ जाती है। इन समस्याओं के समाधान के रूप में बायोफ्लॉक तकनीक एक आधुनिक, टिकाऊ एवं पर्यावरण-अनुकूल प्रणाली के रूप में उभरकर सामने आई है। इन समस्याओं के समाधान के रूप में बायोफ्लॉक तकनीक एक उपयुक्त एवं टिकाऊ प्रणाली के रूप में उभरकर सामने आई है। इस तकनीक में लाभकारी सूक्ष्मजीव पानी में उपस्थित हानिकारक अमोनिया को उपयोगी माइक्रोबियल प्रोटीन में परिवर्तित कर देते हैं, जिससे जल गुणवत्ता बेहतर बनी रहती है। साथ ही यह प्रणाली कम जल उपयोग, उच्च घनत्व पालन, कम फीड लागत तथा अधिक उत्पादन की सुविधा प्रदान करती है, जिससे कैटफिश पालन अधिक लाभकारी एवं पर्यावरण-अनुकूल बन जाता है। इस तकनीक का मुख्य सिद्धांत कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात को नियंत्रित करना है। जब पानी में कार्बन स्रोत (जैसे गुड़ या मोलासेस) मिलाया जाता है, तब हेटरोट्रॉफिक बैक्टीरिया तेजी से बढ़ते हैं और हानिकारक अमोनिया को अपने कोशिकीय प्रोटीन में परिवर्तित कर देते हैं। यह प्रणाली पानी की बचत करती है और अपशिष्टको कम करती है, जिससे पर्यावरण पर कम प्रभाव पड़ता है।

उच्च घनत्व कैटफिश पालन का महत्व:

कैटफिश ऐसी प्रजाति है जो कम ऑक्सीजन की स्थिति को अन्य मछलियों की तुलना में अधिक सहन कर सकती है तथा तीव्र वृद्धि करती है। इसकी बाजार मांग भी काफी अधिक रहती है।

उच्च घनत्व पालन के प्रमुख लाभ:

- कम स्थान में अधिक उत्पादन
- पानी की अत्यधिक बचत
- फीड लागत में कमी
- अतिरिक्त प्राकृतिक भोजन की उपलब्धता
- पर्यावरण प्रदूषण में कमी
- अधिक लाभ एवं आय में वृद्धि

बायोफ्लॉक तकनीक की जैविक प्रक्रिया

नाइट्रोजन की समस्या

सघन मत्स्य पालन, जैसे मछली या झींगा पालन में, पानी में नाइट्रोजन का मुख्य स्रोत बचा हुआ फीड तथा जलीय जीवों द्वारा उत्सर्जित अमोनिया होता है। यदि ये नाइट्रोजनयुक्त पदार्थ पानी में अधिक मात्रा में जमा हो जाएं, तो वे मछलियों और अन्य जलीय जीवों के लिए अत्यंत हानिकारक बन जाते हैं।

कार्बन का उपयोग

हानिकारक अमोनिया को उपयोगी जैविक पदार्थ में बदलने के लिए पानी में कार्बन स्रोत मिलाया जाता है। सामान्य कार्बन स्रोत गुड़, गेहूं का आटा, टैपिओका आदि मिलाने से पानी में कार्बन और नाइट्रोजन का अनुपात बढ़ जाता है। महत्वपूर्ण अनुपात: (कार्बन: नाइट्रोजन =10:1 से 20:1) बैक्टीरिया की वृद्धि के लिए उपयुक्त माना जाता है।

बैक्टीरिया द्वारा अवशोषण

हेटरोट्रॉफिक बैक्टीरिया बहुत तेजी से बढ़ते हैं। ये बैक्टीरिया कार्बन को ऊर्जा के रूप में उपयोग करते हैं अमोनिया को नाइट्रोजन स्रोत के रूप में ग्रहण करते हैं इसके

बाद बैक्टीरिया अपने शरीर की नई कोशिकाएं तथा प्रोटीन बनाते हैं। इस प्रक्रिया में पानी में उपस्थित हानिकारक अमोनिया उपयोगी माइक्रोबियल प्रोटीन में बदल जाती है। यही माइक्रोबियल प्रोटीन छोटे-छोटे फ्लॉक के रूप में दिखाई देता है, जिसे मछलियां अतिरिक्त भोजन के रूप में खाती हैं।

सरल रासायनिक प्रक्रिया: नाइट्रोजन + कार्बन = माइक्रोबियल प्रोटीन

बायोफ्लॉक बनाने के लिए आवश्यक सामग्री एवं प्रक्रिया

बायोफ्लॉक बनाने के लिए आवश्यक सामग्री

1. टैंक
2. एयर स्टोन एवं पाइप
3. एयर ब्लोअर या एयर पंप
4. नमक एवं चूना
5. गुड़ या अन्य कार्बन स्रोत
6. प्रोबायोटिक
7. मछली का आहार
8. पानी की जांच करने की किट
9. इन्वर्टर या जनरेटर

बायोफ्लॉक बनाने की प्रक्रिया

सबसे पहले एक उपयुक्त टैंक का चयन किया जाता है, जो सामान्यतः तिरपाल या एफ़. आर. पी. का बना होता है। टैंक अच्छी तरह साफ करके उसमें स्वच्छ एवं क्लोरीन रहित पानी भरा जाता है। यदि नल का पानी उपयोग किया जाए, तो उसे 24–48 घंटे तक छोड़ देना चाहिए ताकि क्लोरीन समाप्त हो जाए। इसके बाद टैंक में एयर ब्लोअर, एयर पाइप और एयर स्टोन की सहायता से एरेशन शुरू किया जाता है। बायोफ्लॉक प्रणाली में लगातार ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है, इसलिए एरेशन 24 घंटे चालू रखना अत्यंत आवश्यक है। पर्याप्त ऑक्सीजन मिलने पर लाभकारी बैक्टीरिया तेजी से विकसित होते हैं।

अब पानी की गुणवत्ता संतुलित करने के लिए नमक (1 ग्राम/ली.) और चूना (100 ग्राम/ली.) मिलाया जाता है। नमक मछलियों को तनाव से बचाने में सहायता करता है, जबकि

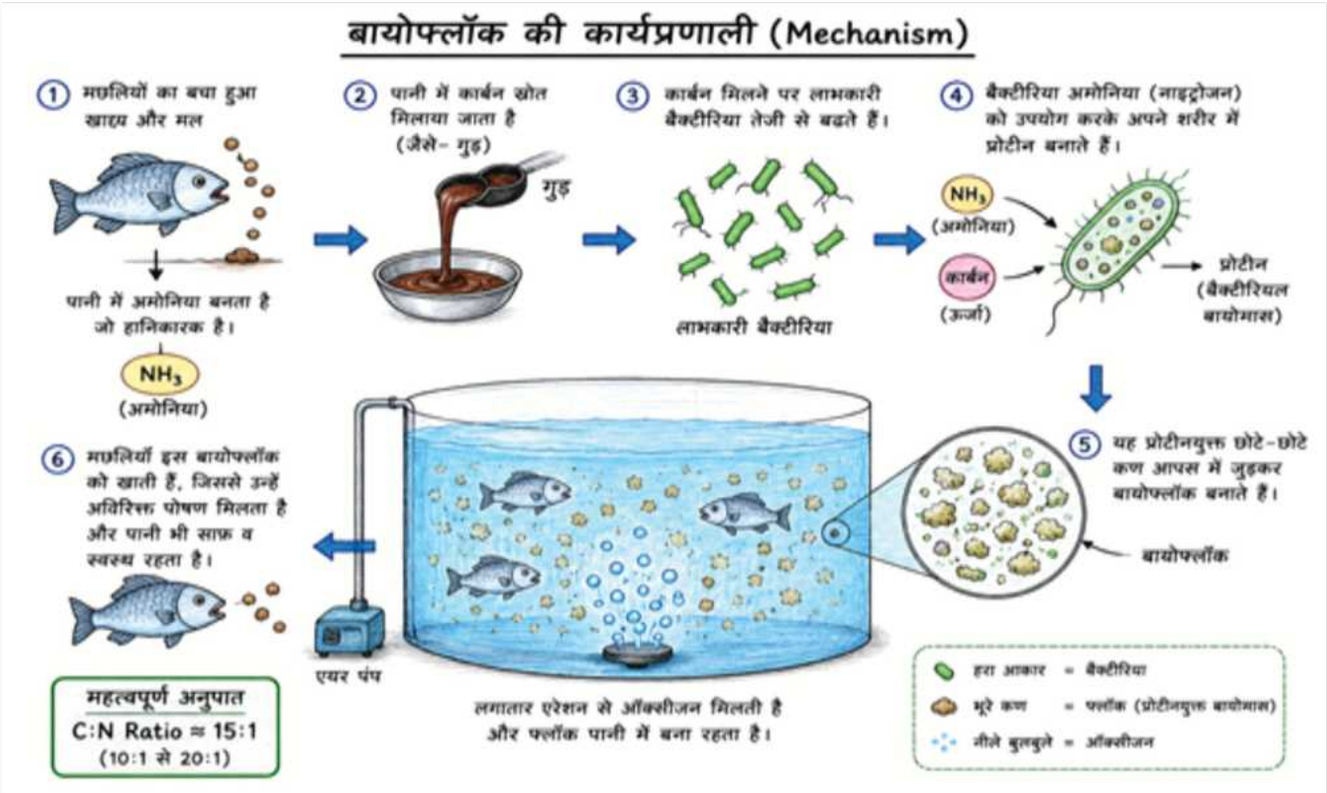

चूना pH को नियंत्रित रखने में मदद करता है। इसके बाद प्रोबायोटिक (40 ग्राम/ली.) या लाभकारी बैक्टीरिया पानी में डाले जाते हैं, जिससे फ्लॉक बनने की प्रक्रिया प्रारंभ होती है। फिर पानी में कार्बन स्रोत, जैसे गुड़, गेहूं का चोकर या टैपिओका पाउडर मिलाया जाता है। कार्बन स्रोत डालने से पानी में कार्बन की मात्रा बढ़ती है, जिससे हेटरोट्रॉफिक बैक्टीरिया तेजी से वृद्धि करते हैं। ये बैक्टीरिया पानी में उपस्थित हानिकारक अमोनिया को अपने विकास के लिए उपयोग करते हैं।

कैटफिश संचयन

फ्लॉक बनने के 7–10 दिन बाद कैटफिश बीज का संचयन किया जाता है। स्वस्थ एवं रोगमुक्त बीज का चयन अत्यंत आवश्यक है। उच्च घनत्व प्रणाली में सामान्यतः अधिक संख्या में बीज संचयित किए जाते हैं, इसलिए जल गुणवत्ता प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक होता है।

स्टॉकिंग डेंसिटी

बायोफ्लॉक प्रणाली में कैटफिश की स्टॉकिंग डेंसिटी पारंपरिक तालाब प्रणाली की तुलना में काफी अधिक रखी जाती है। सामान्यतः 300 से 500 फिंगरलिंग प्रति घन मीटर (m^3) तक संचयन किया जा सकता है। अच्छी एरेशन व्यवस्था एवं जल गुणवत्ता प्रबंधन होने पर कुछ किसान 600–800 फिंगरलिंग प्रति घन मीटर तक भी पालन करते हैं।

अनुशंसित स्टॉकिंग डेंसिटी

1. कम घनत्व : 150–250 फिंगरलिंग/मी.^{3}
2. मध्यम घनत्व : 300–500 फिंगरलिंग/मी.^{3}
3. उच्च घनत्व :600–800 फिंगरलिंग/मी.^{3}

उच्च घनत्व पालन में निरंतर एरेशन, नियमित फ्लॉक मॉनिटरिंग तथा संतुलित फीड प्रबंधन अत्यंत आवश्यक होता है।

संभावित उत्पादन

बायोफ्लॉक प्रणाली में कैटफिश का उत्पादन पारंपरिक प्रणाली की तुलना में कई गुना अधिक प्राप्त किया जा सकता है। सामान्यतः 4–6 महीने की पालन अवधि में 1 घन मीटर पानी से 80–150 किलोग्राम तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है, जबकि बेहतर प्रबंधन एवं उच्च घनत्व प्रणाली में यह उत्पादन 200 किलोग्राम प्रति घन मीटर तक पहुंच सकता है।

अनुमानित उत्पादन क्षमता

1. मध्यम घनत्व : 80–120 कि.ग्रा./मी.^{3}
2. उच्च घनत्व : 120–200 कि.ग्रा./मी.^{3}

उत्पादन कई कारकों पर निर्भर करता है:

- बीज की गुणवत्ता
- फीड प्रबंधन
- एरेशन क्षमता
- जल गुणवत्ता
- रोग नियंत्रण
- कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात
- बायोफ्लॉक टैंक की तैयारी

बायोफ्लॉक प्रणाली में नाइट्रोजन एवं कार्बन की गणना

बायोफ्लॉक प्रणाली में नाइट्रोजन की गणना का मुख्य उद्देश्य पानी में बनने वाले हानिकारक अमोनिया को नियंत्रित करना तथा उचित कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात बनाए रखना है। मछली आहार में प्रोटीन मुख्य नाइट्रोजन स्रोत होता है। प्रोटीन में लगभग 16% नाइट्रोजन होती है। मछलियां फीड प्रोटीन का केवल लगभग 25%–30% उपयोग कर पाती हैं। शेष नाइट्रोजन पानी में अमोनिया के रूप में निकलती है। हानिकारक अमोनिया को नियंत्रित करने के लिए कार्बन स्रोत (गुड़, शीरा आदि) मिलाया जाता है।

उदाहरण

यदि प्रतिदिन 1 किलोग्राम फीड मछलियों को दिया जाता है और फीड में 30% प्रोटीन हो, तो सबसे पहले फीड में उपस्थित कुल प्रोटीन की मात्रा ज्ञात की जाती है।

$$\text{प्रोटीन की मात्रा} = \frac{1000 \times 30}{100} = 300 \text{ ग्राम प्रोटीन}$$

अर्थात 1 किलोग्राम फीड में 300 ग्राम प्रोटीन उपस्थित है। चूंकि प्रोटीन में लगभग 16% नाइट्रोजन होती है, इसलिए कुल नाइट्रोजन की मात्रा होगी :=$\frac{300\times16}{100}$ = 48 ग्राम नाइट्रोजन

अर्थात फीड में कुल 48 ग्राम नाइट्रोजन मौजूद है। यह पूरी नाइट्रोजन पानी में नहीं जाती, क्योंकि मछलियां कुछ नाइट्रोजन अपने शरीर की वृद्धि में उपयोग कर लेती हैं। सामान्यतः लगभग 75% नाइट्रोजन पानी में अपशिष्ट के रूप में निकलती है।

इसलिए: $\frac{48\times75}{100}$ = 36 ग्राम नाइट्रोजन पानी में पहुँचेगा।

बायोफ्लॉक प्रणाली में सामान्यतः कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात (C:N 10:1) रखा जाता है। अर्थात 1 ग्राम नाइट्रोजन को संतुलित करने के लिए 10 ग्राम कार्बन की आवश्यकता होती है।

इसलिए 36 ग्राम नाइट्रोजन के लिए आवश्यक कार्बन होगा : 36 ×10 = 360 ग्राम

यदि प्रतिदिन 1 किलोग्राम फीड दिया जाए तथा उसमें 30% प्रोटीन हो, तो लगभग 36 ग्राम नाइट्रोजन पानी में पहुंचेगा। इस नाइट्रोजन को संतुलित करने के लिए लगभग 360 ग्राम कार्बन स्रोत की आवश्यकता होगी।जिससे कार्बन और नाइट्रोजन का अनुपात संतुलित बना रहेगा।

मछलियों के संचयन के बाद बायोफ्लॉक की निगरानी एवं प्रबंधन

मछलियों के संचयन के बाद उचित रखरखाव करना अत्यंत आवश्यक होता है। सही प्रबंधन से पानी की गुणवत्ता, मछलियों की वृद्धि अच्छी होती है तथा रोगों की संभावना कम हो जाती है।

लगातार एरेशन बनाए रखें

बायोफ्लॉक प्रणाली में लगातार 24 घंटे ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। ऑक्सीजन की कमी होने पर मछलियां तनाव में आ सकती हैं और उनकी वृद्धि प्रभावित हो सकती है।

टैंक के पानी की नियमित जांच करनी चाहिए। मुख्य पैरामीटर हैं:

	पैरामीटर	उपयुक्त सीमा	महत्व
1.	**घुलित ऑक्सीजन (DO)**	5-6 मि.ग्रा./ ली.	बायोफ्लॉक बैक्टीरिया एवं मछलियों के लिए उच्च ऑक्सीजन आवश्यक होती है।
2	**pH**	7.0 – 8.5	pH कम होने पर वृद्धि रुक सकती है तथा अधिक होने पर मछलियों को तनाव होता है।
3	**कुल क्षारीयता**	100 – 150 मि.ग्रा./ली.	pH को स्थिर बनाए रखने में सहायता करती है।
4	**तापमान**	25 – 30°C	बायोफ्लॉक बैक्टीरिया एवं मछलियों की वृद्धि के लिए उपयुक्त।
5	**कुल अमोनिया नाइट्रोजन (TAN)**	0.25 मि.ग्रा./ ली	अधिक अमोनिया मछलियों के लिए विषैला होता है।
6.	**कुल निलंबित ठोस (TSS)**	200 – 500 मि.ग्रा./ली	बैक्टीरिया के विकास हेतु आवश्यक; अधिक मात्रा गलफड़ों को प्रभावित कर सकती है।
7.	**फ्लॉक वॉल्यूम**	15–25 मि.ली./ ली.	उचित फ्लॉक वॉल्यूम यह संकेत देता है कि टैंक में लाभकारी बैक्टीरिया अच्छी तरह कार्य कर रहे हैं।

संतुलित मात्रा में फीड दें

मछलियों को आवश्यकता अनुसार ही भोजन देना चाहिए। अधिक फीड डालने पर बचा हुआ भोजन पानी को खराब कर देता है तथा अमोनिया की मात्रा बढ़ा देता है।

कार्बन स्रोत मिलाते रहें

गुड़, शीरा या अन्य कार्बन स्रोत उचित मात्रा में मिलाते रहना चाहिए ताकि लाभकारी बैक्टीरिया सक्रिय रहें और फ्लॉक निर्माण होता रहे।

फ्लॉक की मात्रा पर निगरानी रखें

फ्लॉक बहुत कम या बहुत अधिक नहीं होना चाहिए। उचित फ्लॉक वॉल्यूम यह संकेत देता है कि टैंक में लाभकारी बैक्टीरिया अच्छी तरह कार्य कर रहे हैं। अत्यधिक फ्लॉक होने पर पानी गाढ़ा हो सकता है और मछलियों को परेशानी हो सकती है।

मछलियों के व्यवहार का निरीक्षण करें

यदि मछलियां: सतह पर आने लगें, भोजन कम खाएं या सुस्त दिखाई दें, तो तुरंत पानी की जांच करनी चाहिए।

अतिरिक्त कचरा निकालें

टैंक के नीचे जमा अतिरिक्त कचरा एवं स्लज समय-समय पर निकालना चाहिए ताकि पानी साफ बना रहे।

बिजली बैकअप रखें

बिजली जाने पर एरेशन बंद हो सकता है, जिससे ऑक्सीजन तेजी से कम हो जाती है। इसलिए इन्वर्टर या जनरेटर की व्यवस्था रखना आवश्यक है।

मछलियों के संचयन के बाद बायोफ्लॉक प्रणाली का सही रखरखाव अत्यंत महत्वपूर्ण है। उचित एरेशन, संतुलित फीड, नियमित जल गुणवत्ता जांच तथा फ्लॉक प्रबंधन से मछलियों की वृद्धि अच्छी होती है और उत्पादन में वृद्धि होती है।

मैं दुनिया की सभी भाषाओं की इज्जत करता हूं पर मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो, यह मैं सह नहीं सकता:

आचार्य विनोबा भावे

हिंदी सिर्फ भाषा नहीं, भारत की आत्मा की अभिव्यक्ति है।

महत्त्वपूर्ण सजावटी मछली: *एच्ट्रोप्लस कैनारेन्सिस*

साईकृष्णन के. आर., रेखा एम. यू., चरण रवि, अभिलाष सी. पी., सारथ वर्गीज़, अम्बिली एम. एन. एवं वी. एस. बशीर

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

सजावटी मछलियाँ केवल घरों के एक्वेरियम की शोभा बढ़ाने वाली जीव नहीं हैं, बल्कि वे वैश्विक व्यापार का एक महत्वपूर्ण और तेजी से विकसित होता क्षेत्र भी हैं। प्रत्यक्ष मछली निर्यात का मूल्य लगभग 379 मिलियन अमेरिकी डॉलर आँका गया है, जबकि उपकरण, फ़ीड और अन्य सामग्री को शामिल करने पर यह उद्योग लगभग 30 बिलियन डॉलर तक पहुँचता है। यह व्यापार ग्रामीण आजीविका को समर्थन देता है, जैव विविधता संरक्षण को बढ़ावा देता है तथा 125 से अधिक देशों को वैश्विक बाज़ार से जोड़ता है। भारत, इंडोनेशिया, श्रीलंका और ब्राज़ील जैसे देश अपनी समृद्ध मीठे पानी की जैव विविधता के आधार पर इस क्षेत्र में योगदान दे रहे हैं। भारत में यद्यपि सजावटी मछलियों का वैश्विक व्यापार में योगदान केवल 0.4–0.6% है, फिर भी पश्चिमी घाट और पूर्वोत्तर राज्यों जैसे जैव विविधता समृद्ध क्षेत्रों में यह क्षेत्र आजीविका और संरक्षण दोनों के लिए अत्यंत संभावनाशील है।

पश्चिमी घाट विश्व के सबसे महत्वपूर्ण जैव विविधता हॉटस्पॉट्स में से एक है। यहाँ अनेक ऐसी प्रजातियाँ पाई जाती हैं जो पृथ्वी पर कहीं और नहीं मिलतीं। परंतु वनों की कटाई, प्रदूषण तथा आवास विनाश के कारण यह क्षेत्र गंभीर दबाव में है। इसी क्षेत्र की एक दुर्लभ और आकर्षक मछली है *एच्ट्रोप्लस कैनारेन्सिस*, जिसे कैनरा पर्लस्पॉट, बैंडेड क्रोमाइड अथवा रोमन न्यूमेरल सिक्लिड कहा जाता है। यह दक्षिण कर्नाटक की स्वच्छ, ऑक्सीजन-समृद्ध और तेज़ प्रवाह वाली धाराओं में पाई जाने वाली एशिया की कुछ मूल सिक्लिड प्रजातियों में से एक है। शांत स्वभाव, सामाजिक व्यवहार और आकर्षक रंगों के कारण यह एक्वेरियम प्रेमियों तथा वैज्ञानिकों दोनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।



जीवविज्ञान और पारिस्थितिक महत्व

एट्रोप्लस कैनारेन्सिस मध्यम आकार की सिक्लिड मछली है, जिसकी लंबाई लगभग 12 सेमी तक होती है। अन्य कई सिक्लिड मछलियों की तुलना में इसका स्वभाव शांत होता है और यह छोटे समूहों में रहना पसंद करती है। यह सर्वाहारी है तथा शैवाल, पौधों के भाग और छोटे अकशेरुकी जीवों को खाती है। इस प्रकार यह शैवाल की वृद्धि को नियंत्रित करने तथा जैविक पदार्थों के पुनर्चक्रण में भूमिका निभाती है, जिससे पारिस्थितिक संतुलन बना रहता है। यह प्रजाति एक महत्वपूर्ण "सूचक प्रजाति" भी मानी जाती है। इसकी उपस्थिति और स्वास्थ्य से उस क्षेत्र के जल पारितंत्र की स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। इसलिए इसका संरक्षण केवल एक मछली की सुरक्षा नहीं, बल्कि पूरे मीठे पानी के पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा से जुड़ा है।

भौगोलिक वितरण और आवास

यह प्रजाति केवल कर्नाटक के नेत्रावती और कुमारधारा नदी तंत्र की ठंडी, स्वच्छ और ऑक्सीजन-समृद्ध धाराओं में पाई जाती है। मानसून के दौरान ये नदियाँ तेज़ और गंदले प्रवाह में बदल जाती हैं, जबकि शुष्क मौसम में जल शांत और साफ़ हो जाता है। इसी अवधि में *एट्रोप्लस कैनारेन्सिस* अधिक सक्रिय और सामान्यतः दिखाई देती है। क्षेत्रीय अवलोकनों में यह मछली उथले, धीमे प्रवाह वाले तथा पत्थरीले क्षेत्रों में पाई गई। जल सामान्यतः थोड़ा अम्लीय (pH लगभग 6.5), मुलायम और अपेक्षाकृत गर्म होता है। यह प्रजाति पत्तियों के कूड़े, डूबे हुए पत्थरों और पेड़ों की जड़ों के बीच निवास करती है, जो भोजन और प्रजनन दोनों के लिए उपयुक्त स्थान प्रदान करते हैं। इसकी पारिस्थितिक विशेषता ही इसकी सबसे बड़ी कमजोरी भी है। सीमित वितरण और



विशिष्ट आवासीय आवश्यकताओं के कारण प्रदूषण, रेत खनन, वनों की कटाई तथा जल प्रवाह में परिवर्तन इसके अस्तित्व के लिए गंभीर खतरे बन चुके हैं।

एक्वेरियम व्यापार और बाज़ार मांग

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर *एच्ट्रोप्लस कैनारेन्सिस* का व्यापार बहुत सीमित रहा है। पिछले दो दशकों में भारत से केवल कुछ सौ मछलियों का निर्यात दर्ज किया गया। वर्ष 2015–2016 के दौरान जर्मनी और सिंगापुर जैसे देशों को लगभग 140 मछलियों का निर्यात हुआ, परंतु 2017 के बाद आधिकारिक निर्यात में तीव्र गिरावट देखी गई। इसका मुख्य कारण संरक्षण संबंधी चिंताएँ, नियमों की कठोरता तथा सीमित प्राकृतिक वितरण है। इसके बावजूद, दुर्लभ और स्थानिक प्रजाति होने के कारण विशेष एक्वेरियम प्रेमियों में इसकी माँग बनी हुई है। यूरोप, दक्षिण-पूर्व एशिया और अमेरिका में सीमित स्तर पर कैप्टिव ब्रीडिंग (बंदी प्रजनन) सफल रही है, जिससे जंगली आबादी पर दबाव कम करने में सहायता मिली है। भारत में घरेलू बाज़ार में इसकी कीमत सामान्यतः ₹100–250 प्रति मछली होती है।

एक्वेरियम में इस प्रजाति को सफलतापूर्वक रखने के लिए इसके प्राकृतिक आवास जैसी परिस्थितियाँ बनानी आवश्यक हैं। टैंक में रेत, महीन कंकड़, चिकने पत्थर और बहता हुआ जल होना चाहिए। तापमान 22–32°C, pH 6.0–7.5 तथा उच्च घुलित ऑक्सीजन स्तर उपयुक्त माने जाते हैं। यह सामाजिक मछली है, इसलिए कम से कम पाँच या अधिक मछलियों के समूह में रखना बेहतर होता है। शांत स्वभाव वाली बार्ब्स और लोच जैसी मछलियाँ इसके साथ रखी जा सकती हैं।

संरक्षण संबंधी महत्व

एच्ट्रोप्लस कैनारेन्सिस अपने निकट संबंधी प्रजातियों (*एच्ट्रोप्लस सुराटेन्सिस* तथा *स्यूडोएट्रोप्लस मैक्युलेटस*) से भिन्न है क्योंकि यह केवल मीठे पानी में जीवित रह सकती है और लवणता सहन नहीं कर पाती। यही विशेषता इसे अत्यधिक संवेदनशील बनाती है। रेत खनन, घरेलू अपशिष्ट, कृषि अपवाह तथा आवास विनाश इसके प्राकृतिक पर्यावरण को लगातार नुकसान पहुँचा रहे हैं। एक समय इसे प्रकृति से विलुप्त माना गया था, परंतु 1990 के दशक में यह पुनः खोजी



एच्ट्रोप्लस कैनारेन्सिस



एच्ट्रोप्लस सुराटेन्सिस



स्यूडोएट्रोप्लस मैक्युलेटस

गई। वर्तमान में इसे अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ (आईयूसीएन) की रेड लिस्ट में "संकटग्रस्त" (Endangered) श्रेणी में रखा गया है। वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि इसकी अलग-अलग आबादियों में आनुवंशिक विविधता कम है, जो दीर्घकालिक अस्तित्व के लिए चिंता का विषय है। जनसंख्या में गिरावट के संकेत बताते हैं कि अत्यधिक दोहन और आवास क्षरण इसके मुख्य कारण हैं।

संरक्षण में एक्वेरियम प्रेमी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। केवल कैप्टिव-ब्रीड मछलियों का उपयोग करना, जंगली नमूनों से बचना तथा घरेलू स्तर पर प्रजनन कार्यक्रम विकसित करना संरक्षण में सहायक हो सकता है। साथ ही, इस प्रजाति के पारिस्थितिक महत्व के प्रति जागरूकता बढ़ाकर सजावटी मछली व्यापार को संरक्षण का सहयोगी बनाया जा सकता है।

एच्ट्रोप्लस कैनारेन्सिस केवल एक सुंदर सजावटी मछली नहीं, बल्कि पश्चिमी घाट की अनमोल जैव विविधता का प्रतीक है। इसकी उपस्थिति भारत के मीठे पानी के पारिस्थितिक तंत्र की समृद्धि और संवेदनशीलता दोनों को दर्शाती है। यदि इसके आवासों का संरक्षण नहीं किया गया, तो यह दुर्लभ प्रजाति भविष्य में विलुप्त हो सकती है। इसलिए वैज्ञानिक अनुसंधान, सतत व्यापार, कैप्टिव ब्रीडिंग और प्राकृतिक आवास संरक्षण—सभी को मिलाकर ही इस "फ्रेशवॉटर ज्वेल" (Jewel of freshwater) का भविष्य सुरक्षित किया जा सकता है।

जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य का गौरव का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता:

डॉ. राजेंद्र प्रसाद

हिंदी में काम करना कोई मजबूरी नहीं, यह तो हमारी जिम्मेदारी है।

हिंदी में सोचो, हिंदी में लिखो, हिंदी में गर्व करो।

फ्लॉकपोनिक्स: जैवफ्लॉक एवं हाइड्रोपोनिक्स आधारित सतत एकीकृत मत्स्य एवं सब्जी उत्पादन प्रणाली

मित्रसेन मौर्य[1], राघवेंद्र सिंह[2], दिनेश कुमार[1], मोनिका गुप्ता[2], शशांक सिंह[1], शिवम सरोज[1] एवं पुनीत पटेल[1]

[1.]मात्स्यिकी महाविद्यालय, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या

[2.]भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

विश्व स्तर पर बढ़ती जनसंख्या, सीमित भूमि संसाधन तथा जल संकट ने खाद्य उत्पादन की नई तकनीकों के विकास को प्रेरित किया है। फ्लॉकपोनिक्स एक नवीन एकीकृत उत्पादन प्रणाली है, जिसमें बायोफ्लॉक तकनीक तथा हाइड्रोपोनिक्स को संयोजित किया जाता है। इस प्रणाली में मछलियों के अपशिष्ट पदार्थों को सूक्ष्मजीवों द्वारा उपयोगी पोषक तत्वों में परिवर्तित किया जाता है तथा इन्हीं पोषक तत्वों का उपयोग पौधों की वृद्धि के लिए किया जाता है। परिणामस्वरूप जल की पुनर्चक्रण क्षमता बढ़ती है, पोषक तत्वों का अपव्यय कम होता है तथा एक ही प्रणाली से मछली एवं सब्जी दोनों का उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। यह तकनीक शहरी कृषि, सीमित भूमि क्षेत्रों तथा जल संरक्षण आधारित कृषि प्रणालियों के लिए अत्यंत उपयोगी साबित हो रही है।

परिचय

वर्तमान समय में कृषि और मत्स्य उत्पादन दोनों क्षेत्रों में संसाधनों के कुशल उपयोग की आवश्यकता बढ़ गई है। पारंपरिक मत्स्य पालन में बड़ी मात्रा में जल का उपयोग होता है तथा मछलियों के अपशिष्ट पदार्थ जल प्रदूषण का कारण बन सकते हैं। दूसरी ओर, हाइड्रोपोनिक्स में पौधों की वृद्धि के लिए कृत्रिम पोषक घोल की आवश्यकता होती है, जिससे उत्पादन लागत बढ़ जाती है।

इन चुनौतियों के समाधान के रूप में फ्लॉकपोनिक्स प्रणाली विकसित की गई है। यह प्रणाली बायोफ्लॉक और हाइड्रोपोनिक्स के लाभों को एकीकृत करती है। बायोफ्लॉक प्रणाली में उपस्थित लाभकारी जीवाणु मछलियों द्वारा उत्सर्जित अमोनिया को सूक्ष्मजीवी प्रोटीन और पोषक तत्वों में परिवर्तित करते हैं। इसके पश्चात यह पोषक तत्व युक्त जल पौध उत्पादन इकाई में भेजा जाता है, जहाँ पौधे इन पोषक तत्वों का अवशोषण करते हैं और जल को पुनः शुद्ध करते हैं।

फ्लॉकपोनिक्स की अवधारणा

फ्लॉकपोनिक्स शब्द "बायोफ्लॉक" और "हाइड्रोपोनिक्स" के संयोजन से बना है। फ्लॉकपोनिक्स की मूल अवधारणा बायोफ्लॉक प्रणाली में विकसित होने वाले सूक्ष्मजीव समुदाय पर आधारित है। मछलियों द्वारा उत्सर्जित अमोनिया एवं अन्य नाइट्रोजनयुक्त अपशिष्ट पदार्थ सामान्य परिस्थितियों में जल गुणवत्ता को प्रभावित कर सकते हैं, किन्तु बायोफ्लॉक प्रणाली में कार्बन स्रोत की उपस्थिति से हेटरोट्रॉफिक जीवाणु इन अपशिष्ट पदार्थों को अपनी जैविक वृद्धि के लिए उपयोग करते हैं। इस प्रक्रिया में अमोनिया सूक्ष्मजीवी बायोमास (फ्लॉक) तथा पौधों के लिए उपलब्ध पोषक तत्वों में परिवर्तित हो जाता है। यह पोषक तत्वों से समृद्ध जल हाइड्रोपोनिक इकाई में पहुँचता है, जहाँ पौधे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम तथा अन्य आवश्यक खनिजों का अवशोषण कर अपनी वृद्धि करते हैं। पौधों द्वारा पोषक तत्वों के उपयोग के पश्चात शुद्ध हुआ जल पुनः मछली पालन टैंक में वापस भेज दिया जाता है, जिससे एक सतत बंद चक्र स्थापित होता है।

पारंपरिक एक्वापोनिक्स प्रणाली की तुलना में फ्लॉकपोनिक्स में पोषक तत्वों की उपलब्धता अधिक होती है क्योंकि बायोफ्लॉक में उपस्थित सूक्ष्मजीव लगातार कार्बनिक पदार्थों को विघटित कर पौधों के लिए उपयोगी रूप में परिवर्तित करते रहते हैं। इसके अतिरिक्त, बायोफ्लॉक कण स्वयं भी प्रोटीन एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों से समृद्ध होते हैं, जिन्हें मछलियाँ पूरक आहार के रूप में उपयोग कर सकती हैं। इस प्रकार फ्लॉकपोनिक्स न केवल जल संरक्षण और पर्यावरणीय

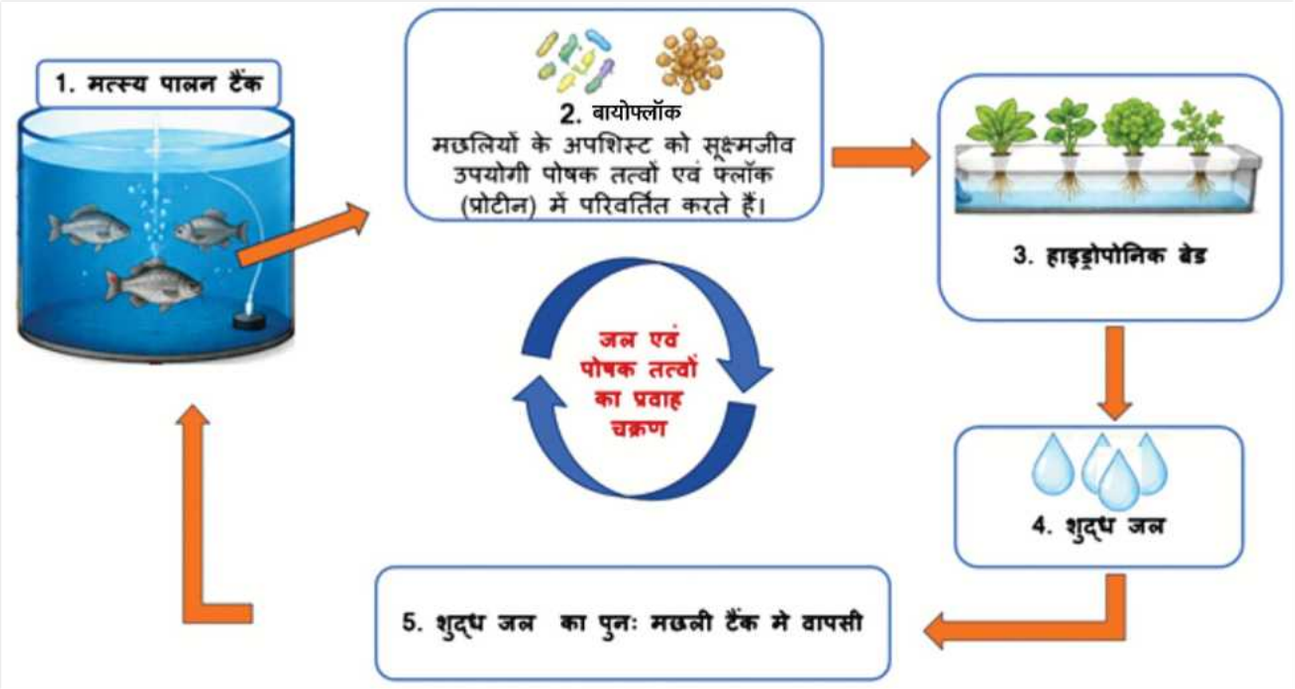

स्थिरता को बढ़ावा देता है, बल्कि एक ही प्रणाली से मछली एवं पौध उत्पादन प्राप्त कर संसाधनों की उपयोगिता और आर्थिक लाभप्रदता को भी बढ़ाता है।

फ्लॉकपोनिक्स का कार्य सिद्धांत

फ्लॉकपोनिक्स का कार्य जैविक नाइट्रोजन चक्र पर आधारित होता है।

मछलियाँ भोजन ग्रहण करने के पश्चात अमोनिया तथा अन्य अपशिष्ट पदार्थ उत्सर्जित करती हैं। सामान्य परिस्थितियों में अमोनिया मछलियों के लिए विषाक्त होता है। बायोफ्लॉक प्रणाली में कार्बन स्रोत (गुड़, चोकर, टैपिओका पाउडर आदि) मिलाने से हेटरोट्रॉफिक जीवाणुओं की वृद्धि होती है। ये जीवाणु अमोनिया को अपने कोशिकीय प्रोटीन में परिवर्तित कर देते हैं।

इसके बाद पोषक तत्वों से भरपूर जल हाइड्रोपोनिक इकाई में पहुँचता है, जहाँ पौधे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों का उपयोग अपनी वृद्धि के लिए करते हैं। पौधों द्वारा पोषक तत्वों के अवशोषण के बाद जल पुनः मछली टैंक में भेज दिया जाता है।

फ्लॉकपोनिक्स प्रणाली के प्रमुख घटक

मत्स्य पालन टैंक

मत्स्य पालन टैंक फ्लॉकपोनिक्स प्रणाली का मुख्य उत्पादन घटक है, जहाँ मछलियों का पालन किया जाता है। यह टैंक सामान्यतः उच्च घनत्व पर मत्स्य पालन के लिए डिज़ाइन किया जाता है। मछलियों को दिए गए आहार का एक भाग वृद्धि में उपयोग होता है जबकि शेष भाग मल, मूत्र तथा अवशिष्ट भोजन के रूप में जल में मिल जाता है। यही अपशिष्ट पदार्थ आगे चलकर पौधों के लिए पोषक तत्वों का स्रोत बनते हैं।

टैंक का आकार उत्पादन क्षमता के अनुसार गोलाकार अथवा आयताकार हो सकता है। गोलाकार टैंक जल परिसंचरण को बेहतर बनाए रखते हैं तथा ठोस पदार्थों के संचय को कम करते हैं। फ्लॉकपोनिक्स में सामान्यतः तिलापिया, पंगासियस, कॉमन कार्प तथा कैटफिश जैसी प्रजातियाँ उपयुक्त मानी जाती हैं क्योंकि ये उच्च घनत्व और बायोफ्लॉक परिस्थितियों को सहन कर सकती हैं।

तालिका 1: फ्लॉकपोनिक्स प्रणाली में मत्स्य एवं सब्जी उत्पादन हेतु उपयुक्त मत्स्य प्रजातियाँ

मत्स्य प्रजाति	प्रमुख विशेषताएँ	फ्लॉकपोनिक्स में उपयुक्तता
तिलापिया	तीव्र वृद्धि, उच्च सहनशीलता	अत्यधिक उपयुक्त
पंगासियस	उच्च घनत्व पर पालन योग्य	अत्यधिक उपयुक्त
कॉमन कार्प	विविध परिस्थितियों में अनुकूलन	उपयुक्त
रोहू	भारत में लोकप्रिय खाद्य मछली	मध्यम से उच्च उपयुक्तता
मागुर	कम ऑक्सीजन में जीवित रहने की क्षमता	उपयुक्त
स्ट्राइप्ड स्नेकहेड	उच्च बाजार मूल्य, वायु-श्वसन क्षमता	सीमित स्तर पर उपयुक्त

बायोफ्लॉक इकाई

बायोफ्लॉक इकाई फ्लॉकपोनिक्स प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण घटक है। इसमें विभिन्न प्रकार के लाभकारी जीवाणु, शैवाल, प्रोटोजोआ, फफूंद तथा कार्बनिक कण मिलकर फ्लॉक का निर्माण करते हैं। यह सूक्ष्मजीवी समुदाय मछलियों द्वारा उत्सर्जित अमोनिया एवं अन्य नाइट्रोजनयुक्त अपशिष्ट पदार्थों को उपयोगी जैविक पदार्थों में परिवर्तित करता है।

बायोफ्लॉक निर्माण के लिए जल में कार्बन स्रोत जैसे गुड़, चावल की भूसी अथवा गेहूँ की भूसी मिलाई जाती है, जिससे कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात बढ़ता है और हेटरोट्रॉफिक जीवाणुओं की वृद्धि होती है। ये जीवाणु अमोनिया को सूक्ष्मजीवी प्रोटीन में परिवर्तित कर देते हैं, जिससे जल की गुणवत्ता सुधरती है तथा मछलियों के लिए अतिरिक्त प्राकृतिक भोजन उपलब्ध होता है।

वातन प्रणाली

फ्लॉकपोनिक्स प्रणाली में वातन अत्यंत आवश्यक है क्योंकि बायोफ्लॉक सूक्ष्मजीव तथा मछलियाँ दोनों ही बड़ी मात्रा में ऑक्सीजन का उपयोग करते हैं। पर्याप्त ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में सूक्ष्मजीवी गतिविधियाँ प्रभावित हो सकती हैं तथा जल गुणवत्ता में गिरावट आ सकती है। वातन प्रणाली में एयर ब्लोअर, एयर पंप, एयर स्टोन तथा डिफ्यूज़र का उपयोग किया जाता है। यह प्रणाली जल में घुलित ऑक्सीजन का स्तर बनाए रखने के साथ-साथ फ्लॉक कणों को निलंबित अवस्था में रखने में भी सहायता करती है।

जल परिसंचरण एवं पम्पिंग प्रणाली

जल परिसंचरण प्रणाली फ्लॉकपोनिक्स के विभिन्न घटकों को जोड़ने का कार्य करती है। इसमें जल पम्प, पाइपलाइन, वाल्व तथा जल वितरण संरचनाएँ शामिल होती हैं। यह प्रणाली पोषक तत्व युक्त जल को मत्स्य टैंक से पौध उत्पादन इकाई तक पहुँचाती है तथा पौधों द्वारा शुद्ध किए गए जल को पुनः मत्स्य टैंक में लौटाती है। निरंतर जल प्रवाह पोषक तत्वों के समान वितरण तथा जल गुणवत्ता बनाए रखने के लिए आवश्यक है।

हाइड्रोपोनिक पौध उत्पादन इकाई

यह फ्लॉकपोनिक्स प्रणाली का दूसरा प्रमुख उत्पादन घटक है। इस इकाई में पौधों को मिट्टी के बिना, केवल पोषक तत्व-युक्त जल में उगाया जाता है। मछलियों और बायोफ्लॉक द्वारा उत्पन्न पोषक तत्व पौधों की वृद्धि के लिए उपयोग किए जाते हैं। फ्लोटिंग राफ्ट, न्यूट्रिएंट फिल्म तकनीक तथा मीडिया बेड जैसी प्रणालियाँ सामान्यतः उपयोग की जाती हैं। पत्तेदार सब्जियाँ जैसे लेट्यूस, पालक, धनिया, मेथी तथा तुलसी इस प्रणाली में अच्छी वृद्धि करती हैं।

तालिका 2 : फ्लॉकपोनिक्स प्रणाली में उगाई जाने वाली प्रमुख सब्जियाँ एवं पादप प्रजातियाँ

सब्जी/पादप प्रजाति	प्रमुख उपयोग	फ्लॉकपोनिक्स में उपयुक्तता
लेट्यूस	सलाद	अत्यधिक उपयुक्त
पालक	पत्तेदार सब्जी	अत्यधिक उपयुक्त
तुलसी	औषधीय एवं मसाला	अत्यधिक उपयुक्त
धनिया	मसाला एवं पत्तियाँ	अत्यधिक उपयुक्त
पुदीना	औषधीय एवं मसाला	अत्यधिक उपयुक्त
टमाटर	फल-सब्जी	उपयुक्त
खीरा	सलाद एवं सब्जी	उपयुक्त
भिंडी	सब्जी	उपयुक्त
मिर्च	मसाला एवं सब्जी	उपयुक्त
बैंगन	सब्जी	मध्यम उपयुक्तता

फ्लॉकपोनिक्स का भविष्य

जलवायु परिवर्तन, भूमि की कमी तथा सतत कृषि की आवश्यकता के कारण फ्लॉकपोनिक्स का महत्व तेजी से बढ़ रहा है। यह तकनीक शहरी कृषि, छत कृषि, नियंत्रित वातावरण कृषि तथा एकीकृत मत्स्य प्रणालियों में व्यापक उपयोग की क्षमता रखती है। भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, इंटरनेट ऑफ थिंग्स तथा स्वचालित जल गुणवत्ता निगरानी प्रणालियों के समावेश से फ्लॉकपोनिक्स और अधिक दक्ष एवं आर्थिक रूप से लाभकारी बन सकती है।

फ्लॉकपोनिक्स एक उन्नत, पर्यावरण-अनुकूल तथा संसाधन-कुशल उत्पादन प्रणाली है, जो बायोफ्लॉक और हाइड्रोपोनिक्स दोनों तकनीकों के लाभों को एकीकृत करती है। यह प्रणाली जल संरक्षण, पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण, उच्च उत्पादन तथा अतिरिक्त आय के अवसर प्रदान करती है। बढ़ती खाद्य मांग और सीमित प्राकृतिक संसाधनों की परिस्थितियों में फ्लॉकपोनिक्स सतत कृषि एवं मत्स्य पालन के लिए एक प्रभावी विकल्प के रूप में उभर रहा है।

सभी भारतीय भाषाओं के लिए यदि कोई एक लिपि आवश्यक है तो वो देवनागरी ही हो सकती है:

जस्टिस कृष्णस्वामी अय्यर

आओ, राजभाषा हिंदी के माध्यम से आत्मनिर्भर भारत का निर्माण करें।

मत्स्य पारिस्थितिकी एवं प्रबंधन में इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग डेटा का समन्वित उपयोग

सुवंकर राउत[1], राजलक्ष्मी दलबेहरा[1], परविंद कुमार[1] एवं सत्यवीर सिंह[2]

[1] कॉलेज ऑफ फिशरीज, केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, लेम्बुचेरा

[2] केरल यूनिवर्सिटी ऑफ फिशरीज एंड ओशन स्टडीज, केरल

इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग तकनीकों ने मीठे पानी और समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों में मछलियों की गतिशीलता, व्यवहार, आवास उपयोग और जनसंख्या संरचना के अध्ययन में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है। पारंपरिक पकड़-और-पुनःपकड़ विधियों की तुलना में इलेक्ट्रॉनिक टैग उच्च-रिज़ॉल्यूशन, निरंतर और मत्स्य-स्वतंत्र डेटा प्रदान करते हैं, जिससे प्रवास मार्गों, स्थानिक उपयोग, पर्यावरणीय प्रतिक्रियाओं तथा मृत्यु दर के अधिक सटीक आकलन संभव हुए हैं। यह लेख इलेक्ट्रॉनिक टैगों के प्रकार, उनके अनुप्रयोग, स्टॉक आकलन में उनकी भूमिका, टैगिंग विधियों के जैविक एवं नैतिक प्रभाव, तथा तकनीकी व विश्लेषणात्मक प्रगतियों का समन्वित विवेचन प्रस्तुत करता है। साथ ही, पारिस्थितिक अनुसंधान और मत्स्य प्रबंधन लक्ष्यों के बीच बेहतर एकीकरण की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

मछलियों की गति, आवास चयन, प्रवास और व्यवहार को समझना प्रभावी मत्स्य प्रबंधन, जैव विविधता संरक्षण और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए अत्यंत आवश्यक है। विशेषकर प्रवासी प्रजातियाँ—जैसे सैल्मन, टूना और ईल—विभिन्न पारिस्थितिक तंत्रों के बीच जटिल जीवन चक्र पूरा करती हैं। पारंपरिक पकड़-और-पुनःपकड़ विधियाँ सीमित और क्षणिक जानकारी प्रदान करती हैं तथा वे मछली पकड़ने



के प्रयास, रिपोर्टिंग दर और मानव त्रुटियों से प्रभावित हो सकती हैं। इसके विपरीत, इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग तकनीकें व्यक्तिगत मछलियों की गतिविधियों और पर्यावरणीय स्थितियों का दीर्घकालिक, उच्च-रिज़ॉल्यूशन रिकॉर्ड उपलब्ध कराती हैं, जिससे स्थानिक पारिस्थितिकी की समझ में गुणात्मक सुधार हुआ। पिछले दो दशकों में टेलीमेट्री और सेंसर प्रौद्योगिकी में प्रगति के कारण इलेक्ट्रॉनिक टैग मत्स्य विज्ञान और जलीय पारिस्थितिकी में केंद्रीय उपकरण बन चुके हैं।

इलेक्ट्रॉनिक टैग के प्रकार और उनके अनुप्रयोग

मछली अनुसंधान में विभिन्न प्रकार के इलेक्ट्रॉनिक टैग प्रयुक्त होते हैं, जिनमें प्रमुख हैं:

1. **रेडियो ट्रांसमीटर** – मुख्यतः मीठे पानी में उपयोग; रेडियो सिग्नल के माध्यम से रीयल-टाइम ट्रैकिंग।
2. **ध्वनिक (Acoustic) ट्रांसमीटर** – समुद्री एवं मीठे दोनों प्रणालियों में; जल के भीतर ध्वनि संकेतों द्वारा निगरानी।
3. **डेटा स्टोरेज टैग (DSTs)** – तापमान, गहराई, प्रकाश आदि का डेटा रिकॉर्ड करते हैं; पुनःप्राप्ति पर डेटा डाउनलोड किया जाता है।
4. **पॉप-अप सैटेलाइट आर्काइवल टैग (PSATs)** – निर्धारित समय के बाद अलग होकर उपग्रह के माध्यम से डेटा प्रेषित करते हैं; अत्यधिक प्रवासी समुद्री प्रजातियों के लिए उपयोगी।
5. **पैसिव इंटीग्रेटेड ट्रांसपोंडर (PIT) टैग** – छोटे, कम लागत वाले टैग; विशेषकर नदियों और मछली मार्गों में बड़े पैमाने पर जनसंख्या-स्तरीय अध्ययनों हेतु।

इन टैगों के माध्यम से निम्नलिखित पहलुओं का अध्ययन संभव हुआ है:

- प्रवास मार्गों और समय का निर्धारण
- आवास प्राथमिकताओं का विश्लेषण
- मौसमी एवं दैनिक गति पैटर्न
- तापमान और ऑक्सीजन जैसी पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति शारीरिक प्रतिक्रियाएँ
- शिकार जोखिम और व्यवहारिक अनुकूलन

इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग ने यह भी स्पष्ट किया है कि कई प्रजातियाँ अपेक्षा से अधिक जटिल स्थानिक व्यवहार प्रदर्शित करती हैं, जिससे संरक्षित क्षेत्रों की सीमाओं और मत्स्य प्रबंधन रणनीतियों के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता सामने आई है।

मत्स्य स्टॉक आकलन में इलेक्ट्रॉनिक टैग डेटा का एकीकरण

टैग-पुनःपकड़ डेटा लंबे समय से प्रचुरता, मृत्यु दर और वृद्धि दर के आकलन में उपयोग होता रहा है। किंतु इलेक्ट्रॉनिक टैग डेटा को स्थानिक रूप से स्पष्ट स्टॉक आकलन मॉडलों में एकीकृत करने से महत्वपूर्ण सुधार संभव हुए हैं।

इलेक्ट्रॉनिक टैग:

- मत्स्य-स्वतंत्र स्थान डेटा प्रदान करते हैं,
- प्रवास और वितरण में परिवर्तनशीलता को मापते हैं,
- प्राकृतिक और मत्स्यजनित मृत्यु दर को अलग करने में सहायता करते हैं,
- प्रबंधन इकाइयों की जैविक वैधता की जाँच करते हैं।

फिर भी, औपचारिक स्टॉक आकलन ढाँचों में इनका पूर्ण उपयोग अभी सीमित है। इसका प्रमुख कारण यह है कि अनेक टैगिंग अध्ययन पारिस्थितिक प्रश्नों के लिए डिज़ाइन किए जाते हैं, न कि स्टॉक आकलन मॉडलों की विशिष्ट डेटा आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर।

समाधान:

- अध्ययन डिज़ाइन के चरण में प्रबंधकों और मॉडलरों की सहभागिता
- नमूना आकार और स्थानिक कवरेज का सांख्यिकीय अनुकूलन
- डेटा मानकीकरण और साझा डेटाबेस का विकास
- एकीकृत जनसंख्या मॉडल का उपयोग

इस प्रकार इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग डेटा साक्ष्य-आधारित मत्स्य प्रबंधन को सुदृढ़ कर सकता है।

टैगिंग विधियाँ और उनके जैविक प्रभाव

इलेक्ट्रॉनिक टैग निम्न विधियों से लगाए जाते हैं:

- शल्य प्रत्यारोपण
- बाह्य संलग्नक
- गैस्ट्रिक प्रविष्टि

प्रत्येक विधि के लाभ और सीमाएँ प्रजाति, आकार, टैग के भार और अध्ययन की अवधि पर निर्भर करती हैं।

संभावित प्रभाव

- ऊतक क्षति और संक्रमण
- तैराकी क्षमता में कमी
- टैग का समय से पूर्व गिरना
- वृद्धि दर या जीवित रहने की दर में कमी
- व्यवहार में असामान्य परिवर्तन

अक्सर पकड़ने और संभालने का तनाव टैगिंग प्रभावों के साथ मिश्रित हो जाता है, जिससे वास्तविक प्रभावों का पृथक्करण कठिन हो जाता है।

उत्तम प्रथाएँ

- टैग-से-शरीर भार अनुपात सामान्यतः 2% से कम रखना
- उपयुक्त एनेस्थीसिया का उपयोग
- पायलट अध्ययन और नियंत्रित प्रयोग
- शल्य तकनीकों का मानकीकरण
- रिकवरी अवधि की निगरानी

प्रौद्योगिकीय एवं विश्लेषणात्मक प्रगति

हाल के वर्षों में निम्न प्रगतियाँ उल्लेखनीय हैं:

- टैग का लघुकरण
- बहु-सेंसर एकीकरण (हृदयगति, त्वरण, तापमान, गहराई)
- कोडित ध्वनिक टैग और व्यापक रिसीवर ऐरे

- स्वचालित डेटा लॉगिंग और क्लाउड-आधारित भंडारण
- उन्नत सांख्यिकीय मॉडल (State-space models, Hidden Markov models)

इन तकनीकों ने बड़े डेटासेट उत्पन्न किए हैं, जिनके विश्लेषण के लिए उन्नत संगणकीय उपकरणों और अंतःविषय सहयोग की आवश्यकता है। हालाँकि, गहरे समुद्र, अत्यधिक गंदले जल, या बर्फ से ढके क्षेत्रों में ट्रैकिंग अभी भी चुनौतीपूर्ण है। भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग आधारित विश्लेषण इन चुनौतियों को कम कर सकते हैं।

नैतिक विचार और पशु कल्याण

इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग अध्ययनों में पशु कल्याण सुनिश्चित करना एक केंद्रीय चिंता है। अनुचित टैगिंग प्रथाएँ असामान्य व्यवहार, पक्षपातपूर्ण डेटा और नैतिक चिंताओं को जन्म दे सकती हैं। कई समीक्षाएँ इस बात पर जोर देती हैं कि हैंडलिंग समय को न्यूनतम रखा जाए, उपयुक्त एनेस्थीसिया का उपयोग किया जाए, शरीर के आकार के अनुपात में उपयुक्त टैग का चयन किया जाए, और संलग्नक विधियों को मान्य किया जाए ताकि मछलियों के स्वास्थ्य और व्यवहार पर दीर्घकालिक प्रभाव न्यूनतम रहें। वैज्ञानिक वैधता और पशु कल्याण मानकों के अनुपालन के लिए नैतिक टैगिंग प्रथाएँ अनिवार्य हैं।

नैतिक विचार और पशु कल्याण

पशु कल्याण इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग अध्ययनों का केंद्रीय तत्व है। अनुचित टैगिंग:

- असामान्य व्यवहार उत्पन्न कर सकती है,
- डेटा में पक्षपात ला सकती है,
- नैतिक मानकों का उल्लंघन कर सकती है।

अतः आवश्यक है कि:

- हैंडलिंग समय न्यूनतम रखा जाए,
- प्रशिक्षित कर्मियों द्वारा शल्य प्रक्रिया की जाए,
- टैग का आकार और भार उपयुक्त हो,
- नैतिक स्वीकृति प्राप्त की जाए,
- टैगिंग के बाद दीर्घकालिक निगरानी की जाए।

वैज्ञानिक वैधता और पशु कल्याण परस्पर पूरक हैं; नैतिक रूप से सुदृढ़ अध्ययन अधिक विश्वसनीय डेटा उत्पन्न करते हैं।

भविष्य की दिशा

इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग की पूर्ण क्षमता साकार करने के लिए निम्न पहल आवश्यक हैं:

- पारिस्थितिक और प्रबंधन लक्ष्यों का समन्वित अध्ययन डिज़ाइन
- अंतरराष्ट्रीय डेटा साझाकरण नेटवर्क
- बहु-प्रजाति एवं पारिस्थितिक-स्तर दृष्टिकोण
- जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के आकलन हेतु दीर्घकालिक निगरानी
- उन्नत विश्लेषणात्मक ढाँचों में इलेक्ट्रॉनिक डेटा का समावेश

इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग ने मछलियों की गति, व्यवहार और आवास उपयोग के अध्ययन में अभूतपूर्व प्रगति की है। यह तकनीक उच्च गुणवत्ता वाला, मत्स्य-स्वतंत्र और स्थानिक रूप से स्पष्ट डेटा प्रदान करती है, जो पारिस्थितिक समझ तथा स्टॉक आकलन दोनों को सुदृढ़ करती है। फिर भी, इन तकनीकों की वास्तविक शक्ति तभी सामने आएगी जब अध्ययन डिज़ाइन, विश्लेषणात्मक ढाँचे और प्रबंधन आवश्यकताओं के बीच समुचित समन्वय स्थापित किया जाए, तथा टैगिंग प्रभावों का कठोर मूल्यांकन कर पशु कल्याण सुनिश्चित किया जाए। निरंतर तकनीकी नवाचार, अंतःविषय सहयोग और साक्ष्य-आधारित दृष्टिकोण के माध्यम से इलेक्ट्रॉनिक टैगिंग भविष्य में सतत मत्स्य प्रबंधन और जलीय जैव विविधता संरक्षण की आधारशिला सिद्ध हो सकती है।

सोन नदी की मत्स्य विविधता एवं उसका महत्व

अमित सिंह बिष्ट, ललित कुमार त्यागी, संजय कुमार सिंह, जसप्रीत सिंह, रजनी चंद्रन, रेखा देवी चक्रवर्ती, रवि कुमार एवं राजीव कुमार सिंह

भाकृअनुप - राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

सोन नदी उत्तर एवं मध्य भारत की प्रमुख नदियों में से एक है। यह नदी अपने विशाल जलग्रहण क्षेत्र, समृद्ध जैव विविधता तथा प्रचुर मत्स्य संसाधनों के लिए प्रसिद्ध है। सोन नदी में पाई जाने वाली विभिन्न मछली प्रजातियाँ स्थानीय समुदायों की आजीविका, पोषण सुरक्षा तथा क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

सोन नदी का उद्गम एवं प्रवाह

सोन नदी का उद्गम मध्य प्रदेश के अमरकंटक पठार से होता है। अमरकंटक वही क्षेत्र है जहाँ से नर्मदा का भी उद्गम होता है। लगभग 780 किलोमीटर लंबी यह नदी मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, झारखंड तथा बिहार से होकर प्रवाहित होती हुई बिहार के दानापुर के निकट गंगा नदी में मिल जाती है। चौड़ा रेतीला पाट और मौसमी प्रवाह परिवर्तन सोन नदी की प्रमुख विशेषताएँ हैं। वर्षा ऋतु में इसका जलप्रवाह अत्यधिक बढ़ जाता है, जबकि ग्रीष्म ऋतु में जलस्तर अपेक्षाकृत कम हो जाता है।

सोन नदी का मात्स्यिकी में महत्व

सोन नदी का पारिस्थितिक तंत्र अनेक देशी मत्स्य प्रजातियों के लिए उपयुक्त आवास प्रदान करता है। स्वच्छ जल, विविध गहराई वाले क्षेत्र, रेतीले एवं पथरीले तल तथा सहायक नदियों का विस्तृत जाल मछलियों के प्रजनन, भोजन एवं विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ निर्मित करता है। नदी तटवर्ती क्षेत्रों में रहने वाले हजारों मछुआरा परिवार अपनी आजीविका के लिए इस नदी पर निर्भर हैं। यहाँ से प्राप्त



सोन नदी

मछलियाँ स्थानीय बाजारों में महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि का आधार हैं तथा ग्रामीण एवं शहरी आबादी को सुलभ एवं पौष्टिक प्रोटीन उपलब्ध कराती हैं।

बाणसागर जलाशय : सोन नदी बेसिन का प्रमुख मत्स्य संसाधन

सोन नदी पर निर्मित बाणसागर जलाशय मध्य भारत के सबसे बड़े बहुउद्देशीय जलाशयों में से एक है। यह जलाशय मध्य प्रदेश के उमरिया जिले के देवलोंड क्षेत्र में स्थित है तथा इसका निर्माण सोन नदी के जल संसाधनों के समुचित उपयोग हेतु किया गया था। बाणसागर परियोजना मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश एवं बिहार राज्यों की संयुक्त परियोजना है, जिसका उद्देश्य सिंचाई, जलविद्युत उत्पादन, बाढ़ नियंत्रण तथा मत्स्य उत्पादन को बढ़ावा देना है। मत्स्य संसाधनों की दृष्टि से बाणसागर जलाशय सोन नदी बेसिन का अत्यंत महत्वपूर्ण केंद्र बन चुका है। विशाल जलक्षेत्र, पर्याप्त जलधारण क्षमता तथा अनुकूल पर्यावरणीय परिस्थितियाँ विभिन्न मत्स्य प्रजातियों के विकास और संवर्धन के लिए उपयुक्त आवास प्रदान करती हैं। जलाशय में भारतीय प्रमुख कार्प मछलियाँ जैसे रोहू, कतला एवं मृगल के साथ-साथ कालाबासू, सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प तथा कॉमन कार्प का भी सफल संवर्धन किया जाता है। इसके अतिरिक्त अनेक देशी कैटफिश एवं अन्य स्थानीय मछली प्रजातियाँ भी यहाँ पाई जाती हैं।

बाणसागर जलाशय ने क्षेत्र में मत्स्य उत्पादन एवं मत्स्य पालन आधारित आजीविका को नई दिशा प्रदान की है। जलाशय में प्रतिवर्ष बड़ी मात्रा में मत्स्य उत्पादन होता है, जिससे हजारों मछुआरा परिवारों एवं मत्स्य सहकारी समितियों को रोजगार और आय प्राप्त होती है। मत्स्य बीज संचयन, पिंजरा (केज) मत्स्य पालन तथा वैज्ञानिक मत्स्य प्रबंधन जैसी गतिविधियों के कारण इस जलाशय का आर्थिक महत्व निरंतर बढ़ रहा है। जैव विविधता की दृष्टि से भी बाणसागर जलाशय अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह जलाशय विभिन्न जलीय जीवों, प्रवासी पक्षियों तथा अन्य वन्यजीवों के लिए उपयुक्त आवास प्रदान करता है। जलाशय के उथले एवं गहरे जल क्षेत्र विभिन्न मत्स्य प्रजातियों के प्रजनन, भोजन तथा आश्रय के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध कराते हैं। इस प्रकार बाणसागर जलाशय केवल मत्स्य उत्पादन का केंद्र ही नहीं, बल्कि क्षेत्रीय जैव विविधता संरक्षण का भी महत्वपूर्ण आधार है।

हालाँकि, बढ़ते मत्स्य दोहन, अवैध मत्स्याखेट, जलस्तर में उतार-चढ़ाव तथा प्रदूषण जैसी चुनौतियाँ इसके सतत विकास के समक्ष बाधाएँ उत्पन्न कर रही हैं। अतः आवश्यक है कि वैज्ञानिक मत्स्य प्रबंधन, नियमित मत्स्य बीज संचयन, समुदाय आधारित संरक्षण कार्यक्रमों तथा पर्यावरणीय निगरानी के माध्यम से बाणसागर जलाशय के मत्स्य संसाधनों का दीर्घकालिक संरक्षण सुनिश्चित किया जाए। वर्तमान में बाणसागर जलाशय न केवल मध्य भारत के प्रमुख अंतर्देशीय मत्स्य संसाधनों में गिना जाता है, बल्कि सोन नदी की मत्स्य जैव विविधता के संरक्षण, संवर्धन तथा क्षेत्रीय आर्थिक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

सोन नदी में पाई जाने वाली प्रमुख मछली प्रजातियाँ

सोन नदी में कार्प, कैटफिश, स्नेकहेड तथा अन्य अनेक आर्थिक एवं पारिस्थितिक दृष्टि से महत्वपूर्ण मछली प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें प्रमुख हैं—

- रोहू (*लेबियो रोहिता*)
- कतला (*कतला कतला*)
- मृगल (*सिरिनस मृगला*)
- कालाबासू (*लेबियो कालबासु*)
- बाटा (*लेबियो बाटा*)
- गोनिया (*लेबियो गोनियस*)
- रेबा (*सिरिनस रेबा*)
- महाशीर (*टोर* प्रजाति)
- चितला (*चिताला चिताला*)
- मागुर (*क्लेरियस मागुर*)
- सिंघी (*हेटेरोप्न्यूस्टीस फॉसिलिस*)
- टेंगरा (*मिस्टस* प्रजाति)
- रीठा (*रीता रीता*)
- बोआरी (*स्पेराटा सींघाला*)
- सौल (*चन्ना स्ट्रियाटा*)
- गिरई (*चन्ना मरुलियस*)
- चेंगा (*चन्ना पंक्टाटा*)
- बाम (*मास्टासेम्बेलस* प्रजाति)

जैव विविधता का महत्व

सोन नदी की मत्स्य जैव विविधता नदी पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण संकेतक है। विभिन्न प्रजातियाँ खाद्य श्रृंखला के विभिन्न स्तरों पर कार्य करते हुए पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में सहायता करती हैं। छोटी मछलियाँ बड़ी मछलियों एवं अन्य जलीय जीवों के लिए भोजन का स्रोत होती हैं, जबकि शीर्ष स्तर की प्रजातियाँ जैविक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

मत्स्य संसाधनों के समक्ष चुनौतियाँ

वर्तमान समय में सोन नदी की मत्स्य संपदा अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है, जिनमें प्रमुख हैं—

- जल प्रदूषण में वृद्धि
- अत्यधिक मत्स्य दोहन
- अवैज्ञानिक मत्स्याखेट पद्धतियाँ
- प्रजनन काल में मछलियों का शिकार
- बांधों एवं बैराजों का निर्माण
- प्राकृतिक आवासों का क्षरण
- जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

इन कारणों से कई देशी मत्स्य प्रजातियों की संख्या में निरंतर गिरावट देखी जा रही है।

संरक्षण एवं प्रबंधन

सोन नदी की मत्स्य संपदा के संरक्षण हेतु निम्नलिखित उपाय आवश्यक हैं—

- प्रजनन काल में मत्स्याखेट पर प्रभावी नियंत्रण।
- अवैध जालों एवं विस्फोटक पदार्थों के उपयोग पर प्रतिबंध।
- देशी मछली प्रजातियों का संवर्धन एवं पुनर्स्थापन।
- नदी प्रदूषण की रोकथाम।
- मछुआरों को वैज्ञानिक मत्स्य प्रबंधन का प्रशिक्षण।
- सामुदायिक सहभागिता आधारित संरक्षण कार्यक्रमों का संचालन।
- मत्स्य अभयारण्यों की स्थापना एवं संरक्षण।

सोन नदी भारत की महत्वपूर्ण नदियों में से एक है, जो समृद्ध मत्स्य जैव विविधता एवं प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण है। रोहू, कतला, मृगल, कालाबासू, महाशीर, चितला तथा विभिन्न कैटफिश प्रजातियाँ इसकी प्रमुख मत्स्य संपदा हैं। यह नदी स्थानीय मछुआरा समुदायों की आजीविका, क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था तथा खाद्य एवं पोषण सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है। अतः सोन नदी के मत्स्य संसाधनों का वैज्ञानिक संरक्षण, सतत प्रबंधन तथा जैव विविधता का संवर्धन वर्तमान समय की आवश्यकता है, जिससे भविष्य की पीढ़ियाँ भी इस अमूल्य प्राकृतिक धरोहर का लाभ प्राप्त कर सकें।

प्रान्तीय ईर्ष्या–द्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिंदी प्रचार से मिलेगी, उतनी दूसरी किसी चीज़ से नहीं मिल सकती:

सुभाषचंद्र बोस

उत्तर प्रदेश में गंगा नदी की मत्स्य जैव-विविधता पर बाँधों का प्रभाव

ललित कुमार त्यागी, वैभव त्रिपाठी, रजनी चंद्रन, राजीव कुमार सिंह एवं आशीष सिंह

भाकृअनुप - राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

गंगा नदी एक समृद्ध जलीय जैव-विविधता एवं सुविकसित पारिस्थितिकी तंत्र वाली भारत की प्रमुख नदी है। लगभग 2,525 किमी लंबी यह नदी गंगोत्री से बंगाल की खाड़ी तक प्रवाहित होती है तथा लगभग 10,00,000 किमी^{2} के विशाल जलग्रहण क्षेत्र को आच्छादित करती है। उत्तर प्रदेश में इसका लगभग 1,450 किमी लंबा प्रवाह कृषि, मत्स्य पालन, सिंचाई, पेयजल एवं ग्रामीण आजीविका का प्रमुख आधार है। गंगा नदी को ऊपरी, मध्य एवं निचले भागों में विभाजित किया गया है तथा यमुना, रामगंगा, घाघरा, गंडक और कोसी इसकी प्रमुख सहायक नदियाँ हैं।

उत्तर प्रदेश में गंगा नदी पर प्रमुख बैराज

गंगा नदी पर निर्मित अनेक बाँध एवं बैराज भारतीय जीवन और अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इनमें प्रमुख रूप से टिहरी बाँध, भीमगोडा बैराज (उत्तराखंड), बिजनौर बैराज (उत्तर प्रदेश), नरोरा बैराज, कानपुर लव-कुश बैराज तथा पश्चिम बंगाल में फरक्का बैराज शामिल हैं। उत्तर प्रदेश में गंगा नदी पर मुख्यतः जल विनियमन के उद्देश्य से बैराजों का निर्माण किया गया है, जो राज्य की सिंचाई एवं जल प्रबंधन व्यवस्था के प्रमुख आधार हैं। ये बैराज न केवल नहर प्रणालियों को जल उपलब्ध कराते हैं, बल्कि बाढ़ नियंत्रण, कृषि विकास तथा जल के संतुलित उपयोग में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रमुख बैराज निम्नलिखित हैं:

- **बिजनौर बैराज** – बिजनौर बैराज गंगा नदी पर उत्तर प्रदेश के बिजनौर जिले में स्थित एक प्रमुख बैराज है। इसका निर्माण लगभग 1984 में हुआ तथा इसकी लंबाई लगभग 560 मीटर है। यह गंगा का प्रथम प्रमुख बैराज माना जाता है, जो ऊपरी एवं मध्य गंगा नहर प्रणाली को जल उपलब्ध कराकर पश्चिमी और मध्य उत्तर प्रदेश में सिंचाई एवं जल प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- **नरौरा बैराज** – नरौरा बैराज गंगा नदी पर उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर जिले में स्थित एक प्रमुख जल नियंत्रण संरचना है। इसका निर्माण लगभग 1966 में हुआ तथा इसकी लंबाई लगभग 922 मीटर है। यह निचली गंगा नहर प्रणाली का मुख्य आधार है, जो सिंचाई एवं नहर जल आपूर्ति के माध्यम से आसपास के कृषि क्षेत्रों को जल उपलब्ध कराकर कृषि उत्पादन बढ़ाने और जल प्रवाह प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- **कानपुर बैराज** – कानपुर गंगा बैराज (लव-कुश बैराज) उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर में स्थित एक प्रमुख जल संरचना है। इसकी लंबाई लगभग 621 मीटर है तथा इसका निर्माण 1990 के दशक के अंत से 2000 के आसपास पूर्ण हुआ। यह बैराज सिंचाई, शहरी जल प्रबंधन एवं गंगा नदी के जल प्रवाह नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

गंगा नदी से निकली प्रमुख नहरें

उत्तर प्रदेश की कृषि व्यवस्था गंगा नदी से विकसित विस्तृत नहर प्रणाली पर आधारित है, जो सिंचाई के लिए नियंत्रित एवं सतत जल आपूर्ति सुनिश्चित करती है। ये नहरें राज्य के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में कृषि उत्पादन को बनाए रखने एवं बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उत्तर प्रदेश में सिंचाई व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में गंगा नदी से निकली नहरों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। राज्य की प्रमुख नहरों में ऊपरी गंगा नहर प्रमुख है, जो हरिद्वार/बिजनौर क्षेत्र से निकलकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अनेक जिलों को सिंचाई सुविधा प्रदान करती है और कृषि उत्पादन में सहायक है। इसी प्रकार निचली गंगा नहर भी मध्य गंगा क्षेत्र में स्थित कृषि भूमि के लिए सिंचाई का एक प्रमुख स्रोत है, जिससे क्षेत्रीय कृषि विकास को निरंतर बढ़ावा मिलता है।

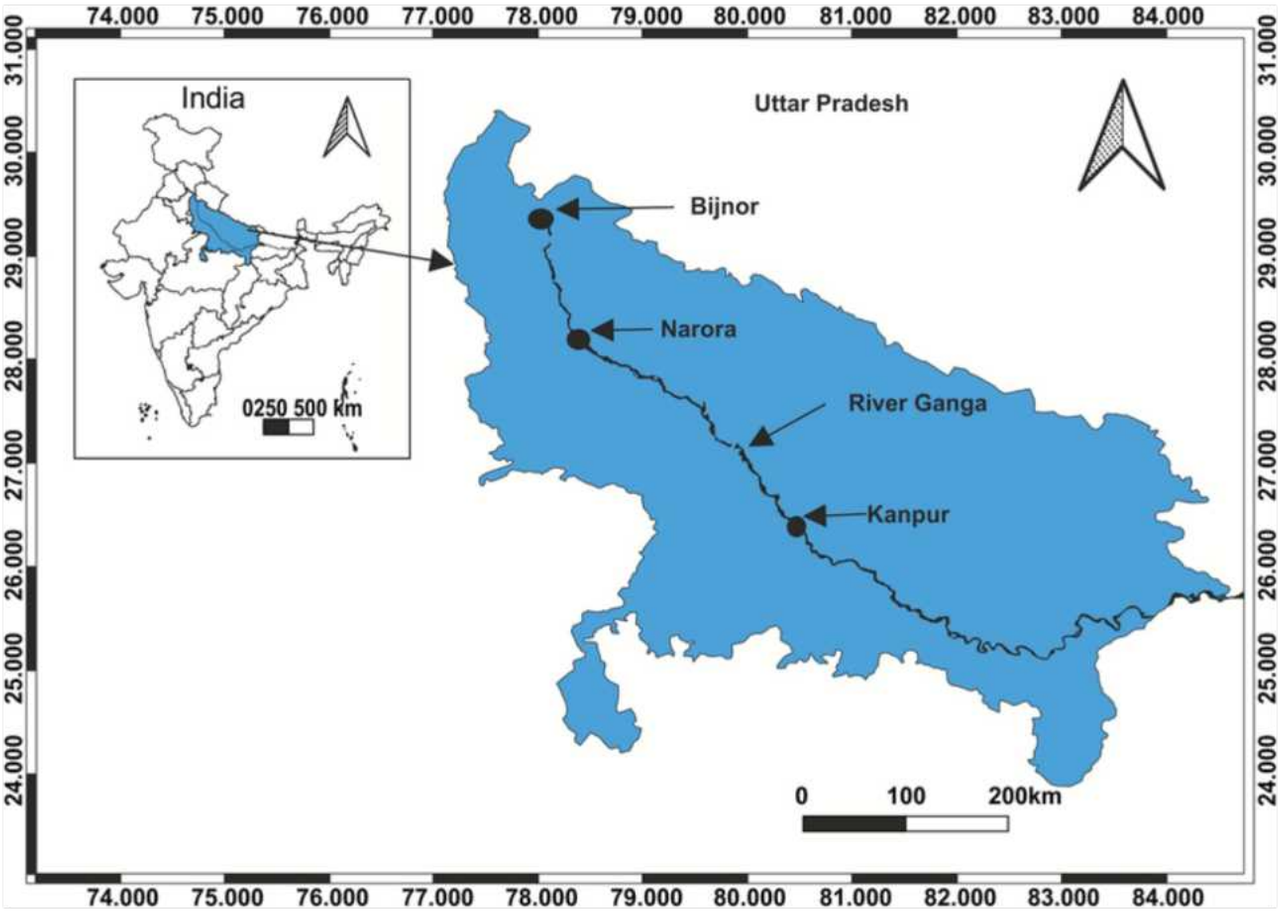

उत्तर प्रदेश में गंगा नदी के प्रमुख बाँध (बैराज) एवं स्थानों का मानचित्र

बाँधों एवं बैराजों का निर्माण के प्रमुख कारण

बाँधों एवं बैराजों का निर्माण जल संसाधनों के नियंत्रित एवं बहुउद्देशीय प्रबंधन हेतु किया जाता है। इनका मुख्य उद्देश्य जल संचयन एवं विनियमित वितरण के माध्यम से सिंचाई, जलविद्युत उत्पादन, बाढ़ नियंत्रण, पेयजल एवं औद्योगिक जल आपूर्ति सुनिश्चित करना है। ये संरचनाएँ नदी के प्राकृतिक प्रवाह एवं जल-गतिकी को नियंत्रित कर जल उपलब्धता बढ़ाती हैं, विशेषकर मानसूनी क्षेत्रों में। साथ ही, ये कृषि विकास, ऊर्जा उत्पादन, क्षेत्रीय विकास एवं रोजगार सृजन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

बाँधों एवं बैराजों का मत्स्य जैव-विविधता पर प्रभाव

सकारात्मक प्रभाव

बाँधों एवं बैराजों के निर्माण से मत्स्य क्षेत्र में कई सकारात्मक प्रभाव देखने को मिलते हैं। इनसे जलाशयों का निर्माण होता है, जो अंतर्देशीय मत्स्य पालन एवं मत्स्य संवर्धन के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करते हैं। नियंत्रित जल निकायों में मत्स्य उत्पादन, स्टॉकिंग तथा उन्नत प्रजातियों के पालन को बढ़ावा मिलता है, जिससे उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है। साथ ही, मत्स्य पालन, प्रसंस्करण एवं विपणन से स्थानीय समुदायों को रोजगार एवं आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। जलाशयों में वैज्ञानिक मत्स्य प्रबंधन, बहु-प्रजातीय पालन तथा आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण प्रजातियों के संवर्धन से संसाधन संरक्षण एवं क्षेत्रीय आर्थिक विकास को भी बढ़ावा मिलता है।

नकारात्मक प्रभाव

बाँधों एवं बैराजों के निर्माण से नदी पारिस्थितिकी एवं मत्स्य जैव-विविधता पर कई नकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं। ये संरचनाएँ नदी के प्राकृतिक प्रवाह को बाधित कर जल गुणवत्ता, तापमान, घुलित ऑक्सीजन तथा तलछट परिवहन

को प्रभावित करती हैं। परिणामस्वरूप मछलियों के प्राकृतिक आवास एवं प्रजनन स्थल नष्ट होते हैं तथा प्रवासी प्रजातियों का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। नहरों द्वारा जल मोड़ने से नदी प्रवाह में कमी आती है, जिससे प्रदूषण बढ़ता है और मछलियों की वृद्धि एवं जीवित रहने की क्षमता प्रभावित होती है। इसके अतिरिक्त, आवास विखंडन तथा तलछट एवं पोषक तत्वों के अवरोध से जलीय खाद्य श्रृंखला और जैव-विविधता में दीर्घकालिक गिरावट देखी जाती है।

जैव-विविधता में गिरावट

बाँधों एवं बैराजों के निर्माण के परिणामस्वरूप जलीय जैव-विविधता पर व्यापक एवं दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इन संरचनाओं द्वारा उत्पन्न प्रवाह परिवर्तन, आवास विखंडन तथा तलछट एवं पोषक तत्वों के अवरोध जैसे कारकों के संयुक्त प्रभाव से अनेक जलीय प्रजातियों की संख्या में निरंतर गिरावट दर्ज की गई है। वर्तमान में गंगा बेसिन की कई महत्वपूर्ण जलीय प्रजातियाँ—जैसे गंगा डॉल्फिन (*प्लैटानिस्टा गैंगेटिका गैंगेटिका*), घड़ियाल (*गैवियलिस गैंगेटिकस*), गंगा कछुआ (*बाटागुर काचुगा*), तथा मछलियाँ जैसे मागुर (*क्लेरियास बैट्रैकस*), गोल्डन महाशीर (*टोर पुटिटोरा*), हिल्सा (*टी. इलिशा*), गंगा शार्क (*जी. गैंगेटिकस*) एवं गंगा स्टिंगरे (*हिमान्तुरा फ्लूविएटिलिस*)—विभिन्न संकटग्रस्त श्रेणियों में सूचीबद्ध हैं ।

बाँधों एवं बैराजों के कारण उत्पन्न आवास विखंडन एक प्रमुख पारिस्थितिक समस्या है, जिसके परिणामस्वरूप नदी का सतत प्रवाह कई पृथक खंडों में विभाजित हो जाता है। इससे जलीय जीवों के बीच आनुवंशिक आदान-प्रदान बाधित होता है तथा प्रजातियों की अनुकूलन क्षमता घटती है, जिसके फलस्वरूप जैव-विविधता में दीर्घकालिक गिरावट होती है । यह प्रभाव केवल मछलियों तक सीमित नहीं है, बल्कि डॉल्फिन, घड़ियाल एवं कछुओं जैसे अन्य जलीय जीवों के आवासों को भी प्रभावित करता है।

गंगा नदी एक समृद्ध जलीय पारिस्थितिकी तंत्र है, जिसमें लगभग 2000 प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें मछलियाँ, जूप्लवक, फाइटोप्लवक तथा अन्य जलीय जीव शामिल हैं। उच्च जैव-विविधता को एक स्वस्थ एवं संतुलित पारिस्थितिकी तंत्र का सूचक माना जाता है। तथापि, बाँध निर्माण के साथ-साथ औद्योगिक एवं कृषि प्रदूषण (जैसे डीडीटी, लिन्यूरॉन, बेनोमिल, एट्राज़ीन) तथा अत्यधिक मत्स्य दोहन के कारण प्राकृतिक आवासों का क्षरण हुआ है, जिससे अनेक प्रजातियों की संख्या में उल्लेखनीय कमी आई है।

गंगा नदी पर निर्मित बैराजों एवं मानवजनित गतिविधियों के कारण मत्स्य जैव-विविधता और नदी पारिस्थितिकी गंभीर रूप से प्रभावित हो रही है। बैराजों एवं नहर प्रणालियों से सिंचाई और जल प्रबंधन को लाभ मिला है, किंतु प्राकृतिक प्रवाह में परिवर्तन, जल मोड़ एवं आवास विखंडन के कारण मछलियों के प्रजनन, प्रवास और वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। विशेष रूप से हिल्सा जैसी प्रवासी मछलियों का प्रवास बाधित हुआ है, जिससे उनकी संख्या में कमी आई है। जल गुणवत्ता, तलछट प्रवाह एवं पोषक तत्वों के असंतुलन से मत्स्य उत्पादन भी प्रभावित होता है। इसलिए सतत मत्स्य प्रबंधन हेतु पर्यावरणीय प्रवाह बनाए रखना, फिश पास विकसित करना तथा वैज्ञानिक नदी प्रबंधन अपनाना आवश्यक है, ताकि गंगा नदी की मत्स्य जैव-विविधता एवं उत्पादन का दीर्घकालिक संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके।

गंगा नदी में बाँध एवं बैराज निर्माण के पारिस्थितिक प्रभावों के आकलन के दौरान निम्नलिखित सुझावों पर विचार करना आवश्यक है।

- **समग्र पर्यावरणीय प्रभाव का आकलन करना:** किसी भी बाँध या बैराज के निर्माण से पूर्व संभावित पारिस्थितिक प्रभावों के आकलन हेतु विस्तृत पर्यावरण प्रभाव आकलन किया जाना आवश्यक है। इसमें जैव-विविधता, जल-विज्ञान, जल गुणवत्ता, मृदा अपरदन तथा सामाजिक प्रभावों का समग्र अध्ययन शामिल होना चाहिए। निष्पक्ष एवं वैज्ञानिक परिणामों के लिए यह आकलन स्वतंत्र एवं योग्य विशेषज्ञों द्वारा किया जाना चाहिए।
- **शमन उपायों का कार्यान्वयन:** पर्यावरणीय प्रभाव आकलन के निष्कर्षों के आधार पर उपयुक्त शमन उपायों की पहचान एवं क्रियान्वयन आवश्यक है। इनमें आवास पुनर्स्थापन, मछलियों के प्रवास हेतु फिश पासेज, तलछट प्रबंधन तथा स्थानीय समुदायों पर प्रभाव कम करने के उपाय शामिल हैं। इनका मुख्य उद्देश्य नकारात्मक प्रभावों को न्यूनतम करना एवं पारिस्थितिक संतुलन को यथासंभव पुनर्स्थापित करना है।

- **सतत जलविद्युत प्रथाओं को बढ़ावा देना:** यदि जलविद्युत विकास आवश्यक हो, तो सतत एवं पर्यावरण-अनुकूल प्रथाओं को अपनाना आवश्यक है। इसके अंतर्गत रन-ऑफ-द-रिवर जैसी परियोजनाओं को बढ़ावा देना चाहिए, जो जलभराव एवं पारिस्थितिक प्रभावों को कम करते हुए पर्यावरणीय प्रवाह बनाए रखती हैं। साथ ही, मछली-अनुकूल टरबाइन एवं फिश पासेज का उपयोग जलीय जैव-विविधता और मछलियों के प्राकृतिक प्रवास को संरक्षित करने में सहायक हो सकता है।
- **वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों पर विचार करना:** जलविद्युत के अतिरिक्त सौर एवं पवन ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को बढ़ावा देना आवश्यक है, ताकि नदियों पर निर्भरता एवं पारिस्थितिक दबाव कम किया जा सके। साथ ही, विकेंद्रीकृत ऊर्जा उत्पादन स्थानीय ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति बिना बड़े बाँधों के निर्माण के प्रभावी रूप से कर सकता है, जिससे पर्यावरणीय व्यवधान भी कम होते हैं ।
- **संस्थागत एवं कानूनी ढाँचे को सुदृढ़ करना:** बाँध एवं बैराज निर्माण से संबंधित संस्थागत एवं कानूनी ढाँचे को सुदृढ़ करना आवश्यक है। इसके अंतर्गत पर्यावरणीय नियमों का प्रभावी अनुपालन, निगरानी एवं प्रवर्तन क्षमता में वृद्धि, तथा निर्णय प्रक्रिया में पारदर्शिता एवं जनभागीदारी सुनिश्चित करना शामिल है।
- **संचयी प्रभाव आकलन को प्राथमिकता देना:** प्रत्येक परियोजना के पृथक मूल्यांकन के बजाय, नदी बेसिन में संचालित सभी परियोजनाओं के संचयी प्रभावों का आकलन आवश्यक है। यह प्रक्रिया जैव-विविधता, जल-विज्ञान एवं सामाजिक-आर्थिक पहलुओं पर संयुक्त प्रभावों की पहचान कर सतत योजना एवं प्रभावी प्रबंधन में सहायता प्रदान करती है।
- **जन-जागरूकता और सहभागिता को प्रोत्साहित करना:** बाँध एवं बैराज निर्माण के पारिस्थितिक प्रभावों के प्रति जनजागरूकता बढ़ाना तथा निर्णय प्रक्रिया में स्थानीय समुदायों और हितधारकों की भागीदारी सुनिश्चित करना आवश्यक है। स्थानीय ज्ञान एवं निरंतर संवाद से अधिक सतत एवं प्रभावी निर्णय लिए जा सकते हैं। इन उपायों को अपनाकर गंगा नदी क्षेत्र में पारिस्थितिक दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है, जिससे जैव-विविधता, मछली प्रवास, नदी पारिस्थितिकी तथा स्थानीय समुदायों के दीर्घकालिक हितों का संरक्षण संभव होगा।

राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की उन्नति के लिए आवश्यक है:

महात्मा गांधी

जलवायु परिवर्तन और मछलियों के प्रजनन पर उसका प्रभाव

रेखा एम. यू., टीना जयकुमार टी. के. एवं चरण रवि

भाकृअनुप - राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

जलवायु परिवर्तन दुनिया भर में जलीय पारिस्थितिक तंत्रों के लिए सबसे गंभीर खतरों में से एक बन चुका है। वैश्विक तापन के सबसे प्रभावशाली परिणामों में समुद्री सतह के तापमान में वृद्धि और समुद्र स्तर में वृद्धि शामिल हैं। अनुमानों के अनुसार, 21वीं सदी के अंत तक समुद्री सतह के तापमान में 3°C तक की वृद्धि हो सकती है, जबकि समुद्र स्तर में 40 सेमी से लेकर 1.2 मीटर तक की वृद्धि होने की संभावना है। ये भौतिक परिवर्तन पहले से ही जलीय पारिस्थितिक तंत्रों को बदल रहे हैं—जैसे कि लवणता के ढाल में परिवर्तन, महासागरीय अम्लीकरण में तेजी, ऊष्मीय स्तरीकरण में वृद्धि और तटीय तथा ज्वारीय क्षेत्रों में आवास की उपलब्धता में बदलाव।

जलीय जीव, विशेष रूप से मछलियाँ और अकशेरुकी प्राणी, बहिर्जाततापी या परिवर्तनशील तापमान वाले (poikilothermic) होते हैं, अर्थात् उनके शरीर का तापमान बाहरी वातावरण पर निर्भर करता है। इस पर निर्भरता के कारण वे वातावरण में मामूली बदलावों के प्रति भी अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। समुद्री सतह के तापमान में वृद्धि और लवणता में परिवर्तन उनके शरीर क्रिया विज्ञान, व्यवहार, वितरण और अंततः प्रजनन सफलता पर गहरा प्रभाव डाल सकते हैं।

जैविक प्रक्रियाओं में, प्रजनन विशेष रूप से संवेदनशील होता है। यह तापमान संकेतों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील जटिल हार्मोनल फीडबैक तंत्र द्वारा नियंत्रित होता है। परिवेश के तापमान में छोटे बदलाव भी गामेटजनन (gametogenesis), लिंग भेद, हार्मोन संश्लेषण और भ्रूण विकास को प्रभावित कर सकते हैं। विशेष रूप से, मुहाना जैसे संक्रमणीय पर्यावरण में रहने वाली प्रजातियाँ, जहाँ तापमान और लवणता में उतार-चढ़ाव पहले से ही सामान्य होते हैं, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के कारण और अधिक पर्यावरणीय तनाव का सामना कर सकती हैं।

थर्मल स्ट्रेस और प्रजनन क्रिया

तापमान अधिकांश एक्टोथर्म्स (बाह्य ताप नियंत्रित जीवों), विशेष रूप से मछलियों के लिए एक प्रमुख शारीरिक संकेतक के रूप में कार्य करता है, जो उनके चयापचय दर, व्यवहार, रोग प्रतिरक्षा और प्रजनन को प्रभावित करता है। जैसे-जैसे वैश्विक तापमान बढ़ रहा है, कई जलजीव प्रजातियों में प्रजनन सफलता को गंभीर खतरा उत्पन्न हो रहा है क्योंकि यह हार्मोनल मार्गों, युग्मक विकास और भ्रूणीय जीवितता को बाधित कर सकता है।

मछलियों में प्रजनन प्रक्रिया हाइपोथैलेमिक–पिट्यूटरी–गोनाडल (HPG) अक्ष द्वारा नियंत्रित होती है, जो एक ताप-संवेदनशील हार्मोनल श्रेणी है। इस अक्ष की शुरुआत हाइपोथैलेमस से गोनाडोट्रॉपिन-रिलीजिंग हार्मोन (GnRH) के स्रवण से होती है, जो पिट्यूटरी पर कार्य करता है और दो प्रमुख गोनाडोट्रॉपिन्स, फॉलिकल-स्टिमुलेटिंग हार्मोन (FSH) और ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन (LH) के स्रवण को प्रेरित करता है। ये हार्मोन विटेलोजेनेसिस, स्पर्माटोजेनेसिस और ओवुलेशन जैसे प्रजनन कार्यों को नियंत्रित करते हैं, और इनके प्रभाव संबंधित रिसेप्टर्स, फॉलिकल-स्टिमुलेटिंग हार्मोन रिसेप्टर (Fshr) और ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन रिसेप्टर (Lhcgr) के माध्यम से व्यक्त होते हैं जो गोनाड कोशिकाओं पर स्थित होते हैं।

तापमान इन प्रक्रियाओं को अनेक स्तरों पर प्रभावित करता है। उच्च जल तापमान गोनाडोट्रॉपिन-रिलीजिंग हार्मोन (GnRH) की अभिव्यक्ति को परिवर्तित कर सकता है, FSH और LH के स्रवण को बाधित कर सकता है, और उनके रिसेप्टर्स के कार्य को प्रभावित कर सकता है। इसके अतिरिक्त, नीचे के स्तर पर कार्य करने वाले एंजाइम जैसे कि Cyp11b1 (जो नर में एंड्रोजन संश्लेषण में शामिल होता है) और Cyp19a1a (अरोमेटेस), जो मादा में एंड्रोजन को एस्ट्रोजेन में परिवर्तित करता है, भी ताप-संवेदनशील होते हैं। इन जीनों की

गतिविधि या अभिव्यक्ति में व्यवधान स्टेरॉयडजननेसिस को बाधित कर सकता है, युग्मक परिपक्वता को रोक सकता है और लिंग अनुपात को असंतुलित कर सकता है।

महत्वपूर्ण रूप से, इन हार्मोनल मार्गों की ताप-संवेदनशीलता का अर्थ है कि प्रजनन के लिए इष्टतम तापमान से किसी भी प्रकार का विचलन प्रजनन क्षमता को हानि पहुँचा सकता है। उदाहरण के लिए, अधिक तापमान से ओवुलेशन में देरी या इसका दमन, शुक्राणु गुणवत्ता में गिरावट, और अंडाणुओं में एट्रेसिया (विघटन) देखा गया है। चरम मामलों में, मादा जीनोटाइप वाले व्यक्तियों का पौरुषीकरण देखा गया है, जो Cyp19a1a जीन प्रोमोटर के मिथाइलेशन जैसे एपिजेनेटिक संशोधनों के कारण होता है । यदि ये परिवर्तन स्थायी हो जाएँ, तो इससे जनसंख्या के लिंग अनुपात में असंतुलन आ सकता है और दीर्घकालीन जनसंख्या स्थायित्व पर असर पड़ सकता है।

इसके अतिरिक्त, थर्मल स्ट्रेस प्रारंभिक विकास चरणों जैसे निषेचन, भ्रूणीय विकास और हैचिंग को भी बाधित कर सकता है। मछलियों के जीवन चक्र में भ्रूण सबसे ताप-संवेदनशील चरणों में से एक होता है, और तापमान में थोड़ी सी भी वृद्धि विकास संबंधी विकृतियों या मृत्यु का कारण बन सकती है, विशेष रूप से उष्णकटिबंधीय प्रजातियों में जिनकी ताप सहनशीलता सीमित होती है। इस प्रकार के स्ट्रेस कारकों का संचयी प्रभाव प्रजनन दर को गंभीर रूप से कम कर सकता है और जलवायु परिवर्तन की स्थिति में जनसंख्या की पुनःस्थापना और लचीलापन को कमजोर कर सकता है।

प्रतिलेखनीय लचीलापन और अनुकूलन

पर्यावरणीय तनाव के प्रति जीवों की प्रतिक्रिया के मुख्य तंत्रों में से एक है जीन अभिव्यक्ति में परिवर्तन—जिसे प्रतिलेखनीय लचीलापन कहा जाता है। यह लचीलापन जीवों को आनुवंशिक उत्परिवर्तन के बिना ही अपने शारीरिक मार्गों को शीघ्रता से परिवर्तित करने की अनुमति देता है, जिससे वे अल्पकालिक और मध्यमकालिक पर्यावरणीय उतार-चढ़ावों के अनुकूल हो सकते हैं।

मछलियों में तापीय सहनशीलता और प्रजनन से संबंधित कई जीन उच्च प्रतिलेखनीय लचीलापन प्रदर्शित करते हैं। उदाहरण के लिए, हीट शॉक प्रोटीन (HSPs) की अभिव्यक्ति, जो तनाव की स्थिति में विघटित प्रोटीनों को स्थिर और पुनःसंयोजित करने में सहायता करते हैं, सामान्यतः उच्च तापमान के प्रति प्रतिक्रिया स्वरूप बढ़ जाती है। इसी प्रकार, प्रजनन से संबंधित जीन जैसे *Lhcgr*, *Fshr*, *Cyp11b1* और *Cyp19a1a* की अभिव्यक्ति पर्यावरणीय स्थितियों के अनुसार परिवर्तित हो सकती है। इन जीनों की यह लचीली प्रतिक्रिया प्रजाति और ऊतक-विशिष्ट होती है, और यह प्रजनन सफलता को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित कर सकती है।

इसके अलावा, प्रतिलेखनीय लचीलापन प्रकट लक्षणीय लचीलापन (Phenotypic Plasticity) से गहराई से जुड़ा हुआ है—यानी किसी जीव की अपनी शरीर क्रिया या व्यवहार को पर्यावरणीय संकेतों के अनुसार बदलने की क्षमता। जिन मछली आबादियों में प्रजनन संबंधी जीन अभिव्यक्ति में अधिक लचीलापन होता है, वे तनाव की स्थितियों में भी प्रजनन बनाए रखने की बेहतर संभावना रखती हैं, जिससे उनकी जनसंख्या की स्थिरता में वृद्धि हो सकती है।

लवणता तनाव और यूरिहैलिनिटी

जलवायु परिवर्तन के कारण तटीय क्षेत्रों में मीठे और खारे पानी की प्रणालियों में समुद्री जल का अतिक्रमण काफी बढ़ गया है। यह परिघटना मुख्यतः समुद्र स्तर में वृद्धि, वर्षा के स्वरूप में बदलाव, और नदी तथा मुहाना प्रणालियों में मानवीय हस्तक्षेप के कारण हो रही है। इसके परिणामस्वरूप लवणता का स्तर बढ़ रहा है, जो मीठे पानी और खारे पानी के जीवों के लिए एक प्रमुख शारीरिक तनाव कारक बन गया है।

लवणता तनाव मुख्यतः जलीय जीवों की ऑस्मोरेग्युलेटरी प्रणाली को चुनौती देता है, जिससे उन्हें बाहरी लवणता में उतार-चढ़ाव के बावजूद अपने शरीर के भीतर आयनिक और परासरणिक संतुलन बनाए रखना पड़ता है। विभिन्न मछली प्रजातियाँ इस तनाव से निपटने की अपनी-अपनी क्षमता रखती हैं। स्टेनोहैलिन प्रजातियाँ, जो केवल एक संकीर्ण लवणता सीमा में जीने की अभ्यस्त होती हैं, यदि उस सीमा से बाहर लवणता हो जाए तो उच्च मृत्यु दर का सामना करती हैं। इसके विपरीत, यूरिहैलिन प्रजातियों में व्यापक लवणता रेंज को सहन करने की शारीरिक लचीलापन होती है।

क्रमविकास के दृष्टिकोण से, उच्च और परिवर्तनशील लवणता को सहन करने की क्षमता एक चयनात्मक लाभ प्रदान करती है, विशेषकर उन मुहाना क्षेत्रों में जहाँ पर्यावरणीय

स्थितियाँ बार-बार बदलती रहती हैं। इसके अतिरिक्त, लवणता-प्रेरित तनाव प्रतिक्रियाएँ प्रजनन प्रक्रियाओं से गहराई से जुड़ी होती हैं। अत्यधिक लवणता के संपर्क में आने से हार्मोन स्तर प्रभावित हो सकते हैं, युग्मकजनन बाधित हो सकता है, और प्रजनन व्यवहार भी बदल सकता है।

मछलियों की लवणता सहनशीलता और प्रजनन लचीलापन का अध्ययन करना उन शारीरिक और आणविक अनुकूलनों को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो यूरिहैलिनिटी के मूल में हैं। इस प्रकार का ज्ञान यह समझने में सहायक है कि मछली प्रजातियाँ जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाले लवणता परिवर्तनों के प्रति कैसे प्रतिक्रिया देंगी, और साथ ही यह संरक्षण और जलीय कृषि प्रबंधन रणनीतियों को दिशा देने के लिए भी उपयोगी सिद्ध होता है।

पार-पीढ़ीय लचीलापन

जैसे-जैसे जलवायु परिवर्तन जलीय पारिस्थितिक तंत्रों पर लगातार दबाव डाल रहा है, जीवों की पीढ़ी दर पीढ़ी अनुकूलन क्षमता पर वैज्ञानिकों का ध्यान तेजी से केंद्रित हो रहा है। पार-पीढ़ीगत वह प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत माता-पिता की पीढ़ी द्वारा अनुभव किए गए पर्यावरणीय कारकों का प्रभाव उनकी संतान की संरचना और अनुकूलन क्षमता पर पड़ता है। यह तंत्र जीवों को भविष्य की संभावित पर्यावरणीय स्थितियों के लिए अपनी संतानों को पूर्व-अनुकूलित करने की अनुमति देता है, जिससे तेज़ी से हो रहे पर्यावरणीय परिवर्तनों के विरुद्ध एक संभावित रक्षा कवच प्राप्त होता है।

मछलियों में, TGP को तनावपूर्ण परिस्थितियों में बेहतर प्रदर्शन से जोड़ा गया है, जैसे कि लार्वा की जीवित रहने की दर में वृद्धि, तेज़ विकास दर, और ऊष्मा सहनशीलता । यह माना जाता है कि ये प्रभाव एपिजेनेटिक संशोधनों के माध्यम से होते हैं—जैसे कि डीएनए मिथाइलेशन, हिस्टोन संशोधन और नॉन-कोडिंग आरएनए—जो जीन की अभिव्यक्ति में परिवर्तन लाते हैं, बिना डीएनए अनुक्रम को बदले। ये परिवर्तन पर्यावरणीय संकेतों द्वारा प्रेरित हो सकते हैं और युग्मकों के माध्यम से अगली पीढ़ी को हस्तांतरित किए जा सकते हैं।

मछलियों में TGP को समझना न केवल मुहाना और तटीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली प्रजातियों की जलवायु अनुकूलन क्षमता का ज्ञान बढ़ाता है, बल्कि इसके व्यावहारिक लाभ भी हैं। यह जलीय कृषि में ऐसी प्रजनन रणनीतियाँ विकसित करने में सहायक हो सकता है जो तनाव सहनशीलता को बढ़ावा दें, और साथ ही यह भविष्य में जलवायु परिवर्तन की परिस्थितियों में प्रजातियों की स्थायित्व क्षमता का पूर्वानुमान लगाने वाले मॉडल तैयार करने में योगदान दे सकता है।

प्रजनन का समय और विकासात्मक संवेदनशीलता

मछलियों में प्रजनन प्रकिया पर्यावरणीय संकेतों के साथ अत्यधिक समन्वयित होती है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि जीवन चक्र के महत्वपूर्ण चरण अनुकूल पारिस्थितिकीय परिस्थितियों के साथ मेल खाएं। इन संकेतों में तापमान एक प्रमुख भूमिका निभाता है, जो प्रकाश-अवधि के साथ मिलकर अंडे देने की शुरुआत, युग्मजनन और प्रारंभिक विकास को नियंत्रित करता है ।

उच्च तापमान भ्रूणीय विकास को तेज़ कर सकता है, जिससे निषेचन से लेकर अंडे फूटने तक का समय कम हो जाता है। हालांकि यह लाभकारी प्रतीत हो सकता है, लेकिन तापीय तनाव के अंतर्गत तेजी से हुआ विकास अक्सर नकारात्मक प्रभावों से जुड़ा होता है, जैसे कि अंडों की गुणवत्ता में गिरावट, मृत्यु दर में वृद्धि, और आकृति संबंधी विकृतियाँ। इसके अतिरिक्त, उच्च तापमान लिंग अनुपात को भी प्रभावित कर सकता है। कई टेलीओस्ट प्रजातियों में यह पाया गया है कि अत्यधिक तापमान एरोमैटेज (Cyp19a1a) की अभिव्यक्ति को दबा देता है, जिससे नर लिंग की संख्या बढ़ जाती है ।

तापीय तनाव जनन ग्रंथियों की संरचना और युग्मकों की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है। मादा मछलियों में अत्यधिक ताप से अंडाणुओं की अपविकास प्रक्रिया या अंतिम परिपक्वता में बाधा उत्पन्न हो सकती है। नर मछलियों में ऊष्मा के प्रभाव से अंडकोषीय संरचना में बदलाव, शुक्राणुओं की गति में कमी, और निषेचन दर में गिरावट देखी गई है । ये समस्याएँ तब और गंभीर हो सकती हैं जब तापीय तनाव युग्मजनन या भ्रूण विकास की संवेदनशील समयावधियों के दौरान हो।

इसलिए, प्रजनन की घटनाओं का तापमान के इष्टतम समय खिड़कियों) के साथ समन्वय आवश्यक है ताकि संतान प्राप्ति की सफलता सुनिश्चित की जा सके। जलवायु परिवर्तन

के कारण मौसमी तापमान की रूपरेखा में आए बदलाव यदि इस समन्वय को बाधित करते हैं, तो इससे जनसंख्या गतिकी पर गंभीर प्रभाव पड़ सकता है, विशेषकर उन प्रजातियों में जिनकी प्रजनन क्षमता तापमान के संकीर्ण दायरे पर निर्भर करती है।

जलवायु परिवर्तन मछलियों के प्रजनन और जनसंख्या स्थिरता के लिए गहरे और बहुआयामी खतरे उत्पन्न करता है, विशेष रूप से उन बाह्यतापीय प्रजातियों के लिए जो गतिशील जलीय पारिस्थितिक तंत्रों में निवास करती हैं। मानवजनित ऊष्मीकरण और समुद्री जल के अंतःप्रवाह के कारण बढ़ते तापमान और लवणता जैसे कारक युग्मजनन, हार्मोन नियंत्रण, लिंग विभेदन और प्रारंभिक विकासात्मक चरणों जैसे महत्वपूर्ण जैविक प्रक्रियाओं को बाधित करते हैं।

प्रदर्शनात्मक लचीलापन, प्रजनन जीनों की प्रतिलेखन संबंधी परिवर्तनशीलता और पीढ़ीगत लचीलापन के बीच की परस्पर क्रिया यह दर्शाती है कि मछलियाँ पर्यावरणीय तनावों से निपटने की जटिल किंतु असमान क्षमताएँ रखती हैं। यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि मछलियाँ आणविक, शारीरिक और पीढ़ीगत स्तरों पर इन परिवर्तनों का कैसे उत्तर देती हैं, ताकि भविष्य के जलवायु परिदृश्यों में जलीय जैव विविधता की सहनशीलता का पूर्वानुमान लगाया जा सके। अंततः, इस प्रकार की समझ संरक्षण रणनीतियों, जलीय कृषि प्रथाओं और पर्यावरणीय प्रबंधन योजनाओं को दिशा दे सकती है, जिससे तेज़ी से बदलती दुनिया में मछली जनसंख्या की निरंतरता सुनिश्चित की जा सके।

हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा तो है ही, यही जनतंत्रात्मक भारत में राजभाषा भी होगी:

सी. राजगोपालाचारी

हिंदी ने हमें जोड़ा है, हिंदी ही हमें आगे बढ़ाएगी।

प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना: भारत में मछुआरों के जीवन स्तर में सुधार एवं नीली क्रांति को बढ़ावा देने में इसकी भूमिका

सुरेंद्र कुमार मौर्य, रजनी चंद्रन, अंकित सिंह एवं राजीव कुमार सिंह

भाकृअनुप- राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो ,लखनऊ

प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना भारत सरकार के मत्स्य पालन, पशुपालन एवं डेयरी मंत्रालय के अंतर्गत मत्स्य पालन विभाग द्वारा सितंबर 2020 में प्रारम्भ की गई एक प्रमुख योजना है। यह योजना वर्ष 2020–21 से 2024–25 तक ₹20,050 करोड़ के बजट के साथ पूरे देश में लागू की गई। इसका मुख्य उद्देश्य मत्स्य क्षेत्र का सतत एवं समावेशी विकास करना, मछुआरों एवं मत्स्य किसानों की आय में वृद्धि करना, रोजगार के नए अवसर सृजित करना तथा आत्मनिर्भर भारत और नीली क्रांति के लक्ष्य को साकार करना है। यह योजना क्लस्टर अथवा क्षेत्र-आधारित दृष्टिकोण पर आधारित है। यह न केवल मछुआरों और मत्स्य किसानों के जीवन स्तर को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है, बल्कि भारत को मत्स्य उत्पादन, निर्यात और नीली अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर मजबूत बनाने की दिशा में भी एक महत्वपूर्ण कदम है।

प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना की आवश्यकता

- भारत में मत्स्य पालन एवं जलीय कृषि खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन, आय वृद्धि तथा देश की अर्थव्यवस्था के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। वर्तमान में इस क्षेत्र से लगभग 1.6 करोड़ मछुआरे एवं मत्स्य किसान प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं, जबकि मत्स्य उत्पादन, प्रसंस्करण, परिवहन एवं विपणन जैसी गतिविधियों के माध्यम से इससे लगभग दोगुने लोगों को अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त होता है। वित्त वर्ष 2022–23 में मत्स्य क्षेत्र का योगदान देश के सकल मूल्य वर्धन में लगभग 1.09% तथा कृषि में 6.72% रहा। भारत के पास लगभग 8,118 किलोमीटर लंबी समुद्री तटरेखा तथा लगभग 44.1 लाख टन समुद्री मत्स्य संसाधनों की क्षमता उपलब्ध है। इसके बावजूद मत्स्य उत्पादन, उत्पादकता, आधुनिक अवसंरचना, गुणवत्तापूर्ण मत्स्य बीज, जैसी कई चुनौतियाँ मौजूद थीं।
- इन्हीं चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने वर्ष 2015–16 से 2019–20 तक नीली क्रांति कार्यक्रम लागू किया, जिसके परिणामस्वरूप देश का मत्स्य उत्पादन 10.26 मिलियन मीट्रिक टन से बढ़कर 13.75 मिलियन मीट्रिक टन तथा जलीय कृषि की उत्पादकता 2.3 टन प्रति हेक्टेयर से बढ़कर 3.3 टन प्रति हेक्टेयर हो गई। इन सभी चुनौतियों के समाधान, आधुनिक अवसंरचना विकास, मूल्य संवर्धन, निर्यात वृद्धि और मछुआरों के जीवन स्तर सुधार हेतु एक व्यापक एवं दीर्घकालिक योजना की आवश्यकता महसूस की गई।
- मत्स्य क्षेत्र भारत के विदेशी मुद्रा अर्जन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। भारत प्रमुख समुद्री खाद्य निर्यातक देशों में शामिल है। वर्ष 2023–24 में समुद्री उत्पादों के निर्यात से लगभग 7.38 अरब अमेरिकी डॉलर की आय हुई, जिसमें झींगे का प्रमुख योगदान रहा। साथ ही 2022–23 में कुल मत्स्य निर्यात में जलीय कृषि उत्पादों की हिस्सेदारी लगभग 63% रही। इससे स्पष्ट है कि इस क्षेत्र के वैज्ञानिक एवं आधुनिक विकास से आय वृद्धि, रोजगार सृजन, निर्यात विस्तार और अर्थव्यवस्था को मजबूती मिल सकती है। इन्हीं आवश्यकताओं और मत्स्य क्षेत्र की अपार संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने सितंबर 2020 में ₹20,050 करोड़ के बजट के साथ प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना प्रारम्भ की।

प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना के प्रमुख लक्ष्य

- वर्ष 2018–19 में 13.75 मिलियन मीट्रिक टन के मत्स्य उत्पादन को बढ़ाकर वर्ष 2024–25 तक 22 मिलियन मीट्रिक टन करना।

- जलीय कृषि की उत्पादकता को 3 टन प्रति हेक्टेयर से बढ़ाकर 5 टन प्रति हेक्टेयर करना।
- देश में प्रति व्यक्ति मछली उपभोग को 5 किलोग्राम से बढ़ाकर 12 किलोग्राम करना।
- कृषि सकल मूल्य वर्धन में मत्स्य क्षेत्र के योगदान को 7.28% से बढ़ाकर लगभग 9% करना।
- मत्स्य एवं मत्स्य उत्पादों के निर्यात मूल्य को 46,589 करोड़ रुपये (2018–19) से बढ़ाकर 1,00,000 करोड़ रुपये तक पहुँचाना।
- कटाई उपरांत होने वाली हानि को घटाकर लगभग 10% तक सीमित करना।
- मत्स्य क्षेत्र की संपूर्ण मूल्य श्रृंखला में 55 लाख प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर सृजित करना।

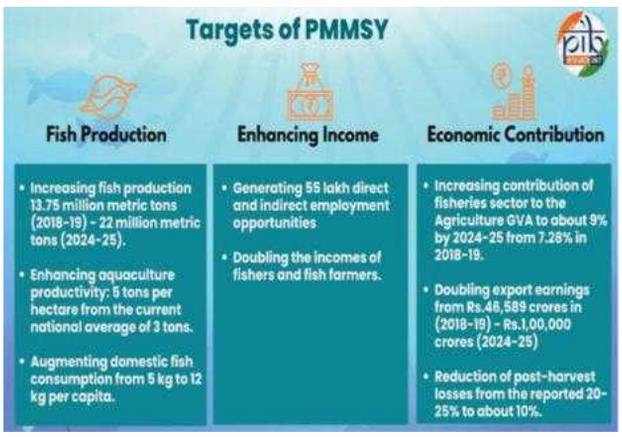

वित्तपोषण योजना

प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना को केंद्रीय क्षेत्र योजना तथा केंद्र प्रायोजित योजना के माध्यम से लागू किया गया है।

(i) केंद्रीय क्षेत्र योजना

इस योजना के अंतर्गत कुल ₹1,720 करोड़ का व्यय पूर्णतः भारत सरकार द्वारा वहन किया जाता है। राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड जैसी केंद्रीय एजेंसियों द्वारा संचालित लाभार्थी-आधारित गतिविधियों में सामान्य वर्ग के लाभार्थियों को परियोजना लागत का 40% तथा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं महिला लाभार्थियों को 60% तक केंद्रीय वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

(ii) केंद्र प्रायोजित योजना

इस घटक के अंतर्गत कुल ₹18,330 करोड़ की परियोजनाओं का वित्तपोषण केंद्र सरकार, राज्य सरकार तथा लाभार्थियों के संयुक्त योगदान से किया जाता है। इसमें केंद्र सरकार का अंश ₹7,687 करोड़, राज्य सरकारों का अंश ₹4,880 करोड़ तथा लाभार्थियों का योगदान ₹5,763 करोड़ निर्धारित किया गया है।

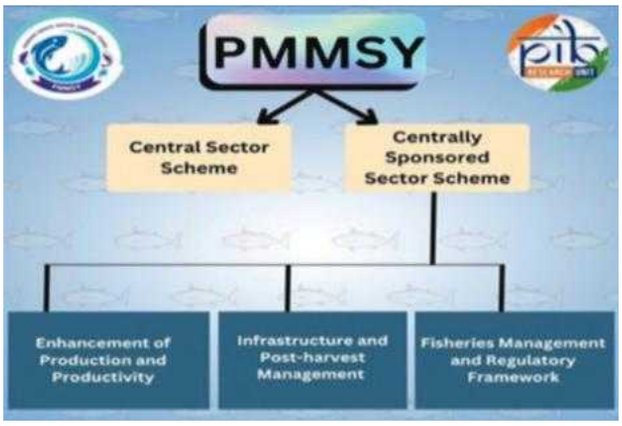

प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना की प्रमुख उपलब्धियाँ

- प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना के अंतर्गत देशभर में मत्स्य पालन एवं जलीय कृषि के विकास के लिए अनेक महत्वपूर्ण कार्य किए गए हैं। योजना के माध्यम से मत्स्य बंदी अवधि के दौरान लगभग 5.95 लाख मछुआरा परिवारों को सहायता प्रदान की गई। इसके अलावा समुद्री शैवाल की खेती के लिए 1.13 लाख राफ्ट एवं ट्यूबनेट, जलाशयों एवं अन्य जल निकायों में 52,058 केज एवं पेन तथा मत्स्य परिवहन को सुदृढ़ बनाने के लिए 27,189 परिवहन सुविधाओं को स्वीकृति प्रदान की गई।
- योजना के तहत जलीय कृषि के आधुनिकीकरण पर विशेष बल दिया गया है। इसके अंतर्गत 23,285 हेक्टेयर अंतर्देशीय मत्स्य तालाबों का विकास, 12,081 पुनर्संचारी जलीय कृषि प्रणालियों की स्थापना, 4,205 बायोफ्लॉक इकाइयों का निर्माण, 922 मत्स्य एवं झींगा हैचरी, 1,091 मत्स्य आहार निर्माण इकाइयाँ तथा 634 बर्फ संयंत्र एवं कोल्ड स्टोरेज स्थापित किए गए हैं। इन सुविधाओं से मत्स्य उत्पादन, उत्पादकता तथा गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार हुआ है।

- मछुआरों की आजीविका को सुदृढ़ बनाने के लिए योजना के अंतर्गत 6,896 मत्स्य खुदरा बाजार एवं कियोस्क, 6,706 प्रतिस्थापन नौकाएँ, 1,338 मत्स्य नौका उन्नयन परियोजनाएँ, 480 गहरे समुद्र में मछली पकड़ने वाले पोत, 2,259 जैव-शौचालय तथा 102 मत्स्य सेवा केंद्र स्थापित किए गए हैं। इन प्रयासों से मत्स्य विपणन, प्रसंस्करण, परिवहन तथा तकनीकी सेवाओं में सुधार हुआ है।
- इन सभी उपलब्धियों से स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना केवल मत्स्य उत्पादन बढ़ाने तक सीमित नहीं है, बल्कि आधुनिक अवसंरचना, वैज्ञानिक तकनीकों, कौशल विकास, डिजिटल सेवाओं और रोजगार सृजन के माध्यम से भारत के मत्स्य क्षेत्र को अधिक सशक्त, आत्मनिर्भर और प्रतिस्पर्धी बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

मछुआरों के जीवन स्तर में प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना का योगदान

भारत सरकार द्वारा प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा का संचालन देश में मत्स्य क्षेत्र के समग्र विकास के उद्देश्य से किया जा रहा है। इस योजना के माध्यम से मछली उत्पादन और निर्यात में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, जिसके परिणामस्वरूप मछुआरों की आय और आजीविका में सुधार देखा गया है। इसके अंतर्गत तटीय क्षेत्रों और ग्रामीण मछुआरा समुदायों में अवसंरचना का विकास किया जा रहा है, जिससे न केवल मत्स्य क्षेत्र बल्कि संबंधित पशुपालन एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी मजबूती मिल रही है। इस प्रकार यह योजना किसानों और मछुआरों की आय वृद्धि के साथ-साथ ग्रामीण विकास और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

मछली उत्पादन एवं निर्यात में वृद्धि

मछली उत्पादन और मत्स्य निर्यात में हुई उल्लेखनीय वृद्धि का सकारात्मक प्रभाव मछुआरों के जीवन स्तर पर स्पष्ट रूप से देखा गया है। मत्स्य निर्यात का मूल्य लगभग ₹46,666 करोड़ से बढ़कर ₹62,408 करोड़ हो गया, जिससे मछुआरों की आय में वृद्धि, आजीविका की सुरक्षा तथा ग्रामीण एवं तटीय क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसर सृजित हुए हैं।

जलवायु परिवर्तन पर अनुसंधान

मत्स्य क्षेत्र पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को समझने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत विभिन्न अनुसंधान संस्थानों द्वारा निरंतर अध्ययन किए जा रहे हैं। सेंट्रल मरीन फिशरीज रिसर्च इंस्टीट्यूट की वैज्ञानिक रिपोर्टों के अनुसार भारत के लगभग 91.1 प्रतिशत समुद्री मछली भंडार अभी भी स्वस्थ स्थिति में हैं। शोध निष्कर्ष यह भी दर्शाते हैं कि पर्यावरणीय एवं जलवायु परिवर्तन के कारण मत्स्य उत्पादन में समय-समय पर उतार-चढ़ाव देखा जाता है, हालांकि पिछले कुछ वर्षों में समुद्री मत्स्य उत्पादन अपेक्षाकृत स्थिर बना हुआ है।

तटीय गाँवों में बुनियादी ढाँचे का विकास

केंद्र सरकार तटीय क्षेत्रों में रहने वाले मछुआरों के जीवन स्तर को बेहतर बनाने के लिए जलवायु-संवेदनशील तटीय मछुआरा ग्राम कार्यक्रम का संचालन कर रही है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत मछली सुखाने के यार्ड, प्रसंस्करण केंद्र, मछली बाजार, आइस प्लांट, कोल्ड स्टोरेज तथा मछली अवतरण (फिशिंग) जेटी जैसी आधुनिक आधारभूत सुविधाओं का विकास किया जा रहा है। इसके साथ ही समुद्री शैवाल खेती, कृत्रिम रीफ निर्माण तथा हरित ईंधन के उपयोग जैसी जलवायु-अनुकूल गतिविधियों को भी बढ़ावा दिया जा रहा है, जिससे तटीय मत्स्य समुदायों की आजीविका अधिक सुरक्षित, सशक्त और टिकाऊ बन सके।

मछली भंडार बढ़ाने के लिए नई पहल

सरकार मछली संसाधनों के संवर्धन के लिए रिवर रेंचिंग और सी रेंचिंग जैसी गतिविधियों को प्रोत्साहित कर रही है। इन कार्यक्रमों के अंतर्गत नदियों एवं समुद्री क्षेत्रों में मछली के बीज (फिश फिंगरलिंग्स) का संचयन किया जाता है, जिससे प्राकृतिक मछली भंडार में वृद्धि होती है। इस प्रक्रिया से मत्स्य उत्पादन में सुधार होता है तथा मछुआरों की आय और आजीविका के अवसरों को भी बढ़ावा मिलता है।

नीली क्रांति में प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना का योगदान

भारत में नीली क्रांति की शुरुआत मत्स्य क्षेत्र के विकास को गति देने के उद्देश्य से की गई थी, जिसके अंतर्गत प्रारम्भिक

चरण में 1985–90 की सातवीं पंचवर्षीय योजना में मत्स्यपालक विकास एजेंसियाँ तथा 1992–97 की आठवीं पंचवर्षीय योजना में गहन समुद्री मत्स्य पालन कार्यक्रम शुरू किए गए। इसके बाद वर्ष 2015–16 में नीली क्रांति योजना लागू की गई, जिसका उद्देश्य मछली उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाना था, लेकिन इसमें मूल्य श्रृंखला, अवसंरचना और तकनीकी विकास की कई कमियाँ रह गईं। इन्हीं कमियों को दूर करने के लिए वर्ष 2020 में प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना शुरू की गई, जिसे ₹20,050 करोड़ के निवेश के साथ 2020–21 से 2024–25 तक लागू किया जा रहा है। साथ ही, प्रधानमंत्री मत्स्य किसान समृद्धि सह-योजना (₹6,000 करोड़) जैसी सहायक योजनाओं के जरिए मत्स्य क्षेत्र को औपचारिक, संगठित और आर्थिक रूप से मजबूत बनाया जा रहा है। इस प्रकार, प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना ने नीली क्रांति को एक नई दिशा देते हुए इसे अधिक आधुनिक, टिकाऊ और समावेशी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

उत्पादन में वृद्धि

प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना के अंतर्गत भारत का मत्स्य उत्पादन वर्ष 2024–25 में लगभग 195 लाख टन तक पहुँच गया है, जो 2013–14 की तुलना में 104% अधिक है। अंतर्देशीय मत्स्य पालन में 142% की वृद्धि दर्ज की गई है, जिससे भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा मछली उत्पादक देश बन गया है। इस योजना ने उत्पादन के साथ-साथ मछली निर्यात को भी बढ़ावा दिया है, जिससे भारत की वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति और सुदृढ़ हुई है।

बुनियादी ढांचा एवं नवाचार

इस योजना के अंतर्गत आधुनिक मत्स्य अवसंरचना और तकनीकी नवाचार को बढ़ावा दिया गया है। बायोफ्लॉक पुनर्संचारी जलीय कृषि प्रणाली केज कल्चर और समुद्री शैवाल खेती जैसी तकनीकों ने उत्पादन को अधिक वैज्ञानिक और लाभकारी बनाया है। साथ ही मत्स्य बंदरगाहों, कोल्ड स्टोरेज, आइस प्लांट, फिश मार्केट और एकीकृत एक्वा पार्कों के विकास से मत्स्य मूल्य श्रृंखला मजबूत हुई है और पोस्ट-हार्वेस्ट नुकसान में कमी आई है।

रोजगार सृजन

प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना ने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन और आजीविका सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस योजना के माध्यम से मछली पालन के आधुनिकीकरण के जरिए लगभग 58 लाख प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर सृजित हुए हैं। लाभार्थी-आधारित गतिविधियों के अंतर्गत महिलाओं को 60% तक सब्सिडी प्रदान की गई है, जिससे 99,000 से अधिक महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाया गया है।

सरकारी योजनाएँ एवं भविष्य की दृष्टि

सरकार पाँच एकीकृत एक्वा पार्कों की स्थापना और आधारित स्मार्ट फिशरीज जैसे कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान दे रही है। इन पहलों का उद्देश्य मत्स्य क्षेत्र को अधिक आधुनिक, टिकाऊ और लाभकारी बनाना है। यह प्रयास भारत को विकसित भारत 2047 और नीली अर्थव्यवस्था के लक्ष्य की ओर तेजी से आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना ने भारत के मत्स्य क्षेत्र के समग्र एवं सतत विकास को नई दिशा प्रदान की है। इस योजना के माध्यम से मत्स्य उत्पादन, आधुनिक अवसंरचना, वैज्ञानिक तकनीकों तथा मूल्य श्रृंखला को सुदृढ़ करने के साथ-साथ मछुआरों एवं मत्स्य किसानों की आय, रोजगार और जीवन स्तर में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। इसके अतिरिक्त, उत्पादन वृद्धि, तकनीकी नवाचार, आधारभूत संरचना विकास तथा सतत मत्स्य पालन को बढ़ावा देकर इस योजना ने देश की नीली क्रांति को नई गति प्रदान की है। अतः यह कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना मछुआरों के सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तीकरण के साथ भारत के मत्स्य क्षेत्र को अधिक आधुनिक, आत्मनिर्भर, प्रतिस्पर्धी एवं सतत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

हिंदी किसी एक प्रदेश की भाषा नहीं बल्कि देश में सर्वत्र बोली जाने वाली भाषा है:

विलियम केरी

एकीकृत कृषि प्रणाली मे मछली पालन के अंतर्गत मछली प्रजातियों का चयन

मुकुंद कुमार, ब्रह्म प्रकाश, सुधीर कुमार सिंह, वेदप्रकाश सिंह एवं अभिषेक कुमार सिंह

भाकृअनुप - भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

तालाबों में कई तरह की मछलियाँ पाली जाती हैं। मछली की प्रजातियों का चुनाव इस बात पर निर्भर करता है कि वे उस माहौल में कितनी अच्छी तरह ढल सकती हैं और उनकी खाने की आदतें कैसी हैं। तालाब में मछली डालने के लिए बीज की उपलब्धता, तेज़ी से बढ़ने की क्षमता, छोटी फ़ूड चेन, दूसरों को न खाने वाला स्वभाव, अच्छी सेहत और बाज़ार में माँग जैसे आधारों पर मछलियाँ चुनी जाती हैं। इसके अलावा, एक-दूसरे के साथ रहने लायक प्रजातियों, जैसे पानी की अलग-अलग परतों में रहने वाली मछलियों को अक्सर एक साथ पाला जाता है; इस तरीके को 'मिश्रित मछली पालन' कहा जाता है। इस तरीके से तालाब में मौजूद सभी तरह के प्राकृतिक भोजन का सही इस्तेमाल हो पाता है, जिससे मछली का उत्पादन ज़्यादा होता है। मछली पालन के लिए तालाब की गहराई आदर्श रूप से 2 मीटर होनी चाहिए और पानी का स्तर कभी भी 1 मीटर से कम नहीं होना चाहिए। तालाब में मौजूद खास तरह का प्राकृतिक भोजन उसमें पलने वाली मछलियों की बढ़त पर असर डालता है; इसलिए, सही मछली प्रजाति चुनने से तालाब की उत्पादकता बढ़ सकती है। पानी की गुणवत्ता के खास कारकों की वजह से, कतला मछली कुछ खास तरह के तालाबों में अच्छी तरह पनपती है, जबकि मृगल या रोहू हालात के हिसाब से दूसरे तालाबों में बेहतर बढ़ती हैं। उदाहरण के लिए, जिन तालाबों में सड़ने-गलने वाला जैविक पदार्थ ज़्यादा होता है, वहाँ मृगल या कॉमन कार्प की बढ़त बेहतर होती है; इसलिए किसान ऐसे तालाबों में इन प्रजातियों की संख्या (स्टॉकिंग डेंसिटी) बढ़ाकर उत्पादन बढ़ा सकते हैं। इसी तरह, गहरे तालाब रोहू की बढ़त के लिए अच्छे होते हैं, जबकि बहुत ज़्यादा जलीय वनस्पति वाले तालाब ग्रास कार्प की बढ़त में मदद करते हैं। नतीजतन, मछली पालक अपने तालाबों में मौजूद प्राकृतिक भोजन के प्रकार और मात्रा का सही अंदाज़ा लगाकर ज़्यादा से ज़्यादा पैदावार पा सकते हैं, इस लेख में इसी विषय पर विस्तार से चर्चा की गई है।

भारतीय प्रमुख कार्प

प्रजाति	खाने की आदतें	भोजन का क्षेत्र	प्रजनन क्षमता (अंडे/किग्रा)
कतला	ज़ूप्लैंकटन	ऊपरी परत	1.5–2.0 लाख
रोहू	ज़ूप्लैंकटन/फाइटोप्लैंकटन	बीच की परत	2.26–2.8 लाख
मृगल	सड़ने-गलने वाला जैविक पदार्थ/डेट्रिटस	निचली परत	1.24–1.9 लाख

विदेशज प्रमुख कार्प

प्रजाति	खाने की आदतें	भोजन का क्षेत्र	प्रजनन क्षमता (अंडे/किग्रा)
सिल्वर कार्प	फाइटोप्लैं-कटन	ऊपरी परत (घास/पानी के खरपतवार)	1.45–2.44 लाख
ग्रास कार्प	शाकाहारी	सबसे निचली परत	0.8–1 लाख
कॉमन कार्प	सड़ने-गलने वाला ऑर्गे-निक पदार्थ	सतह/बीच/किनारे वाले हिस्से	1.5–2.5 लाख

आमतौर पर, मछली पालन के लिए इन मछलियों की प्रजातियों को पाला जाता है:

इंडियन मेजर कार्प्स

कतला: यह मछली तालाब की ऊपरी परत में रहती है और इसका मुख्य भोजन ज़ूप्लवक है। इसका सिर बड़ा होता है और मुँह ऊपर की ओर होता है। यह तालाबों, नदियों, झीलों

और जलाशयों में पाई जाती है। यह मछली तेज़ी से बढ़ती है और एक साल में लगभग 1–1.25 किलोग्राम वज़न की हो जाती है। यह मुख्य रूप से तालाब की ऊपरी परतों में रहती है, जो कतला मछली के लिए सबसे अच्छी जगह है; इसलिए, ऐसे तालाबों में कतला की ज़्यादा संख्या में मछली डालनी चाहिए।

रोहू: रोहू एक बहुत लोकप्रिय मछली है। यह तालाब के बीच वाले हिस्से में रहती है और मुख्य रूप से ज़ूप्लवक खाती है। इसका शरीर लंबा होता है और मुँह थोड़ा नीचे की ओर (sub-terminal) होता है। यह एक साल में लगभग 0.8–1.0 किलोग्राम वज़न की हो जाती है। गहरे तालाबों में रोहू की ज़्यादा संख्या में मछली डालनी चाहिए।

मृगल (नैनी): यह मछली तालाब की तली में रहती है और मुख्य रूप से सड़ने-गलने वाले ऑर्गेनिक पदार्थ खाती है। इसका शरीर सुडौल, पेट गोल और पूंछ गहरी कटी हुई होती है। मृगल एक साल में लगभग 600–700 ग्राम वज़न की हो जाती है। जिन तालाबों की तली में गाद की मोटी परत होती है, वहाँ मृगल की ज़्यादा संख्या में मछली डालनी चाहिए।

विदेशज कार्प्स

सिल्वर कार्प: इस मछली को 1959 में लाया गया था। कतला मछली की तरह, यह भी तालाब की ऊपरी परतों में रहती है और इसका मुख्य भोजन फाइटोप्लवक है। इसे चीन से लाया गया था। इस मछली का सिर छोटा और नुकीला होता है। यह तेज़ी से बढ़ती है और एक साल में लगभग 11.5 किलोग्राम वज़न की हो जाती है। यह मछली तालाबों में बहुत ज़्यादा शैवाल की समस्या को कम करने में मदद करती है।

ग्रास कार्प: यह मछली तालाबों में पाई जाने वाली वनस्पतियों को बहुत तेज़ी से खाती है। इसे 1959 में हांगकांग से लाया गया था। इस मछली का शरीर लंबा और थोड़ा चपटा होता है, और इसका मुंह छोटा और नुकीला होता है। ग्रास कार्प तालाब में उगने वाली तरह-तरह की खरपतवार खाती है, जिससे तालाब साफ रहता है। यह बहुत तेज़ी से बढ़ती है और एक साल के अंदर इसका वज़न लगभग 1–1.5 किलोग्राम हो जाता है।

कॉमन कार्प: यह मछली तालाब की तली में रहती है और सर्वाहारी होती है। एक्वाकल्चर के लिए यह दुनिया भर में एक महत्वपूर्ण मछली प्रजाति है। इसे 1939 में चीन से भारत लाया गया था, और शुरुआत में इसे पंजाब क्षेत्र की झीलों में डाला गया था। इसे ठंडे पानी में भी पाला जा सकता है। इसका शरीर गहरा होता है और इसका मुंह आगे की ओर होता है। यह तालाबों में आसानी से अंडे देती है। एक साल में इसका वज़न लगभग 0.6–1.0 किलोग्राम तक बढ़ सकता है। कैटला मछली की तरह, इसे भी कीचड़ वाला माहौल पसंद है; इसलिए, कीचड़ वाली तली वाले तालाबों में इसकी आबादी बढ़ाई जा सकती है।

एकीकृत मछली पालन प्रणाली (आईएफएफ)

एकीकृत खेती को दो या अधिक खेती गतिविधियों के बीच क्रमिक संबंध के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। जब मछली इस प्रणाली का मुख्य उत्पाद बन जाती है, तो इसे एकीकृत मछली पालन कहा जाता है। इस प्रकार, संसाधनों के पूर्ण उपयोग और उत्पादन बढ़ाने के लिए मछली पालन को कृषि या पशुपालन के साथ संयोजित करने की प्रथा को सामान्यतः एकीकृत मछली पालन कहा जाता है। एकीकृत मछली पालन इस विचार पर आधारित है कि 'कोई भी कचरा नहीं है', और कचरा केवल एक गलत स्थान पर रखा गया संसाधन है जो किसी अन्य उत्पाद के लिए मूल्यवान सामग्री बन सकता है। एकीकृत खेती में, बुनियादी सिद्धांत परस्पर संबंधित खेत गतिविधियों के सहयोगात्मक प्रभावों के उपयोग और खेत के कचरे के पूर्ण उपयोग सहित संरक्षण का उपयोग करना शामिल हैं। यह माना जाता है कि प्रणाली के सभी घटक इस प्रकार के संयोजन से लाभान्वित होंगे। हालांकि, अधिकांश मामलों में, मुख्य लाभार्थी मछलियाँ होती हैं जो सीधे जानवरों और कृषि अपशिष्टों का उपयोग करती हैं।

एकीकृत मछली पालन प्रणाली के संभावित लाभ: इनमें संसाधनों के उपयोग में दक्षता, अन्य कृषि प्रथाओं से प्राप्त अपशिष्टों का कुशल उपयोग, फसलों को विविधतापूर्ण करके जोखिम में कमी, एक कृषि प्रणाली के अपशिष्ट/उत्पादों को दूसरी प्रणाली के इनपुट के रूप में पुनर्चक्रण, अधिकतम उत्पादन के लिए उपलब्ध कृषि क्षेत्र का कुशल उपयोग, अतिरिक्त खाद्य और आय का स्रोत, पूरक आहार और उर्वरक पर अतिरिक्त लागत में कमी शामिल हैं। वास्तव में, आईएफएफ एक कृत्रिम संतुलित पारिस्थितिकी तंत्र है जिसमें कोई अपशिष्ट नहीं होता। यह रोजगार के अधिक अवसर उत्पन्न

करता है; यह इनपुट को कम करता है और उत्पादन तथा आर्थिक दक्षता को बढ़ाता है। आईएफएफ मछली, मांस, दूध, सब्जियां, फल, चारा, अंडे, अनाज और मशरूम आदि प्रदान करता है। कुल मिलाकर, आईएफएफ ग्रामीण आजीविका और सामाजिक-आर्थिक स्थिति के लिए पर्याप्त क्षमता रखता है।

एकीकृत मत्स्य पालन को उन एशियाई देशों में अच्छी तरह से पहचाना जाता है जैसे कि चीन, मलेशिया, भारत, वियतनाम, इंडोनेशिया, फिलीपींस और बांगलादेश, जो उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले हैं, और बाद में हंगरी, जर्मनी, घाना जैसे देशों ने आईएफएफ को वैकल्पिक भूमि उपयोग, आजीविका विकल्प के रूप में स्वीकार किया और इसे पोषण मानकों को बेहतर बनाने की रणनीति के रूप में बढ़ावा दिया। मांग को पूरा करने और आपूर्ति करने के लिए मछली और पशुधन के साथ एकीकरण बहुत प्रोत्साहित करने वाला है और विशेष रूप से छोटे खेतों वाले किसानों के लिए एक इकाई क्षेत्र से महत्वपूर्ण लाभ लिया जा सकता है। अधिकांश छोटे किसान गहन मत्स्य पालन में मछलियों की संतुलित भोजन आवश्यकताओं को वहन नहीं कर सकते। इसलिए, पशुधन के साथ एकीकृत मत्स्य पालन और पशुधन के उत्सर्जन का उपयोग मांग को पूरा कर सकता है, जल में या जलाशयों में मछली के भोजन के जीवाणु जैसे प्लैक्टन उगाने के माध्यम से, साथ ही पशु अपशिष्ट का प्रत्यक्ष भोजन भी प्रदान किया जा सकता है। सामान्य पशुधन-मछली एकीकृत पालन प्रणाली हैं:

1. बतख सह मछली एकीकरण प्रणाली
2. पोल्ट्री सह मछली एकीकरण प्रणाली
3. सुअर सह मछली एकीकरण प्रणाली
4. भेड़/बकरी सह मछली एकीकरण प्रणाली
5. मवेशी सह मछली एकीकरण प्रणाली
6. भैंस सह मछली एकीकरण प्रणाली

मछली प्रजातियों का चयन

इस एकीकरण में, मछली प्रजातियों का चयन एक महत्वपूर्ण बिंदु है, जिसमें प्लांकटन खाने वाली मछलियों का 60% और सर्वाहारी मछलियों का 40% होना चाहिए। छह प्रजातियों का संयोजन जैसे कि, कतला (20%), सिल्वर कार्प (20%), रोहू (20%), मृगल (15%), ग्रास कार्प (10%) और कॉमन कार्प (15%) को उत्पादन लक्ष्य स्तर 3500 किग्रा/हेक्टेयर से अधिक के लिए 8000 से 8500 उंगलियों/हेक्टेयर की घनत्व पर स्टॉक किया जाना चाहिए। यह एकीकरण केवल उन तालाबों के पालन और स्टॉकिंग के लिए उपयुक्त है जहाँ मछलियाँ 12 ग्राम से ऊपर की हैं।

एकीकृत मत्स्य पालन के फायदे

एकीकृत मत्स्य पालन के फायदे निम्नलिखित हैं:

(1) खेत के अपशिष्टों का पूर्ण उपयोग।

(2) आपस में संबंधित कृषि गतिविधियों के सहयोगात्मक प्रभावों का उपयोग।

(3) यह रोजगार के अवसर बढ़ाता है।

(4) यह किसान के परिवार के लिए पोषण का स्रोत बढ़ाता है।

(5) यह उच्च और स्थिर कृषि उत्पादकता देता है और जोखिम (जैविक और आर्थिक) कम होता है।

(6) यह ग्रामीण जनसंख्या की आय बढ़ाता है।

(7) यह कुछ क्षेत्रों में भूमि पुनः प्राप्ति का साधन है।

(8) यह पर्यावरण प्रबंधन का एक कुशल और आर्थिक साधन है।

"हिंदी केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि हमारी पहचान और संस्कारों की जीवंत धरोहर है।"

नरेन्द्र मोदी

हिमाचल प्रदेश के नदी पारिस्थितिक तंत्र में मीठे पानी की मछलियों की विविधता पर माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण का प्रभाव: एक अदृश्य संकट

धैर्य, आशीष साहू, अखिलेश कुमार मिश्र एवं महेंद्र सिंह

भाकृअनुप – राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

माइक्रोप्लास्टिक तेजी से वैश्विक जलीय वातावरणों में व्यापक प्रदूषकों के रूप में उभर रहे हैं, जिनमें दूरस्थ और पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील हिमालयी जलीय प्रणालियां भी शामिल हैं। यह शोध पत्र हिमाचल प्रदेश की प्रमुख नदियों में मीठे पानी की मछलियों की प्रजातियों पर माइक्रोप्लास्टिक के स्रोतों, जैव-संचय मार्गों और पारिस्थितिक-विषाक्त प्रभावों की समीक्षा करता है। इस क्षेत्र के प्रमुख जलमार्ग, ब्यास नदी, में हाल ही में किए गए अनुसंधान से पता चलता है कि हिमनद उद्गम स्थलों से लेकर निचले प्रवाह वाली झीलों तक व्यापक माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण फैला हुआ है। पर्यटन, अपर्याप्त अपशिष्ट प्रबंधन और ग्लेशियरों के पिघलने के कारण, ये उच्च ऊंचाई वाली नदी प्रणालियाँ प्लास्टिक पॉलिमर के लिए दीर्घकालिक सिंक (भंडार) बनती जा रही हैं। माइक्रोप्लास्टिक की प्रचुरता स्थानीय मानव आबादी के आकार के साथ एक मजबूत सकारात्मक सहसंबंध दर्शाती है, जो कुल्लू और मंडी जैसे शहरीकृत क्षेत्रों को भारी रूप से प्रभावित करती है। सीधे निगलने और पोषण स्तर पर स्थानांतरण के माध्यम से, प्रचलित माइक्रोप्लास्टिकविशेष रूप से 1 मिमी से छोटे पॉलीथीन फाइबर और फिल्में जलीय जीवों में गंभीर शारीरिक तनाव और पारिस्थितिक जोखिम पैदा करते हैं। आवास क्षरण और अत्यधिक माइक्रोप्लास्टिक विषाक्तता के संयुक्त प्रभाव इस क्षेत्र की मूल मत्स्य विविधता के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करते हैं।

माइक्रोप्लास्टिक, जिन्हें 0.1 µm से 5 मिमी तक के प्लास्टिक कणों के रूप में परिभाषित किया जाता है, स्थलीय और जलीय दोनों वातावरणों में व्यापक प्रदूषकों के रूप में उभरे हैं, जो महत्वपूर्ण पारिस्थितिक और मानव स्वास्थ्य जोखिम पैदा कर रहे हैं। जबकि समुद्री माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण को व्यापक रूप से प्रलेखित किया गया है, मीठे पानी के पारिस्थितिक तंत्र जो प्लास्टिक परिवहन के प्राथमिक माध्यम के रूप में कार्य करते हैं। पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील हिमालयी क्षेत्रों में, माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण एक नई उभरती हुई पर्यावरणीय समस्या है जो जैव विविधता, पानी की गुणवत्ता और मानव बस्तियों के लिए खतरा पैदा कर रही है। हिमाचल प्रदेश की नदी प्रणालियाँ अत्यधिक अनुकूलित और स्थानिक मछली आबादी का समर्थन करती हैं। उदाहरण के लिए, ब्यास नदी राज्य के भीतर लगभग 300 किमी तक फैली हुई है और एक महत्वपूर्ण मीठे पानी के स्रोत के रूप में कार्य करती है, जो जीव-जंतुओं के एक स्वस्थ समूह, प्रवासी पक्षियों और सिंधु नदी डॉल्फिन (*प्लैटानिस्टा गैंगेटिका माइनर*) की गंभीर रूप से संकटग्रस्त आबादी का समर्थन करती है। हालांकि, तेजी से मानवजनित विकास, व्यापक पर्यटन और अद्वितीय जलवायु परिस्थितियों के संयोजन ने इन उच्च ऊंचाई वाले जलीय वातावरणों को लगातार प्लास्टिक प्रदूषण के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील बना दिया है।

हिमालयी जलग्रहण क्षेत्र में पर्यावरणीय प्रेरक

हिमालयी जलसंभर (watersheds) में माइक्रोप्लास्टिक का परिवहन और जमाव मानवजनित और भौगोलिक कारकों के एक जटिल मैट्रिक्स द्वारा नियंत्रित होता है।

- **प्राथमिक स्रोत और जनसंख्या गतिशीलता**: माइक्रोप्लास्टिक पर्यटन, कृषि अपवाह (runoff), आवासीय अपशिष्ट और ग्लेशियर पिघलने के कारण इन उच्च ऊंचाई वाले पारिस्थितिक तंत्रों में प्रवेश करते हैं। ब्यास नदी में पर्यावरणीय निगरानी माइक्रोप्लास्टिक की प्रचुरता और जनसंख्या के आकार के बीच एक महत्वपूर्ण सकारात्मक सहसंबंध दर्शाती है। घनी आबादी वाले और भारी पर्यटन वाले स्थानों जैसे कुल्लू, मंडी और मनाली में गंभीर माइक्रोप्लास्टिक भार दिखाई देता है, लेकिन वायुमंडलीय परिवहन और ट्रेकर्स द्वारा

पहने जाने वाले सिंथेटिक कपड़ों से झड़ने के कारण धुंडी ग्लेशियर जैसे दूरस्थ उद्गम स्थल भी प्रदूषित हो रहे हैं।

- **पर्यावरणीय सिंक (भंडार):** क्षेत्र की कठोर पर्यावरणीय परिस्थितियां माइक्रोप्लास्टिक के क्षरण को काफी कठिन बना देती हैं, जिससे ये जल स्रोत और विशेष रूप से नदी तल की तलछट प्लास्टिक कणों के लिए दीर्घकालिक भंडार (सिंक) में बदल जाते हैं।
- **जलवैज्ञानिक तनाव:** व्यापक नदी विनियमन और जलवायु-प्रेरित प्रवाह में कमी घटे हुए पानी की मात्रा में प्रदूषक भार को केंद्रित कर सकती है, जिससे जलीय जीवों का स्थानीयकृत माइक्रोप्लास्टिक हॉटस्पॉट के संपर्क में आना बढ़ जाता है।

अंतर्ग्रहण के मार्ग और भौतिक विशेषताएं

मीठे पानी की मछलियां विभिन्न अंतःक्रिया मार्गों के माध्यम से माइक्रोप्लास्टिक के संपर्क में आती हैं, जो उनके आहार समूहों और पॉलिमर की भौतिक विशेषताओं से गहराई से प्रभावित होते हैं।

- **आकृति विज्ञान और प्रमुख प्रकार**: ब्यास नदी बेसिन में, सिंथेटिक फाइबर सबसे प्रमुख प्रकार (morphotype) हैं, जो सतही जल में 84% और तलछट में 66% तक माइक्रोप्लास्टिक का हिस्सा हैं। ये मुख्य रूप से धुले हुए कपड़ों, कपड़ा उद्योगों और फेंके गए फेस मास्क से उत्पन्न होते हैं। फिल्में, जो अक्सर खाद्य पैकेजिंग और कृषि मल्चिंग के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती हैं, दूसरा सबसे आम प्रकार हैं।
- **आकार-निर्भर अंतर्ग्रहण:** महत्वपूर्ण बात यह है कि ब्यास में पाए जाने वाले अधिकांश कण 1 मिमी से छोटे आकार के होते हैं। इन माइक्रोप्लास्टिक का छोटा आकार छोटे जलीय जीवों द्वारा आकस्मिक या लक्षित अंतर्ग्रहण को सुविधाजनक बनाता है, क्योंकि मछलियां अक्सर उन्हें अपना प्राकृतिक शिकार समझने की भूल कर सकती हैं।
- **पोषण स्तर पर स्थानांतरण:** शिकारी प्रजातियां मुख्य रूप से पोषण स्थानांतरण के माध्यम से माइक्रोप्लास्टिक प्राप्त करती हैं। चूँकि 1 मिमी से छोटे कण आसानी से प्राथमिक उपभोक्ताओं द्वारा खा लिए जाते हैं, वे तेजी से जैव-संचयित होते हैं और खाद्य जाल में बड़ी शिकारी मछलियों तक स्थानांतरित हो जाते हैं।

शारीरिक और पारिस्थितिक-विषाक्त प्रभाव

एक बार अंतर्ग्रहण हो जाने के बाद, माइक्रोप्लास्टिक मछलियों में शारीरिक और जैव रासायनिक व्यवधानों की एक श्रृंखला पैदा करते हैं। प्रारंभिक विकास के चरण अपने अपरिपक्व शारीरिक और विषहरण प्रणालियों के कारण अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। शारीरिक आघात: माइक्रोप्लास्टिक का भौतिक प्रभाव पाचन तंत्र में रुकावट का कारण बनता है, जिससे अंडों से निकलने की सफलता कम हो जाती है और विकासात्मक समस्याएं पैदा होती हैं। जठरांत्र संबंधी मार्ग से आंतरिक अंगों में इनका स्थानांतरण ऊतकों में संरचनात्मक परिवर्तन भी कर सकता है, जैसे गलफड़ों में हल्का से लेकर गंभीर नुकसान।

रासायनिक विषाक्तता और पॉलिमर खतरे: निगले गए प्लास्टिक की रासायनिक संरचना उनकी विषाक्तता को भारी रूप से प्रभावित करती है। ब्यास नदी में, पॉलीथीन और सेलोफेन सबसे प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले पॉलिमर हैं, जिनके साथ पॉलीडिमिथाइलसिलोक्सेन और पॉलीएक्रिलामाइड भी मौजूद हैं। ये सिंथेटिक पॉलिमर जैविक प्रणाली में प्लास्टिसाइज़र और भारी धातुओं को प्रवेश कराते हैं, जो ऑक्सीडेटिव तनाव, डीएनए क्षति और रक्त संबंधी परिवर्तनों को प्रेरित करते हैं।

पारिस्थितिक जोखिम सूचकांक: इन जलस्रोतों में पर्यावरणीय जोखिम बहुत तीव्र है। ब्यास नदी के किनारे पॉलिमर हैज़र्ड इंडेक्स और पोटेंशियल इकोलॉजिकल रिस्क इंडेक्स का उपयोग करने वाले मूल्यांकनों ने मनाली, मंडी और कुल्लू जैसे क्षेत्रों को "अत्यधिक खतरे" (Extreme Danger - Level V) की श्रेणी में रखा है। यह वर्गीकरण इंगित करता है कि ये आबादी वाले स्थान गंभीर माइक्रोप्लास्टिक स्रोत के रूप में कार्य करते हैं, जो स्थानीय जलीय जीवों के लिए अत्यधिक पारिस्थितिक जोखिम पैदा करते हैं।

मछली विविधता के लिए निहितार्थ

हिमाचल प्रदेश की नदियाँ ठंडे पानी की प्रजातियों की मेजबानी करती हैं जो प्राचीन, अत्यधिक ऑक्सीजन युक्त

वातावरण के अनुकूल हैं। जब इन विशेष प्रजातियों को इस क्षेत्र में देखे गए माइक्रोप्लास्टिक जोखिम के पुराने और अत्यधिक खतरों के अधीन किया जाता है, तो उनकी समग्र पारिस्थितिक फिटनेस में भारी गिरावट आती है। उप-घातक प्रभाव, जैसे पोषक तत्वों के पाचन में कमी, विकास में देरी और दबी हुई प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाएं, स्वदेशी आबादी के अस्तित्व को खतरे में डालती हैं। इसके अलावा, विशिष्ट आहार समूहों वाली प्रजातियां जैसे तली में भोजन खोजने वाली मछलियाँ जो अत्यधिक दूषित तलछट परतों से जमे हुए माइक्रोफाइबर निगलती हैं अनुपातहीन रूप से अधिक जोखिम का सामना करती हैं। समय के साथ, अत्यधिक संवेदनशील प्रजातियों के स्थानीयकृत विलुप्त होने और अधिक लचीली, अवसरवादी प्रजातियों के प्रसार से क्षेत्रीय जैव विविधता का अपरिवर्तनीय समरूपीकरण हो सकता है, जो मौलिक रूप से हिमालयी नदी नेटवर्क की पोषण संरचना को बदल देगा।

माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण हिमाचल प्रदेश की मीठे पानी की मछली विविधता के लिए एक आसन्न और बहुआयामी खतरा पैदा करता है। उच्च भूमि पर्यटन, अपर्याप्त अपशिष्ट बुनियादी ढांचे और उच्च जनसंख्या घनत्व से प्रेरित होकर, ब्यास जैसी हिमालयी नदियाँ अभूतपूर्व दर से सिंथेटिक पॉलिमर जमा कर रही हैं। इसके परिणामस्वरूप होने वाले शारीरिक आघात, ऑक्सीडेटिव तनाव, और अत्यधिक जहरीले पॉलीथीन व सेलोफेन कणों का जैव-संचय मछली के स्वास्थ्य को गंभीर रूप से खतरे में डालता है। पश्चिमी हिमालय की नाजुक जलीय जैव विविधता को संरक्षित करने के लिए तत्काल, टिकाऊ उपचारात्मक रणनीतियां लागू करना अनिवार्य है जैसे घरेलू अपशिष्ट जल का उन्नत उपचार और एकल-उपयोग वाले प्लास्टिक पर प्रतिबंधों का सख्त प्रवर्तन तथा इसके साथ व्यापक जैविक निगरानी भी आवश्यक है।

हमारी देवनागरी लिपि दुनिया की सबसे वैज्ञानिक लिपी है:

राहुल सांकृत्यायन

राजभाषा हिंदी का सम्मान, राष्ट्र का सम्मान है।

भारत में महाशीर मत्स्य प्रजातियों की विविधता, वर्गीकरण भौगोलिक वितरण और संरक्षण स्थिति

अजेय कुमार पाठक एवं युसरा शर्फ़

भाकृअनुप - राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

महाशीर एक बड़े आकार की साइप्रिनिड परिवार की मछली है जो हिमालय से लेकर पश्चिमी घाट की नदियों तक पूरे भारत में बड़े पैमाने पर पाई जाती है। 'महाशीर' नाम फ़ारसी के ' महिशर' से लिया गया है (मैकडोनाल्ड, 1948; देसाई, 2003) और इस समूह की मछली की प्रजातियों को राजा, शेर, बाघ, महान योद्धा वगैरह भी कहा जाता है, जैसा कि मछुआरे समुदाय इसकी शानदार खेल क्षमताओं के कारण अलग-अलग नाम देते हैं (एनजी, 2004)। देश के कई इलाकों में इन्हें दिव्य मछली का शीर्षक भी मिला है। लिन (1935) ने महाशीर की 53 प्रजातियों की प्रतिवेदन दी है, जो चार पीढ़ियों में फैली हुई हैं - टोर, नियोलिसोचिलस, नाज़िरिटर और पैरेटर (पैरेटर ज़ोनेटस)। दुनिया भर में पाई जाने वाली महाशीर प्रजातियों में से 50% से ज़्यादा प्रजातियाँ भारतीय उपमहाद्वीप में पाई जाती हैं और इन्हें 'भारतीय जलीय निकाय का राजा' कहा जाता है (लैंगर एवं अन्य., 2001) । ये प्रजातियाँ पथरीली युक्त तेज़ बहने वाली धाराओं को पसंद करती है, जहाँ ऑक्सीजन की मात्रा ज़्यादा होती है और पानी साफ़ होता है।

महाशीर भारत के कई बड़े नदी प्रणालियों में पाई जाती हैं, जैसे गंगा नदी प्रणाली और उसकी सहायक नदियाँ (यमुना, घाघरा, राप्ती, शारदा, रामगंगा, कोसी, सोन, रिहंद, चंबल, केन, बेतवा, महानदी, नर्मदा, ताप्ती, माही), ब्रह्मपुत्र-बराक नदी प्रणाली, सिंधु नदी प्रणाली और उसकी सहायक नदियाँ (सतलज और ब्यास)। ये नदियाँ असम, बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल से होकर बहती हैं। इसके अलावा, नेपाल, भूटान, पाकिस्तान, बांग्लादेश, म्यांमार और चीन जैसे सीमावर्ती देशों में भी महाशीर के होने की जानकारी मिली है (जयराम, 1999; देसाई, 2003)। ये दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों की मीठे पानी की नदियों और झीलों में भी पाई जाती हैं।

भारत में कई शोधकर्ताओं ने महाशीर के अलग-अलग पहलुओं पर अध्धयन किया है, फिर भी, महाशीर प्रजाति के वर्गीकरण संबंधी पहलुओं विशेष तौर पर नियोलिसोचिलस और नाज़िरिटर प्रजातियों के बारे में जानकारी की कमी है, और यह अपने में एक पहला लेख है। यह लेख भारत में मौजूद महाशीर प्रजातियों के वर्गीकरण स्थिति और वितरण पर प्रकाश डालती है। इस अध्धयन का उद्देश्य मौजूद साहित्य की समीक्षा और विश्लेषण के आधार पर भारत में महाशीर प्रजातियों के वर्गीकरण संबंधी और वितरण पर अद्यतन जानकारी देना है। लेख के नतीजे, पर्यावरण के लिहाज़ से इस अहम मछली की प्रजाति पर भविष्य में ज़्यादा शोध करने और संरक्षण की योजनाएँ बनाने के लिए एक बेंचमार्क का काम कर सकते हैं।

सामग्री और विधियाँ

वर्गीकरण और वितरण पर डेटा संग्रहण और विश्लेषण के लिए साहित्य और डेटाबेस का सर्वेक्षण

शोध लेख, मोनोग्राफ, किताबें, प्रजाति चेकलिस्ट और तकनीकी प्रतिवेदन पर उपलब्ध प्रकाशित साहित्य को जाँच किया गया (दासगुप्ता, 1982; तलवार और झिंगरन, 1991; जयराम, 1999; मेनन, 1999; देसाई, 2003; जोशी, 2007; अरुणाचलम एवं अन्य., 2005; शर्मा एवं अन्य., 2015, अरुणाचलम एवं अन्य., 2017; पिंडर एवं अन्य. 2019)। इसके अलावा, सार्वजनिक क्षेत्र में उपलब्ध अलग-अलग डेटाबेस जैसे फिशबेस (फ्रोसे एंड पॉली, 2024), वैश्विक जैव विविधता सूचना सुविधा (Gbif.org, 2024), एकीकृत वर्गीकरण संबंधी सूचना प्रणाली (ITIS) (www.itis.gov), और मछलियों का कैटलॉग डेटाबेस (फ्रिक एवं अन्य., 2024) का उपयोग वैज्ञानिक नामों, वर्गीकरण संबंधी स्थिति (स्वीकृत /स्थिति अज्ञात, संशोधन, समानार्थी शब्द, वैकल्पिक अभ्यावेदन, आदि) और वितरण अभिलेख को सत्यापित करने के लिए किया गया। अंत में, वितरण जानकारी के साथ हाल ही में स्वीकार किए गए वैध नामों के साथ एक संशोधित सूची तैयार की गई।

विभिन्न साहित्य और द्वितीयक डेटा स्रोतों की समीक्षा से पता चला है कि दुनिया भर में, साइप्रिनिडे परिवार के अंतर्गत टोर, नियोलिसोचिलस, नाज़िरिटर और पैरेटर जैसे चार जेनेरा से संबंधित 52 महाशीर प्रजातियां हैं। 52 प्रजातियों में से, 25 प्रजातियाँ भारतीय मीठे पानी से संबंधित हैं जो टोर, नियोलिसोचिलस और नाज़िरिटर पीढ़ी से हैं । पीढ़ी टोर (ग्रे, 1834) पूरे भारत में व्यापक रूप से वितरित है और मध्य लोब की रूपात्मक संरचना के कारण इसे "असली महाशीर " माना जाता है। साहित्य की समीक्षा से पता चला है, कि विश्व स्तर पर उपलब्ध 17 टोर प्रजातियों में से 9 प्रजातियां केवल भारतीय जल में उपलब्ध हैं और टोर की कुछ प्रजातियों को पर्यायवाची माना गया है (तालिका 1) ।

तालिका 1: टोर पीढ़ी के कुछ प्रजातियों की पर्यायवाची सूची

वैज्ञानिक नाम	पर्यायवाची
टोर टैम्ब्रा	*टोर डौरोनेन्सिस*
टोर मैक्रोलेपिस	*टोर पुटिटोरा*
टोर प्रोजेनियस	*टोर पुटिटोरा*
टोर सोरो	*नियोलिसोचिलस सोरो*
टोर ब्रेविफिलिस	*फोलिफ़र ब्रेविफिलिस*
टोर चेलेनॉइड्स	*नाज़िरिटर चेलेनॉइड्स*
टोर हैमिल्टोनी	*टोर टोर*
टोर हेमिस्पिनस	*नियोलिसोचिलस हेमिस्पिनस*
टोर लोंगीपिनिस	*नियोलिसोचिलस लोंगीपिनिस*
टोर मुसुल्लाह	*हाइप्सेलोबार्बस मुसुल्लाह*
टोर नेल्ली	*टोर खुदरी*
टोर कियाओजिएन्सिस	*नियोलिसोचिलस कियाओजिएन्सिस*
टोर रेनी	*लेबियोबारबस रीनी*
टोर स्ट्रैचयी	*नियोलिसोचिलस स्ट्रैचयी*

इसके *अलावाटोर युनानेंसिस* के रूप में मान्य नाम *फोलिफ़र युनानेंसिस, टोर झोबेंसिस* के रूप में मान्य नाम *नज़ीरिटर झोबेंसिस, टोर .ज़ोनैटस* के रूप में मान्य नाम *पैराटर .ज़ोनैटस* तथा *टोर किआओजिएंसिस* और *टोर हेमिस्पिनस* के रूप में मान्य नाम *नियोलिसोचिलस किआओजिएंसिस* और *एन. हेमिस्पिनस* हैं (फ्रोसे और पॉली, 2024)। टोर पीढ़ी की कुछ महाशीर प्रजातियों को उनके आर्थिक महत्व के कारण राज्य की मछली माना गया है। टोर पुटिटोरा अरुणाचल प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और जम्मू और कश्मीर की राज्य मछली है। इसी तरह *टोर महानादिकस* ओडिशा की राज्य मछली है। बाद में, *टोर टोर* को मध्य प्रदेश की राज्य मछली के रूप में नामित किया गया। तालिका 2 भारत में टोर, नियोलिसोचिलस, नाज़िरिटर और पैरेटर का वितरण प्रस्तुत करता है, जो प्रकाशित साहित्य और डेटाबेस से एकत्र के आंकड़ों से तैयार किया गया है। तालिका से यह स्पष्ट है किटोर प्रजातियाँ मुख्य रूप से तीन जैव विविधता वाले अतिक्षेत्र में वितरित की जाती हैं; हिमालय, पश्चिमी घाट और उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के अलावा मध्य भारत और पूर्वी घाट। टोर पीढ़ी की प्रजातियाँ भारत में महाशीर समूह के अन्य पीढ़ी के प्रजातियों की तुलना में सबसे व्यापक रूप से वितरित प्रजातियाँ हैं। टोर पीढ़ी के मामले में, 3 प्रजातियाँ; *टोर टोर पुटिटोरा, टोर टोर* और *टोर खुदरी* वाणिज्यिक रूप से महत्वपूर्ण प्रजातियां हैं और खेल एवं भोजन के रूप में आर्थिक रूप से व्यवहार्य हैं।

रेनबोथ (1985) ने नियोलिसोचिलस को एक नए पीढ़ी के रूप में वर्णित किया और ये स्थानीय खेल मछली है, जो पूरे दक्षिणी और दक्षिण-पूर्व एशिया में साफ़ पानी की धाराओं और नदियों के ऊपरी इलाकों में पाई जाती हैं। 32 नियोलिसोचिलस प्रजातियों में से 15 प्रजातियां सिर्फ़ भारत में पाई जाती हैं। *नियोलिसोचिलस हेक्सागोनोलेपिस* नागालैंड और सिक्किम की राज्य मछली है। पीढ़ी नियोलिसोचिलस की कुछ प्रजातियों को समानार्थी शब्द दिया गया है। नियोलिसोचिलस नामलेनेंसिस का पर्यायवाची शब्द *नियोलिसोचिलस बेनासी*, और *नियोलिसोचिलस ट्वीडी* का पर्यायवाची शब्द *नियोलिसोचिलस सोरो* है। *नियोलिसोचिलस इन्नोमिनाटस* का मान्य नाम *पुन्टियस टेट्रास्पिलस* है। पीढ़ी नियोलिसोचिलस की प्रजातियों का वितरण तालिका 2 में दिखाया गया है और यह तालिका प्रदर्शित करता है कि पीढ़ी नियोलिसोचिलस की प्रजातियाँ मुख्य रूप से भारत के उत्तर-पूर्वी इलाके में विस्तृत हैं। कुछ प्रजातियाँ जैसे कि *नियोलिसोचिलस वायनाडेन्सिस, नियोलिसोचिलस माइक्रोप्थाल्मस, नियोलिसोचिलस कैपुडेल्फिनस, नियोलिसोचिलस टामिरापैरानेंसिस, नियोलिसोचिलस माइक्रोप्थाल्मस* और *नियोलिसोचिलस एक्यूटिरोस्ट्रिस* पश्चिमी घाट और दक्षिणी भारत में विस्तृत हैं।

पीढ़ी नाज़िरिटर की दो प्रजातियाँ हैं- *नाज़िरिटर चेलिनोइड्स* और *नाज़िरिटर झोबेंसिस* । केवल *नाज़िरिटर*

तालिका 2: टोर, नियोलिसोचिलस और नाज़िरिटर पीढ़ियों से संबंधित प्रतिवेदन की गई प्रजातियों की सूची तथा भारत की नदियों में इनका वितरण और संरक्षण की स्थिति

एस.नं.	वैज्ञानिक नाम	वितरण	संरक्षण की स्थिति
1.	*टोर बाराके* (अरुणकुमार और बसुधा , 2003)	बराक नदी, मणिपुर	निकट संकटग्रस्त
2.	*टोर* खुदरी (साइक्स, 1839)	उत्तरी और मध्य पश्चिमी घाट, उत्तर-पूर्वी क्षेत्र, विंध्य पर्वतमाला और हिमालय	कम से कम चिंता
3.	*टोर कुलकर्णी* (मेनन, 1992)	डरना नदी, महाराष्ट्र	डेटा की कमी
4.	*टोर मालाबारिकस* (जेर्डन , 1849)	पश्चिमी घाट, तमिलनाडु और केरल	लुप्तप्राय
5.	*टोर महानादिकस डेविड 1953*	महानदी नदी, ओडिशा	मूल्यांकन नहीं किया गया
6.	*टोर पुटिटोरा* (हैमिल्टन, 1822)	उत्तरी और मध्य पश्चिमी घाट, उत्तर-पूर्वी क्षेत्र, विंध्य पर्वतमाला और हिमालय	लुप्तप्राय
7.	*टोर रेमादेवी* कुरुप और राधाकृष्णन 2011	तमिलनाडु और केरल	गंभीर रूप से संकटग्रस्त
8.	*टोर मोसल* (हैमिल्टन 1822)	हिमालय और उत्तर-पूर्व क्षेत्र	डेटा की कमी
9.	*टोर टोर* (हैमिल्टन, 1822)	उत्तरी और मध्य पश्चिमी घाट, उत्तर-पूर्वी क्षेत्र, विंध्य पर्वतमाला और हिमालय	डेटा की कमी
10.	*नियोलिसोचिलस एक्यूटिरोस्ट्रिस* (अरुणाचलम, शिवकुमार और मुरुगन, 2017)	कावेरी नदी जल निकासी, कर्नाटक।	मूल्यांकन नहीं किया गया
11।	*नियोलिसोचिलस बोवानिकस* (डे, 1877)	भवानी नदी, केरल और तमिलनाडु	गंभीर रूप से संकटग्रस्त
12.	*नियोलिसोचिलस कैपुडेल्फिनस* (अरुणाचलम, शिवकुमार और मुरुगन, 2017)	पेरियार नदी, तमिलनाडु	मूल्यांकन नहीं किया गया
13.	*नियोलिसोचिलस दुकन* (दिन, 1878)	तीस्ता नदी, पश्चिम बंगाल	डेटा की कमी
14.	*नियोलिसोचिलस हेक्सागोनोलेपिस* (मैकक्लेलैंड, 1839)	उत्तर-पूर्व क्षेत्र	निकट संकटग्रस्त
15.	*नियोलिसोचिलस हेक्सास्टिकस* (मैकक्लेलैंड, 1839)	उत्तर-पूर्व क्षेत्र	निकट संकटग्रस्त
16.	*नियोलिसोचिलस कलाडानेन्सिस* (लालरामलियाना, लालरोनुंगा, कुमार और सिंह, 2019)	कलादान नदी, मिजोरम	मूल्यांकन नहीं किया गया
17.	*नियोलिसोचिलस माइक्रोफथैल्मस* (अरुणाचलम, शिवकुमार और मुरुगन, 2017)	वलपट्टनम नदी बेसिन, केरल	मूल्यांकन नहीं किया गया
18.	*नियोलिसोचिलस माइक्रोफथैल्मस* (अरुणाचलम, शिवकुमार और मुरुगन, 2017)	पेरियार नदी, पश्चिमी घाट	मूल्यांकन नहीं किया गया
19.	*नियोलिसोचिलस स्पिनुलोसस* (मैकक्लेलैंड, 1845)	सिक्किम के पहाड़ों की तलहटी और उत्तरी बंगाल	डेटा की कमी
20.	*नियोलिसोचिलस स्टीवेन्सोनी* (डे, 1870)	पश्चिम बंगाल और सिक्किम	डेटा की कमी
21.	*नियोलिसोचिलस स्ट्रैची* (डे, 1871)	मणिपुर और पश्चिम बंगाल	कम से कम चिंता
22.	*नियोलिसोचिलस तामिरापारानेंसिस* (अरुणाचलम , शिवकुमार और मुरुगन , 2017)	तमिलनाडु	मूल्यांकन नहीं किया गया
23	*नियोलिसोचिलस पनार* दहानुकर, सुंदर, रंगद, प्राउडलोव और राघवन 2023	जैंतिया पहाड़ी, मेघालय	मूल्यांकन नहीं किया गया (NE)
24	*नियोलिसोचिलस वायनाडेन्सिस* (डे 1873)	केरल और कर्नाटक	गंभीर रूप से संकटग्रस्त
25	*नाज़ीर चेलिनोइड्स* (मैकक्लेलैंड, 1839)	हिमालय, पूर्वी असम और गंगा	कमजोर

चेलेनॉइड्स को भारत से रिपोर्ट किया गया है। नाज़िरिटर चेलिनोइड्स, जिसे पहले *टोर चेलिनोइड्स* के नाम से जाना जाता था, यह प्रजाति "डार्क महासीर" के नाम से मशहूर ठंडे पानी की एक दुर्लभ मछली है (जोशी, 2007), जो भारत के उत्तर पश्चिमी सीमांत प्रांत, नेपाल और असम तक के हिमालयी क्षेत्र में और गंगा नदी में पाई जाती है (तलवार और झिंगरन, 1991; जयराम, 1999)। यह प्रजाति ठंडे पानी में मछली पालन के लिए एक मज़बूत दावेदार है क्योंकि इसे खाने और सजावट दोनों मकसदों के लिए पाला जा सकता है। प्रजाति *नाज़िरिटर चेलिनोइड्स* जैसा कि तालिका 2 में दर्शाया गया है, मुख्य रूप से हिमालय और पश्चिमी घाट क्षेत्रों में पाया जाता है।

यह लेख महाशीर प्रजातियों की वर्गीकरण सम्बन्धी और उनके संरक्षण स्थिति के साथ उनके वितरण के बारे में विस्तृत में बताती है। भारत के मीठे पानी में महाशीर मछली की आबादी कम हो रही है और भविष्य में कई जैविक, इंसानों और जलवायु परिवर्तन कारकों की वजह से आबादी और कम हो जाएगी। इसके अलावा, जलवायु परिवर्तन और आवास के खत्म होने की वजह से उनके जैवभौगोलिक वितरण में बदलाव हो सकता है। चूँकि, भारत के कई राज्यों ने महाशीर की कई प्रजातियों को राज्य मछली का दर्जा दिया है, इसलिए यह पक्का करना ज़रूरी है, कि महाशीर की आवास, प्रजनन और आप्रवासी ज़रूरतें पूरी हों। फ्राई और अंगुलिका जीवन चरण के कैप्टिव प्रणित एवं पालित नमूनों की रैंचिंग करके महाशीर की आबादी बढ़ाने की तुरंत ज़रूरत है (बसवराज, 2007; ओगले , 2002c)। महाशीर को खत्म होने से बचाने के लिए ज़्यादा जारुकता एवं संरक्षण उन्मुख कार्यक्रम शुरू करने की ज़रूरत है। इस अध्धयन के तहत मिले डेटा का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर विस्तृत स्पोर्ट मछलियों के लिए स्तः-विशिष्ट संरक्षण और प्रबंधन योजना की योजना बनाने और लागू करने के लिए आधारभूत जानकारी के तौर पर किया जा सकता है, जो खेल को बढ़ावा और पर्यावरण संरक्षण के लिए पारिस्थितिकी और आर्थिक रूप से ज़रूरी हैं।

लक्षद्वीप की स्वदेशी समुद्री शैवाल: ब्लू इकोनॉमी के नए आयाम

अम्बिली एम.एन. एवं रेखा एम.यू.

भाकृअनुप - राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

विशाल समुद्री जलराशि की गहराइयों में केवल रंग-बिरंगी मछलियाँ और प्रवाल भित्तियाँ ही नहीं, बल्कि एक अद्भुत हरित संसार भी छिपा हुआ है, जिसे भविष्य की खाद्य सुरक्षा, औषधीय अनुसंधान, पर्यावरण संरक्षण तथा समुद्री अर्थव्यवस्था के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा रहा है। यह रोचक संसार समुद्री शैवालों का है। पहली दृष्टि में ये समुद्री पौधे साधारण और महत्वहीन प्रतीत हो सकते हैं, किंतु वास्तव में ये प्रकृति के सबसे मूल्यवान संसाधनों में से एक हैं। वैज्ञानिक आज समुद्री शैवालों को "समुद्र का हरित सोना" कहते हैं, क्योंकि खाद्य, औषधि, प्रसाधन सामग्री, जैव ईंधन उत्पादन तथा कृषि में इनके उपयोग तेजी से बढ़ रहे हैं।

समुद्री शैवाल बहुकोशिकीय समुद्री मैक्रोएल्गी हैं, जो सूर्य के प्रकाश की सहायता से प्रकाश संश्लेषण द्वारा अपना भोजन स्वयं बनाते हैं। इनके वर्णकों के आधार पर इन्हें मुख्यतः हरे, भूरे तथा लाल शैवालों में वर्गीकृत किया जाता है। हरे शैवालों में क्लोरोफिल अधिक मात्रा में पाया जाता है, भूरे शैवालों में फ्यूकोजैंथिन वर्णक तथा लाल शैवालों में फाइकोएरिथ्रिन वर्णक पाया जाता है। ये वर्णक समुद्र के भीतर एक रंगीन वन जैसा दृश्य प्रस्तुत करते हैं। किंतु समुद्री शैवालों का महत्व केवल उनकी सुंदरता तक सीमित नहीं है। वे समुद्री पारिस्थितिक तंत्र में प्राथमिक उत्पादक के रूप में कार्य करते हैं तथा अनेक समुद्री जीवों को भोजन, आश्रय और प्रजनन स्थल प्रदान करते हैं।

लक्षद्वीप: एक अनछुआ समुद्री जैव विविधता हॉटस्पॉट

यद्यपि भारत के मुख्य भूभाग के तटीय क्षेत्रों में समुद्री शैवालों पर व्यापक अध्ययन किए गए हैं, फिर भी द्वीपीय पारिस्थितिक तंत्रों, विशेषकर लक्षद्वीप द्वीपसमूह से संबंधित



लक्षद्वीप के कल्पेनी द्वीप में पाई गई *जेलिडिएला एसेरोसा*

जानकारी अभी भी सीमित है। अरब सागर में स्थित लक्षद्वीप एक अद्वितीय प्रवाल भित्ति-प्रधान समुद्री पारिस्थितिक तंत्र का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ जैव विविधता अत्यंत समृद्ध है। यहाँ समुद्री शैवाल, प्रवाल भित्तियाँ और समुद्री घासें मिलकर एक जटिल तथा अत्यधिक उत्पादक समुद्री वातावरण का निर्माण करती हैं। इसके पारिस्थितिक महत्व के बावजूद, लक्षद्वीप में समुद्री शैवाल समुदायों की वास्तविक विविधता, आनुवंशिक परिवर्तनशीलता तथा उनसे जुड़े जीव-जंतुओं के संबंध में व्यापक जानकारी अभी भी अपर्याप्त है।

पूर्ववर्ती सर्वेक्षणों में लक्षद्वीप के विभिन्न एटोल्स से अनेक समुद्री शैवाल प्रजातियों की उपस्थिति दर्ज की गई थी। किंतु आधुनिक तकनीकों द्वारा इनकी विस्तृत पहचान और आणविक विश्लेषण अभी भी आवश्यक है। कई समुद्री शैवाल प्रजातियाँ बाहरी रूप से समान दिखाई देती हैं, जबकि आनुवंशिक रूप से वे भिन्न हो सकती हैं। इसलिए केवल पारंपरिक वर्गिकी पर आधारित पहचान पर्याप्त नहीं मानी जाती। वर्तमान में डीएनए बारकोडिंग और आणविक विश्लेषण जैसी आधुनिक तकनीकों का उपयोग प्रजातीय विविधता, आनुवंशिक परिवर्तनशीलता तथा समुद्री शैवालों के विकासीय संबंधों के अध्ययन के लिए व्यापक रूप से किया जा रहा है। लक्षद्वीप जैसे संवेदनशील द्वीपीय पारिस्थितिक तंत्रों में ऐसे अध्ययन संरक्षण योजनाओं और सतत उपयोग के लिए महत्वपूर्ण आधारभूत जानकारी प्रदान कर सकते हैं।

प्राथमिक सर्वेक्षण के आधार पर यह ज्ञात हुआ कि लक्षद्वीप सागर में में स्वदेशी समुद्री शैवालों की अत्यंत समृद्ध विविधता पाई जाती है, जिनमें *हाइड्रोपुन्टिया एड्यूलिस, जेलिडियम पुसिलम, जेलिडिएला एसेरोसा* तथा *सारगैसम इलिसिफोलियम* प्रमुख हैं।

जलवायु परिवर्तन और समुद्री शैवालों की भूमिका

आज जब विश्व जलवायु परिवर्तन और बढ़ते कार्बन उत्सर्जन जैसी गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है, तब समुद्री शैवालों का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। समुद्री शैवाल वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करके उसे समुद्री पारिस्थितिक तंत्र में संग्रहित करने में सहायता करते हैं। वैज्ञानिक इन्हें "ब्लू कार्बन" पारिस्थितिक तंत्र का महत्वपूर्ण घटक मानते हैं। इसके अतिरिक्त, ये ऑक्सीजन उत्पादन में भी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं तथा समुद्री पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में सहायक होते हैं। इसी कारण इन्हें पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास के प्राकृतिक समाधान के रूप में देखा जा रहा है।

खाद्य एवं स्वास्थ्य क्षेत्र में बढ़ता महत्व

समुद्री शैवालों का उपयोग मानव जीवन में सदियों से किया जाता रहा है। जापान, चीन और कोरिया जैसे अनेक एशियाई देशों में ये पारंपरिक भोजन का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। सुशी, सूप, सलाद तथा अन्य लोकप्रिय व्यंजनों में इनका व्यापक उपयोग किया जाता है। समुद्री शैवाल प्रोटीन, विटामिन, आयोडीन तथा आवश्यक खनिजों से भरपूर होते हैं। खाद्य उद्योग के अतिरिक्त, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अनुसंधान में भी इनका महत्व तेजी से बढ़ रहा है। कई अध्ययनों में पाया गया है कि समुद्री शैवालों में एंटीऑक्सीडेंट, जीवाणुरोधी तथा सूजनरोधी गुण मौजूद होते हैं। शोधकर्ता वर्तमान में कैंसर, मधुमेह और हृदय रोगों की रोकथाम तथा उपचार में इनके संभावित उपयोगों का अध्ययन कर रहे हैं।

समुद्री शैवालों के औद्योगिक उपयोग

औद्योगिक दृष्टिकोण से भी समुद्री शैवाल अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। विभिन्न समुद्री शैवाल प्रजातियों से एल्जिनेट, अगर-अगर तथा कैरेजेनन जैसे मूल्यवान हाइड्रोकोलॉइड प्राप्त किए जाते हैं। इनका उपयोग खाद्य प्रसंस्करण, औषधि निर्माण, टूथपेस्ट, आइसक्रीम, प्रसाधन सामग्री तथा जैव प्रौद्योगिकी उद्योगों में व्यापक रूप से किया जाता है। अनेक प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों में ये स्थिरीकारक तथा गाढ़ापन बढ़ाने वाले पदार्थ के रूप में कार्य करते हैं। परिणामस्वरूप, समुद्री शैवाल आधारित उत्पादों और उद्योगों का वैश्विक बाजार तेजी से विस्तार कर रहा है।

भारत में समुद्री शैवालों की समृद्ध विविधता

लगभग 7,500 किलोमीटर लंबी तटरेखा और विविध समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों के कारण भारत को समुद्री शैवालों से समृद्ध देशों में गिना जाता है। अनेक पुष्पीय सर्वेक्षणों में

भारतीय तटों पर उल्लेखनीय मैक्रोएल्गल विविधता दर्ज की गई है। तमिलनाडु से लगभग 282 प्रजातियाँ, गुजरात से 198 प्रजातियाँ, महाराष्ट्र से 240 प्रजातियाँ, कर्नाटक से 78 प्रजातियाँ तथा कच्छ की खाड़ी से 151 प्रजातियाँ रिपोर्ट की गई हैं। ये आँकड़े भारतीय समुद्री तटीय जलों में उपलब्ध विशाल मैक्रोएल्गल जैव विविधता को दर्शाते हैं। विशेष रूप से तमिलनाडु की मन्नार की खाड़ी तथा गुजरात की कच्छ की खाड़ी समुद्री शैवाल विविधता के महत्वपूर्ण हॉटस्पॉट माने जाते हैं।

ब्लू इकोनॉमी और समुद्री शैवाल खेती

समुद्री शैवालों का महत्व केवल जैव विविधता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह तटीय समुदायों की आजीविका से भी गहराई से जुड़ा हुआ है। समुद्री शैवालों की खेती भारत की उभरती "ब्लू इकोनॉमी" का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनती जा रही है। तमिलनाडु और गुजरात जैसे राज्यों में समुद्री शैवालों की खेती ने स्थानीय मछुआरा समुदायों और महिलाओं के लिए रोजगार तथा आय के नए अवसर पैदा किए हैं। समुद्री शैवालों की खेती में अपेक्षाकृत कम निवेश की आवश्यकता होती है तथा इसे पर्यावरण के अनुकूल माना जाता है। इसके अतिरिक्त, समुद्री शैवाल आधारित जैव उर्वरकों और जैव ईंधन उत्पादन की संभावनाएँ भविष्य में इस क्षेत्र के आर्थिक महत्व को और अधिक बढ़ा सकती हैं।

संरक्षण संबंधी चुनौतियाँ

अपार संभावनाओं के बावजूद समुद्री शैवाल पारिस्थितिक तंत्र अनेक खतरों का सामना कर रहे हैं। समुद्री प्रदूषण, प्लास्टिक अपशिष्ट, तटीय विकास, अत्यधिक दोहन तथा जलवायु परिवर्तन इनके प्राकृतिक आवासों को प्रभावित कर रहे हैं। समुद्री सतह के तापमान में वृद्धि और प्रवाल भित्तियों का क्षरण भी समुद्री शैवाल समुदायों को प्रभावित करने लगा है। यदि उचित संरक्षण उपाय और वैज्ञानिक प्रबंधन नहीं अपनाए गए, तो ये दबाव समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों की स्थिरता और उत्पादकता को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकते हैं।

आज समुद्री शैवालों को केवल "समुद्री पौधे" या "समुद्री घास" के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि उन्हें अत्यंत महत्वपूर्ण समुद्री जैव संसाधन के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए। भारत जैसे जैव विविधता-समृद्ध समुद्री राष्ट्र के लिए समुद्री शैवाल वैज्ञानिक अनुसंधान, जैव प्रौद्योगिकी, औषधीय विकास, सतत कृषि तथा तटीय आर्थिक विकास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करते हैं। विशेष रूप से लक्षद्वीप जैसे द्वीपीय पारिस्थितिक तंत्रों में समुद्री शैवालों की विविधता और आनुवंशिक विशेषताओं पर आधारित अध्ययन भविष्य की संरक्षण रणनीतियों और सतत उपयोग कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। आने वाले वर्षों में समुद्री शैवाल भारत की उभरती ब्लू बायोइकोनॉमी के प्रमुख स्तंभों में से एक बन सकते हैं।

हिंदी का प्रचार और विकास कोई रोक नहीं सकता:

पंडित गोविंद बल्लभ पंत

मछली – पोषण सुरक्षा और स्वास्थ्य संवर्धन का आधार

अनीता सावनानी, जय प्रकाश वर्मा, राम किशोर एवं अभिषेक कुमार सिंह

भाकृअनुप - भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

मानव जीवन में भोजन का महत्व केवल पेट भरने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह स्वस्थ शरीर, तीक्ष्ण बुद्धि, कार्यक्षमता और जीवन की गुणवत्ता का आधार है। वर्तमान समय में विश्व एक ओर बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने की चुनौती का सामना कर रहा है, तो दूसरी ओर कुपोषण तथा जीवनशैली से जुड़ी बीमारियाँ भी तेजी से बढ़ रही हैं। ऐसे परिदृश्य में ऐसे खाद्य पदार्थों की आवश्यकता बढ़ गई है जो पौष्टिक, सुलभ, किफायती तथा पर्यावरणीय दृष्टि से टिकाऊ हों। मछली एवं अन्य जलीय खाद्य पदार्थ इस आवश्यकता की पूर्ति करने वाले सबसे महत्वपूर्ण खाद्य स्रोतों में शामिल हैं। मछली को प्रकृति का एक ऐसा उपहार माना जाता है जिसमें उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन, आवश्यक वसीय अम्ल, विटामिन और खनिज तत्वों का अद्भुत संतुलन पाया जाता है। यही कारण है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) तथा खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) दोनों ही नियमित रूप से मछली एवं जलीय खाद्य पदार्थों के सेवन को संतुलित आहार का महत्वपूर्ण भाग मानते हैं।

विश्व एवं भारत में मत्स्य उत्पादन का बढ़ता महत्व

वर्तमान समय में मत्स्य क्षेत्र वैश्विक खाद्य एवं पोषण सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण स्तंभ बन चुका है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन की 'The State of World Fisheries and Aquaculture (SOFIA), 2024' रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2022 में विश्व का कुल मत्स्य एवं जलीय कृषि उत्पादन 223.2 मिलियन टन के ऐतिहासिक स्तर तक पहुँच गया। इस उत्पादन में लगभग 185.4 मिलियन टन जलीय जीव तथा 37.8 मिलियन टन जलीय शैवाल सम्मिलित थे। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि पहली बार जलीय कृषि का योगदान पारंपरिक मत्स्य दोहन से अधिक रहा, जो इस क्षेत्र की बढ़ती संभावनाओं को दर्शाता है।

आज विश्व की लगभग 3 अरब जनसंख्या अपनी पशु-आधारित प्रोटीन आवश्यकता का कम-से-कम 20 प्रतिशत भाग मछली एवं अन्य जलीय खाद्य पदार्थों से प्राप्त करती है। अनेक द्वीपीय तथा तटीय देशों में यह योगदान 50 प्रतिशत से भी अधिक है। बढ़ती जनसंख्या, घटते प्राकृतिक संसाधनों और पौष्टिक भोजन की बढ़ती आवश्यकता को देखते हुए विशेषज्ञ मानते हैं कि आने वाले दशकों में जलीय खाद्य पदार्थ वैश्विक पोषण सुरक्षा की रीढ़ बन सकते हैं।

भारत भी इस क्षेत्र में तेजी से आगे बढ़ रहा है। देश का कुल मत्स्य उत्पादन वर्ष 2013-14 के लगभग 95.79 लाख टन से बढ़कर वर्ष 2024-25 में लगभग 197.75 लाख टन तक पहुँच गया है। वर्तमान में भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा मत्स्य उत्पादक देश है तथा वैश्विक मत्स्य उत्पादन में लगभग 8 प्रतिशत का योगदान देता है। मत्स्य क्षेत्र न केवल करोड़ों लोगों की आजीविका का आधार है, बल्कि देश की पोषण सुरक्षा, ग्रामीण विकास तथा निर्यात आय में भी महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

मछली का पोषण मूल्य

मछली को उच्च जैविक मूल्य वाले खाद्य पदार्थों में गिना जाता है क्योंकि इसमें उपस्थित पोषक तत्व शरीर द्वारा आसानी से अवशोषित एवं उपयोग किए जा सकते हैं। विभिन्न प्रजातियों में पोषण संरचना में कुछ भिन्नता हो सकती है, फिर भी सामान्यतः 100 ग्राम खाद्य मछली में निम्नलिखित पोषक तत्व पाए जाते हैं।

तालिका 1 : 100 ग्राम खाद्य मछली का औसत पोषण मूल्य

पोषक तत्व	मात्रा
ऊर्जा	110–140 किलो कैलोरी
प्रोटीन	19–22 ग्राम
कुल वसा	2–6 ग्राम
ओमेगा-3 वसीय अम्ल	0.5–2.5 ग्राम
कैल्शियम	30–80 मि.ग्रा.
फॉस्फोरस	180–250 मि.ग्रा.
आयरन	0.8–2.0 मि.ग्रा.

जिंक	0.5–2.0 मि.ग्रा.
विटामिन B_{12}	1–8 माइक्रोग्राम
विटामिन D	5–20 माइक्रोग्राम
सेलेनियम	20–40 माइक्रोग्राम

स्रोत: भारतीय खाद्य संरचना सारणी (आईसीएमआर–राष्ट्रीय पोषण संस्थान, 2017); यूएसडीए फूड डाटा सेंट्रल डेटाबेस; खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ), 2024।

यह पोषण संरचना मछली को एक ऐसा खाद्य पदार्थ बनाती है जो शरीर की वृद्धि, ऊर्जा उत्पादन, रोग प्रतिरोधक क्षमता और मानसिक विकास के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण है।

उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन का सर्वोत्तम स्रोत

प्रोटीन शरीर का निर्माणकारी तत्व है। मांसपेशियों, त्वचा, रक्त, एंजाइमों तथा हार्मोनों के निर्माण में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मछली में लगभग 19 से 22 प्रतिशत तक उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन पाया जाता है जिसमें सभी आवश्यक अमीनो अम्ल संतुलित मात्रा में उपस्थित होते हैं। मछली का प्रोटीन अत्यंत सुपाच्य होता है तथा शरीर द्वारा इसकी उपयोगिता अन्य अनेक पशु-आधारित खाद्य पदार्थों की तुलना में अधिक होती है। बच्चों, किशोरों, गर्भवती महिलाओं तथा वृद्ध व्यक्तियों के लिए यह विशेष रूप से लाभकारी है। नियमित रूप से मछली का सेवन बच्चों की वृद्धि, मांसपेशियों के विकास तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत बनाने में सहायता करता है।

ओमेगा-3 वसीय अम्ल : स्वस्थ हृदय और मस्तिष्क की कुंजी

मछली का सबसे चर्चित पोषण गुण इसमें पाए जाने वाले ओमेगा-3 वसीय अम्ल हैं। विशेषकर समुद्री मछलियों में ईकोसापेंटेनोइक अम्ल (ईपीए) और डोकोसाहेक्सेनोइक अम्ल (डीएचए) प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। ये दोनों वसीय अम्ल मानव शरीर में सीमित मात्रा में बनते हैं, इसलिए इन्हें भोजन के माध्यम से प्राप्त करना आवश्यक होता है।

ओमेगा-3 वसीय अम्ल रक्त में ट्राइग्लिसराइड स्तर को नियंत्रित करने, धमनियों में वसा के जमाव को कम करने तथा हृदय रोगों के जोखिम को घटाने में सहायता करते हैं। डीएचए मस्तिष्क तथा नेत्रों के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। गर्भावस्था के दौरान इसका पर्याप्त सेवन भ्रूण के मस्तिष्क विकास में सहायक होता है, जबकि वृद्धावस्था में यह स्मरण शक्ति एवं मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने में योगदान देता है।

विटामिनों और खनिज तत्वों का प्राकृतिक भंडार

मछली विटामिन डी के कुछ प्राकृतिक स्रोतों में से एक है। यह विटामिन कैल्शियम के अवशोषण में सहायता करता है तथा हड्डियों और दाँतों को मजबूत बनाता है। वर्तमान समय में विटामिन डी की कमी विश्वभर में एक प्रमुख स्वास्थ्य समस्या बन चुकी है, ऐसे में मछली का सेवन विशेष लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

मछली विटामिन बी$_{12}$ का भी उत्कृष्ट स्रोत है, जो लाल रक्त कणिकाओं के निर्माण, तंत्रिका तंत्र के स्वास्थ्य तथा एनीमिया की रोकथाम के लिए आवश्यक है। इसके अतिरिक्त इसमें कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन, जिंक, सेलेनियम तथा आयोडीन जैसे महत्वपूर्ण खनिज तत्व भी पाए जाते हैं जो शरीर के समुचित विकास एवं कार्यप्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

केवल मछली ही नहीं, अन्य जलीय खाद्य पदार्थ भी हैं पोषण के खजाने

मत्स्य संसाधनों की चर्चा प्रायः केवल मछली तक सीमित रह जाती है, जबकि झींगा, केकड़ा, सीप, मसल, क्लैम, लॉब्स्टर तथा अन्य जलीय जीव भी अत्यंत पौष्टिक खाद्य पदार्थ हैं। इनमें उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन, जिंक, आयोडीन, सेलेनियम तथा विटामिन बी$_{12}$ प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। विशेष रूप से सीप और मसल्स को सूक्ष्म पोषक तत्वों का उत्कृष्ट स्रोत माना जाता है। इनमें जिंक और आयरन की मात्रा कई बार सामान्य मछलियों से भी अधिक होती है। झींगा कम वसा और उच्च प्रोटीन वाला खाद्य पदार्थ है, जबकि सीप प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाने वाले खनिज तत्वों से भरपूर होते हैं। इसलिए पोषण सुरक्षा की दृष्टि से सम्पूर्ण जलीय खाद्य संसाधनों का महत्व अत्यंत व्यापक है।

भारत की सर्वाधिक पौष्टिक मछलियाँ

भारत के समुद्री तथा अंतर्देशीय जल संसाधनों में अनेक



पौष्टिक मछली प्रजातियाँ उपलब्ध हैं। भारतीय तेल सार्डीन (*सार्डिनेला लॉन्गिसेप्स*) को ओमेगा-3 वसीय अम्लों, कैल्शियम एवं विटामिन डी का उत्कृष्ट स्रोत माना जाता है। भारतीय मैकेरल (*रैस्ट्रेलिगर कनागुरटा*) हृदय स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी मानी जाती है। हिल्सा (*टेन्यूलोसा इलिशा*) अपने स्वाद के साथ-साथ उच्च ओमेगा-3 सामग्री के लिए प्रसिद्ध है।

मीठे पानी की प्रमुख मछलियों में रोहू (*लेबियो रोहिता*), कतला (*कतला कतला*) तथा मृगल (*सिरिनस मृगाला*) उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन तथा खनिज तत्वों के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। ट्यूना जैसी समुद्री मछलियाँ प्रोटीन और ओमेगा-3 दोनों की दृष्टि से अत्यंत लाभकारी मानी जाती हैं।

भारत में कुपोषण की चुनौती और मछली की भूमिका

भारत ने खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय प्रगति की है, फिर भी कुपोषण आज भी एक गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य चुनौती बना हुआ है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार बच्चों में अवरुद्ध वृद्धि, कम वजन तथा महिलाओं में एनीमिया जैसी समस्याएँ अभी भी व्यापक हैं। ऐसी स्थिति में मछली और अन्य जलीय खाद्य पदार्थ पोषण सुरक्षा के प्रभावी साधन बन सकते हैं। इनमें उपस्थित उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन, आयरन, जिंक, कैल्शियम तथा विटामिन बी$_{12}$ बच्चों की वृद्धि एवं विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विशेष रूप से ग्रामीण एवं आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के लिए मछली अपेक्षाकृत सुलभ एवं किफायती पशु-आधारित प्रोटीन का स्रोत हो सकती है। यदि विद्यालयों के मध्यान्ह भोजन, आंगनवाड़ी पोषण कार्यक्रमों तथा सामुदायिक पोषण योजनाओं में स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार जलीय खाद्य पदार्थों को शामिल किया जाए, तो प्रोटीन एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

ग्रामीण भारत के लिए प्रोटीन सुरक्षा और शहरी भारत के लिए स्वास्थ्य सुरक्षा

ग्रामीण भारत में मछली उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन की कमी को दूर करने का एक प्रभावी माध्यम बन सकती है। छोटे तालाबों, जलाशयों और एकीकृत कृषि-मत्स्य प्रणालियों के

माध्यम से स्थानीय स्तर पर मछली उत्पादन बढ़ाकर पोषण सुरक्षा और आजीविका दोनों को सुदृढ़ किया जा सकता है। दूसरी ओर, शहरी क्षेत्रों में बढ़ते हृदय रोग, मधुमेह, मोटापा और मानसिक तनाव जैसी समस्याओं के संदर्भ में मछली का महत्व और भी बढ़ जाता है। ओमेगा-3 वसीय अम्लों से भरपूर मछलियाँ हृदय स्वास्थ्य को बेहतर बनाने, मस्तिष्क कार्यप्रणाली को सुदृढ़ करने तथा जीवनशैली से जुड़ी बीमारियों के जोखिम को कम करने में सहायक हैं। इस प्रकार यदि ग्रामीण भारत के लिए मछली सुलभ एवं उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन का स्रोत है, तो शहरी भारत के लिए यह हृदय, मस्तिष्क एवं दीर्घकालिक स्वास्थ्य की सुरक्षा का प्राकृतिक साधन है।

मछली एवं अन्य जलीय खाद्य पदार्थ मानव पोषण की दृष्टि से अत्यंत मूल्यवान संसाधन हैं। इनमें उपस्थित उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन, ओमेगा-3 वसीय अम्ल, विटामिन डी, विटामिन बी$_{12}$ तथा अनेक आवश्यक खनिज तत्व इन्हें संतुलित आहार का महत्वपूर्ण घटक बनाते हैं। विश्व स्तर पर बढ़ता मत्स्य उत्पादन तथा भारत में इस क्षेत्र की तीव्र प्रगति इस बात का प्रमाण है कि भविष्य की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा में इनकी भूमिका और भी महत्वपूर्ण होने वाली है।

भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में, जहाँ एक ओर कुपोषण की चुनौती विद्यमान है और दूसरी ओर जीवनशैली से जुड़ी बीमारियाँ तेजी से बढ़ रही हैं, वहाँ मछली एवं अन्य जलीय खाद्य पदार्थ दोनों समस्याओं के समाधान में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। अतः पोषण सुरक्षा, स्वास्थ्य संवर्धन और सतत विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए जलीय खाद्य संसाधनों के उत्पादन, उपलब्धता और उपभोग को बढ़ावा देना समय की आवश्यकता है।

हिंदी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का सरलतम स्रोत है:

समित्रानंदन पंत

अंग्रेजी ज्ञान देती है, पर हिंदी हमें पहचान देती है।

आक्रामक विदेशी प्रजातियों का भारत की जैव-विविधता पर दुष्प्रभाव

विक्की कुमार प्रजापति

भाकृअनुप -राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

मानव अपनी असीमित महत्वाकांक्षाओं, आवश्यकताओं और अनियंत्रित गतिविधियों के कारण जैव विविधता को गंभीर रूप से नष्ट कर रहा है। इन्ही गतिविधियों के कारण देश में आक्रामक विदेशी प्रजातियों का आगमन हो रहा है जिस कारण जीवों और वनस्पतियों के प्राकृतिक आवास खत्म हो रहे हैं, जिससे वे विलुप्त होने की कगार पर हैं। मनुष्य द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर यात्रा और व्यापार करने के कारण जाने-अनजाने में हानिकारक बाहरी पौधे व जीव अन्य क्षेत्रों में पहुँच जाते हैं। ये आक्रामक प्रजातियाँ स्थानीय देशी प्रजातियों को भोजन और स्थान के लिए पीछे छोड़कर उन्हें खत्म कर देती हैं।

आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ

आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ वे पौधे जीव, या सूक्ष्मजीव होते हैं जो किसी बाहरी क्षेत्र से नए प्राकृतिक वातावरण में पहुँच जाते हैं। प्राकृतिक नियंत्रण के अभाव में, ये आक्रामक रूप से फैलकर स्थानीय जैव-विविधता, अर्थव्यवस्था और मानव स्वास्थ्य को भारी नुकसान पहुँचाते हैं। ऐसी प्रजातियाँ जो मानवीय गतिविधियों या व्यापार के माध्यम से अनजाने में या जानबूझकर भारत लाई गईं और प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र का हिस्सा बन गईं। इनमें से कई प्रजातियाँ इतनी तेजी से फैली कि उन्होंने स्थानीय (देशज) जैव विविधता को भारी नुकसान पहुँचाया है।इनके प्रमुख दुष्प्रभावों को निम्नलिखित श्रेणियों में समझा जा सकता है:

पारिस्थितिकी तंत्र और जैव-विविधता पर प्रभाव

- **स्थानिक प्रजातियों का विलुप्त होना:** ये प्रजातियाँ स्थानीय जीवों और पौधों का भोजन व आवास छीन लेती हैं, जिसके कारण देशी प्रजातियाँ धीरे-धीरे विलुप्त होने की कगार पर पहुँच जाती है।
- **भोजन श्रंखला में व्यवधान:** ये स्थानीय खाद्य श्रंखला असंतुलित कर देती हैं, जिससे पूरा इकोसिस्टम प्रभावित होता है। जैसे कि, भारत में गाजर घास या 'चटक चांदनी' (*पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस*), घनेरी या 'पंचफूली' (*लैंटाना कैमारा*) और जलकुंभी (*आइकॉर्निया क्रैसिपीज़*), गोल्डन शावर या 'पॉपकॉर्न ट्री' (*सेन्ना स्पेक्टाबिलिस*) वनस्पतियों एवं थाई मांगुर (*क्लैरियस गैरीपिनस*), मोज़ाम्बिक तिलापिया, (*ओरियोक्रोमिस मॉसैम्बिकस*) ने देशी जलीय जीवों को बहुत बड़े स्तर पर दबा दिया है।

कृषि और अर्थव्यवस्था को नुकसान

- **फसलों को क्षति:** विदेशी कीट और खरपतवार फसलों को नष्ट कर देते हैं, जिससे कृषि उपज में भारी गिरावट आती है।
- **आर्थिक लागत:** आक्रामक प्रजातियों से वैश्विक अर्थव्यवस्था को सालाना अरबों डॉलर (लगभग 423 बिलियन डॉलर) का नुकसान होता है। जैसे कि, अफ्रीकी कैटफिश ने भारतीय जल निकायों में स्थानीय मछलियों की संख्या कम कर दी है, जिससे मत्स्य पालन प्रभावित हुआ है।

मानव स्वास्थ्य और आजीविका पर प्रभाव

- **बीमारियों का प्रसार:** कई आक्रामक प्रजातियाँ जानलेवा वायरस और बीमारियों के वाहक के रूप में कार्य करती हैं।
- **संसाधनों में रुकावट:** कुछ कांटेदार विदेशी झाड़ियाँ जंगलों में चारा, ईंधन और पीने के पानी जैसे संसाधनों को रोक देती हैं। जैसे कि, पार्थेनियम (गाजर घास) के परागकण मनुष्यों में गंभीर श्वसन और त्वचा संबंधी एलर्जी का कारण बनते हैं ।

गाजर घास या 'चटक चांदनी' (*पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस*)

वर्ष 1950 के दशक में अमेरिका से आयातित गेहूँ के साथ यह अनजाने में भारत में प्रवेश कर गई थी। यह आक्रामक



घास स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है और स्थानीय वनस्पतियों को नष्ट कर देती है। गाजर घास गाजर घास या 'चटक मास्टर' (*पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस* (एक घास है जो बड़े आक्रामक तरीके से प्रभावी है। गाजर घास का सबसे प्रचलित दूसरा नाम कांग्रेस घास है। इसे पार्थेनियम, चटक चांदनी, सफेद टोपी, और गंधी बूटी के नाम से भी जाना जाता है। इसका वैज्ञानिक नाम *पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस* है और यह एक खतरनाक खरपतवार है।

घनेरी या 'पंचफूली' (*लैंटाना कैमारा*)

इसके फूल छोटे-छोटे गुच्छों में आते हैं और एक ही गुच्छे में कई रंग)सफेद, पीले, नारंगी, लाल, गुलाबी (देखने को मिलते हैं, इसलिए इसे 'पंचफूली' कहते हैं इसके फूलों की सबसे बड़ी खासियत यह है कि जैसे-जैसे फूल खिलते और पुराने होते हैं, उनका रंग बदलता रहता है ये आमतौर पर पीले से नारंगी, और फिर गुलाबी या लाल रंग के हो जाते हैं तेजी से फैलने की क्षमता के कारण, इसने भारत के लगभग



40-50% वन क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया है यह अन्य देशी वनस्पतियों और जैव विविधता को भारी नुकसान पहुंचाता है भारत में इसे अलग-अलग क्षेत्रों में घनेरी, रायमुनिया, सत्यानाशी, और पुटुस के नामों से भी जाना जाता है।

उपयोग और हानियां: यद्यपि यह पर्यावरण के लिए एक आक्रामक खरपतवार है, लेकिन पारंपरिक चिकित्सा में बुखार, सर्दी, और त्वचा संक्रमण जैसी बीमारियों के इलाज के लिए इसके औषधीय गुणों (पत्तियों और अर्क) का उपयोग किया जाता है, इसके विपरीत, इसके फल और पत्तियां जानवरों के लिए जहरीली हो सकती हैं।

जलकुंभी (*आइकॉर्निया क्रैसिपीज*)

जलकुंभी (*आइकॉर्निया क्रैसिपीज*) मूल रूप से दक्षिण अमेरिका के अमेज़न बेसिन का पौधा है। इसे 19वीं सदी के अंत (लगभग 1896) में ब्रिटिश औपनिवेशिक काल के दौरान भारत लाया गया था। इस पौधे को इसके सुंदर बैंगनी फूलों



और आकर्षक पत्तियों के कारण एक सजावटी जलीय पौधे के रूप में भारत लाया गया था। कई ऐतिहासिक कहानियों के अनुसार, ब्रिटिश गवर्नर जनरल वॉरेन हेस्टिंग्स की पत्नी मैरी हेस्टिंग्स या स्कॉटिश जूट व्यापारी जॉर्ज मॉर्गन जैसे ब्रिटिश प्रवासी इसे दक्षिण अमेरिका से भारत लेकर आए थे। इसे सबसे पहले बंगाल के बगीचों और तालाबों में लगाया गया था। भारत की गर्म और नम जलवायु इस विदेशी पौधे को बहुत रास आई। यह इतनी तेजी से फैलने लगा कि इसे नियंत्रित करना असंभव हो गया। तेजी से फैलने के कारण इसे पश्चिम बंगाल में "बंगाल का आतंक" भी कहा जाता है, क्योंकि यह तालाबों और झीलों की सारी ऑक्सीजन खींच लेता है, जिससे मछलियां मर जाती हैं यह एक बहुत तेजी से फैलने वाला खरपतवार है। यह जैव विविधता ह्रास का भी एक कारण हैं जो अनेक जलीय प्रजातियो को अपनी उपस्थिति के कारण नष्ट

कर देता हैं। यह कायिक प्रवर्धन तीव्र गति से होता है जो अल्प समय मैं ही सम्पूर्ण जलाश्य मे फ़ैल जाता है और उसे ढक् देता है इससे छुटकारा पाना बहुत कठिन है।

गोल्डन शावर या 'पॉपकॉर्न ट्री' (*सेन्ना स्पेक्टाबिलिस*)

दक्षिण और मध्य अमेरिका का मूल निवासी एक तेजी से बढ़ने वाला, सजावटी और फूलदार पेड़ है। इसे हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में अक्सर 'अमेरिकी कैसिया' या 'गोल्डन शावर', 'पॉपकॉर्न ट्री' कहा जाता है। यह पौधा अपने चमकीले पीले फूलों के लिए जाना जाता है। भारत में इसे एक आक्रामक



विदेशी प्रजाति माना जाता है। यह बहुत तेजी से फैलता है और अन्य देशी पेड़ों और घास प्रजातियों के विकास को रोकता है। इसकी घनी पत्तियां अन्य पौधों तक सूरज की रोशनी नहीं पहुंचने देतीं, जिससे जंगल के स्थानीय पौधों का दम घुटने लगता है। इससे जंगली शाकाहारी जीवों के लिए भोजन की कमी हो जाती है। यह मुख्य रूप से दक्षिण भारत के जंगलों (जैसे केरल के वायनाड, मुधुमलाई और सत्यमंगलम टाइगर रिजर्व) में एक बड़ी समस्या बन गया है, जहाँ से इसे हटाने के लिए वन विभाग द्वारा विशेष अभियान चलाए जा रहे हैं।

थाई मांगुर (*क्लैरियस गैरीपिनस*):

क्लैरियस गैरीपिनस मूल रूप से अफ्रीका और थाईलैंड की एक मांसाहारी मछली है। जिसे भारत में मुख्य रूप से थाई मांगुर या अफ्रीकी कैटफिश के नाम से जाना जाता है। यह एक आक्रामक और मांसाहारी मछली है, जो पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने के कारण भारत में प्रतिबंधित है। भारत में अफ्रीकी कैटफ़िश का आक्रमण स्थानीय जैव विविधता, पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य और जन सुरक्षा के लिए बहुआयामी खतरा पैदा करता है । वैज्ञानिक अनुसंधान स्पष्ट



रूप से इस प्रजाति के विनाशकारी पारिस्थितिक प्रभाव और इसके सेवन से जुड़े महत्वपूर्ण स्वास्थ्य जोखिमों को दर्शाता है।

क्लैरियस गैरीपिनस की असाधारण अनुकूलन क्षमता और प्रजनन क्षमता इसे स्थानीय प्रजातियों से प्रतिस्पर्धा में आगे निकलने और स्थानीय पारिस्थितिक तंत्र को बाधित करने में सक्षम बनाती है। भारत में पाई जाने वाली कई देशी मीठे पानी की मछली प्रजातियाँ, जिनमें प्रतिष्ठित महसीर भी शामिल है, अफ्रीकी कैटफिश से प्रभावित नदियों में विलुप्त हो गई हैं। इसकी उच्च प्रजनन क्षमता, तीव्र वृद्धि और विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति सहनशीलता इसे एक आक्रामक आक्रमणकारी बनाती है। वैज्ञानिक अध्ययनों से पुष्टि होती है कि अफ्रीकी कैटफिश अवसरवादी शिकारी हैं, जो देशी मछलियों, मछली के अंडों, उभयचरों, सरीसृपों और यहाँ तक कि पक्षियों को भी खा जाती हैं, जिससे जैव विविधता कम होती है और खाद्य श्रृंखलाएँ अस्थिर हो जाती हैं। अफ्रीकी कैटफ़िश के आगमन को नए परजीवियों और रोगजनकों के प्रसार से भी जोड़ा गया है, जिसके परिणामस्वरूप स्थानीय मछली आबादी में रोग का प्रकोप और बड़े पैमाने पर मृत्यु दर देखी गई है।

मोजाम्बिक तिलापिया (*ओरियोक्रोमिस मॉसैम्बिकस*)

मोजाम्बिक तिलापिया एक लोकप्रिय और तेजी से बढ़ने वाली मीठे पानी की मछली है। इसे भारत के कई हिस्सों में 'जलेबी मछली' के नाम से भी जाना जाता है। यह उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन का एक बहुत अच्छा स्रोत है। तिलापिया जैसी मछलियाँ व्यावसायिक उपयोग के लिए लाई गईं, जो अब भारतीय नदियों में स्थानीय मछलियों के अस्तित्व के लिए



खतरा बन गई हैं। दक्षिण-पूर्वी अफ्रीका की मूल निवासी यह मछली अत्यधिक कठोर और विभिन्न पर्यावर्णीय परिस्थितियों के अनुकूल ढलने में सक्षम है। अपने त्वरित विकास, विविध आहार और विभिन्न जल परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता के कारण यह वैश्विक स्तर पर मत्स्यपालन के लिए बहुत लोकप्रिय है। तिलापिया बहुत तेजी से प्रजनन करती है और काफी आक्रामक होती है। जब यह मछली प्राकृतिक जलाशयों)जैसे नदियों या झीलों (में पहुंच जाती है, तो वहां की देशी मछलियों के भोजन और आवास को छीन लेती है, जिससे स्थानीय जैव विविधता को भारी नुकसान पहुँचता है।

आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ भारत की जैव-विविधता, पारिस्थितिकी तंत्र, कृषि, मत्स्य संसाधनों तथा मानव आजीविका के लिए एक गंभीर चुनौती हैं। इनके अनियंत्रित प्रसार से देशी प्रजातियों के आवास एवं खाद्य संसाधनों पर दबाव बढ़ता है और पारिस्थितिक संतुलन प्रभावित होता है। गाजर घास, लैंटाना, जलकुंभी, *सेन्ना स्पेक्टाबिलिस*, अफ्रीकी कैटफिश तथा मोजाम्बिक तिलापिया जैसी प्रजातियों के उदाहरण स्पष्ट करते हैं कि एक बार स्थापित होने के बाद इनका नियंत्रण अत्यंत कठिन और खर्चीला हो सकता है। अतः इनके प्रवेश की रोकथाम, समय पर पहचान, नियमित निगरानी, वैज्ञानिक प्रबंधन तथा आवश्यकतानुसार उन्मूलन के लिए समन्वित प्रयास किए जाने चाहिए। साथ ही, जनसामान्य, किसानों, मछुआरों, मत्स्यपालकों और संबंधित विभागों में आक्रामक विदेशी प्रजातियों के दुष्प्रभावों के प्रति जागरूकता बढ़ाना आवश्यक है। भारत की समृद्ध जैव-विविधता और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए इनके प्रसार को नियंत्रित करना तथा देशी प्रजातियों और पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा को प्राथमिकता देना समय की महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

हिंदी भारतीय संस्कृति की आत्मा है:

कमलापति त्रिपाठी

परिवर्तित जलवायु में जलीय पारितंत्र: संरक्षण की चुनौतियाँ और समाधान

नितिन प्रताप सिंह, मनीषा पटेल एवं आभा मिश्रा

जूलॉजी विभाग, स्कूल ऑफ लाइफ साइंसेज, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ

तेजी से बदलते जलवायु परिदृश्य में जलीय पारितंत्र नदियाँ, झीलें, आर्द्रभूमियाँ और समुद्री तंत्र गंभीर संकट का सामना कर रहे हैं। बढ़ता तापमान, महासागरीय अम्लीकरण, परिवर्तित जल चक्र, बढ़ता जलस्तर, ऑक्सीजन की कमी और प्रदूषक इन पारितंत्रों की संरचना एवं कार्यप्रणाली को प्रभावित कर रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप जैव विविधता में गिरावट, प्रजातियों का विस्थापन तथा पारिस्थितिक संतुलन में व्यवधान उत्पन्न हो रहा है। जलीय पारितंत्र में मत्स्य विविधता और नदी नेटवर्क संपर्क के बीच संबंध को समझना प्रजातियों के अस्तित्व, पारिस्थितिकी तंत्र की अखंडता और मानव कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए मौलिक है। यह अध्ययन इन चुनौतियों के बीच जलीय पारितंत्रों के संरक्षण और पुनर्स्थापन की आवश्यकता को रेखांकित करता है। इसमें जलवायु-सहनशील रणनीतियों जैसे - आवास पुनर्जीवन, जल गुणवत्ता सुधार, सतत संसाधन प्रबंधन तथा स्थानीय समुदायों की सक्रिय भागीदारी को प्रमुख समाधान के रूप में प्रस्तुत किया गया है। साथ ही, प्रभावी नीतियों, वैज्ञानिक अनुसंधान और नवाचार आधारित तकनीकों की भूमिका को भी महत्वपूर्ण माना गया है। जलीय पारितंत्रों का संरक्षण केवल पर्यावरणीय आवश्यकता नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व और सतत विकास का आधार है। एक समन्वित, दूरदर्शी और सहभागितापूर्ण दृष्टिकोण ही इन "नीले जीवन-तंत्रों" को भविष्य के लिए सुरक्षित रख सकता है।

परिचय

जलीय पारितंत्र जिनमें नदियाँ, झीलें, आर्द्रभूमियाँ और समुद्री पर्यावरण शामिल हैं पृथ्वी के सबसे गतिशील और उत्पादक तंत्रों में से एक हैं। ये पारितंत्र सूक्ष्म प्लवक (प्लैंकटन) से लेकर बड़े कशेरुकी जीवों तक का समर्थन करते हैं और वैश्विक पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जलीय पारितंत्रों का महत्व केवल पारिस्थितिक कार्यों तक सीमित नहीं है, बल्कि ये सामाजिक व आर्थिक लाभ भी प्रदान करते हैं। मत्स्य पालन और जलीय कृषि के माध्यम से ये खाद्य का प्रमुख स्रोत हैं मछलियाँ और अन्य जलीय जीव आवश्यक प्रोटीन और सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान करते हैं। नदियाँ और झीलें सिंचाई एवं पेयजल आपूर्ति के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। आर्द्रभूमियाँ प्राकृतिक फिल्टर, जल की गुणवत्ता और बाढ़ को कम करने में सहायक होती है। जलीय पारितंत्रों की स्वच्छता और स्थिरता सीधे तौर पर जैव विविधता, मानव कल्याण, आर्थिक स्थिरता और खाद्य सुरक्षा से जुड़ी हुई है।

ये पारितंत्र तेजी से बढ़ते जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के कारण गंभीर खतरे में हैं, जल तंत्रों के तापमान में वृद्धि से प्रजातियों के चयापचय, वृद्धि, प्रजनन चक्र और प्रजातियों के वितरण प्रभावित हो रहे हैं। जिससे संवेदनशील प्रजातियाँ या तो प्रवास करने को मजबूर होती हैं या स्थानीय स्तर पर विलुप्त हो जाती हैं। जलवायु परिवर्तन वर्षा को भी प्रभावित कर रहा है, जिससे अनियमित जल चक्र उत्पन्न हो रहे हैं, जिनमें अत्यधिक बाढ़ और लंबे समय तक सूखा शामिल है। समुद्री पर्यावरण में वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड का बढ़ता स्तर महासागरीय अम्लीकरण को बदल देता है, जिससे जैव-शारीरिक प्रक्रियाएँ और पारितंत्र उत्पादकता प्रभावित होती है। जो प्रवाल (कोरल) और शंखधारी जीवों को प्रभावित करते हैं।

जल चक्र में परिवर्तन नदी प्रवाह, अवसाद परिवहन और पोषक तत्वों की गतिशीलता को बाधित करता है, जिससे आवास उपलब्धता और पारितंत्र स्थिरता प्रभावित होती है। इसके अतिरिक्त, प्रदूषण जिसमें औद्योगिक अपशिष्ट, कृषि अपवाह और माइक्रोप्लास्टिक जैसे उभरते प्रदूषक शामिल हैं पारितंत्र की संवेदनशीलता को और बढ़ाते हैं। इन सभी कारकों के संयुक्त प्रभाव से घुलित ऑक्सीजन में कमी (हाइपॉक्सिया), यूट्रोफिकेशन में वृद्धि और जल गुणवत्ता में गिरावट देखी जाती है। ये परिवर्तन अकेले नहीं होते, बल्कि अक्सर अन्य

मानवजनित दबावों के साथ मिलकर इनके प्रभाव को और अधिक गंभीर बना देते हैं।

इन जटिल और व्यापक चुनौतियों को देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि जलवायु परिवर्तन जलीय पारितंत्रों को किस प्रकार प्रभावित करता है और इनके संरक्षण के लिए प्रभावी रणनीतियाँ विकसित करें। इस अध्ययन का उद्देश्य जलीय पारितंत्रों पर जलवायु प्रेरित प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण तथा उनके संरक्षण और पुनर्स्थापन के लिए सतत और जलवायु सहनशील समाधानों की खोज करना है। पारिस्थितिक समझ और प्रबंधन दृष्टिकोणों के समन्वय के माध्यम से यह कार्य ऐसी रणनीतियों के विकास में योगदान देने का प्रयास करता है, जो जलीय जैव विविधता की रक्षा करें, पारितंत्र सेवाओं को बनाए रखें और बदलते पर्यावरणीय परिदृश्य में दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करें (चित्र 1)।

जलवायु परिवर्तन और जलीय पारितंत्र

जलवायु परिवर्तन जलीय पारितंत्रों की भौतिक, रासायनिक और जैविक विशेषताओं को प्रभावित कर रहा है। ये परिवर्तन वैश्विक तापमान में वृद्धि, वर्षा पैटर्न में बदलाव, वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड के बढ़ते स्तर तथा बढ़ते मानवजनित दबावों के कारण हो रहे हैं। निम्नलिखित उपखंडों में प्रमुख जलवायुसम्बंधित कारकों और उनके प्रभावों का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

बढ़ते तापमान के प्रभाव

तापमान में वृद्धि से जलीय पारितंत्रों पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। जल का तापमान जलीय जीवों की शारीरिक प्रक्रियाओं जैसे चयापचय, वृद्धि और प्रजनन को नियंत्रित करता है। बढ़ता तापमान मछलियों और अन्य जलीय जीवों के चयापचय दर को तेज करता है, जिससे उनकी ऊर्जा की मांग बढ़ जाती है, जबकि घुलित ऑक्सीजन की उपलब्धता कम हो जाती है। यह असंतुलन शारीरिक तनाव, कमजोर प्रतिरक्षा, प्रजनन प्रक्रियाएँ, प्रजातियों के वितरण और रोगों के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ा सकता है।

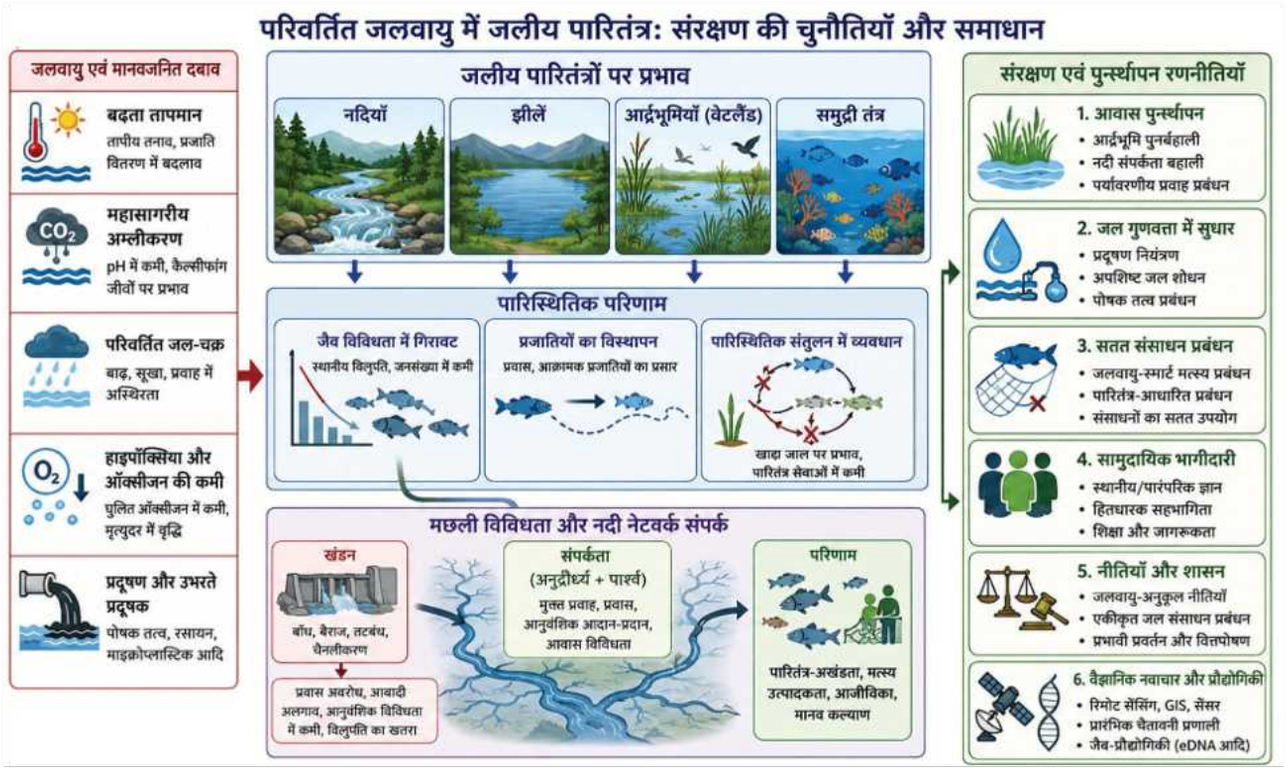

चित्र 1. परिवर्तित जलवायु परिस्थितियों में जलीय पारितंत्रों पर पड़ने वाले प्रभावों तथा संरक्षण एवं पुनर्स्थापन रणनीतियों का वैज्ञानिक चित्र।

महासागरीय अम्लीकरण और मीठे जल का रासायनिक परिवर्तन

महासागरीय अम्लीकरण वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) के समुद्री जल में अवशोषण के कारण होता है, जिससे कार्बोनिक अम्ल बनता है और pH स्तर कम हो जाता है। यह प्रक्रिया प्रवाल, मोलस्क और कुछ प्लवक प्रजातियों को गंभीर रूप से प्रभावित करती है, जो अपने खोल और कंकाल के निर्माण के लिए कार्बोनेट आयनों पर निर्भर होते हैं। इन आयनों की उपलब्धता में कमी से संरचनात्मक कमजोरी, वृद्धि में बाधा और मृत्यु दर में वृद्धि होती है, जिससे संपूर्ण समुद्री खाद्य जाल प्रभावित होता है।

जल चक्र में परिवर्तन

जलवायु परिवर्तन जल चक्र को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित कर रहा है, जिससे जल सम्बंधित घटनाएँ बढ़ रही हैं। जिससे अत्यधिक वर्षा और बाढ़ देखी जाती है, जबकि अन्य क्षेत्रों में लंबे समय तक सूखा और जल की कमी होती है। नदी प्रवाह प्रणाली में परिवर्तन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह अवसाद परिवहन, पोषक चक्रण और आवास संपर्क को प्रभावित करता है। प्रवाह के समय और मात्रा में बदलाव मछलियों और अन्य जलीय जीवों के प्रजनन और प्रवास को बाधित कर सकता है। कम प्रवाह नदियों की स्व-शुद्धिकरण क्षमता को भी कम करता है, जिससे जल गुणवत्ता और पारितंत्र स्वास्थ्य में गिरावट आती है। जिससे जलीय जीवन के लिए तनावपूर्ण परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं।

हाइपॉक्सिया और ऑक्सीजन की कमी

हाइपॉक्सिया, अर्थात जल में घुलित ऑक्सीजन की कमी, जलीय पारितंत्रों में तेजी से बढ़ती समस्या है, बढ़ते तापमान के कारण जल में ऑक्सीजन की घुलनशीलता कम हो जाती है, जबकि जलीय जीवों की चयापचय दर बढ़ने से ऑक्सीजन की मांग बढ़ जाती है। जिसके कारण मछलियाँ श्वसन कठिनाई, धीमी वृद्धि और उच्च मृत्यु दर का सामना करती हैं, यूट्रोफिकेशन, जो अत्यधिक पोषक तत्वों के प्रवेश (जैसे कृषि अपवाह, अपशिष्ट जल) के कारण होता है, जिसके परिणामस्वरूप शैवाल की सघन वृद्धि होती है, सूर्य के प्रकाश का प्रवेश कम हो जाता है और ऑक्सीजन की गंभीर कमी (हाइपोक्सिया) हो जाती है। इस प्रक्रिया के कारण अक्सर मछलियाँ मर जाती हैं, जैव विविधता का नुकसान होता है और ऐसे मृत क्षेत्र बन जाते हैं जो जलीय जीवन के लिए अनुपयुक्त होते हैं।

प्रदूषण अंतःक्रियाएँ (माइक्रोप्लास्टिक जैसे उभरते प्रदूषकों सहित)

प्रदूषण जलीय पारितंत्रों के लिए एक प्रमुख तनाव कारक है। पारंपरिक प्रदूषक जैसे भारी धातुएँ, कीटनाशक और औद्योगिक रसायन, तापमान और pH जैसे जलवायु प्रेरित कारकों के साथ अंतःक्रिया करके उनकी विषाक्तता, गतिशीलता और जैव-उपलब्धता को बदल देते हैं। उभरते प्रदूषक, विशेष रूप से माइक्रोप्लास्टिक, अपनी व्यापक उपस्थिति और स्थायित्व के कारण विशेष ध्यान आकर्षित कर रहे हैं। माइक्रोप्लास्टिक विषैले पदार्थों जैसे स्थायी कार्बनिक प्रदूषकों और भारी धातुओं के वाहक के रूप में कार्य कर सकते हैं, जिससे ये खाद्य जाल में प्रवेश करते हैं। जब जलीय जीव इन्हें निगलते हैं, तो ये शारीरिक क्षति, में व्यवधान उत्पन्न कर सकते हैं। है। पारितंत्र स्तर पर, ये अंतःक्रियाएँ प्रजातियों की संरचना को बदल सकती हैं, सहनशीलता को कम कर सकती हैं।

पारिस्थितिक परिणाम

जलीय पारितंत्रों में जलवायु परिवर्तन का सबसे गंभीर परिणाम जैव विविधता में गिरावट है। अनेक जलीय प्रजातियाँ सीमित पर्यावरणीय परिस्थितियों में विकसित हुई हैं, जिससे वे तापमान, ऑक्सीजन की उपलब्धता और जल रसायन में बदलाव के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं। संवेदनशील समूहों में शीत जल मछलियाँ, उभयचर तथा कुछ अकशेरुकी जीव विशेष रूप से प्रभावित होते हैं। प्रवाल भित्तियाँ, जिन्हें जैव विविधता के हॉटस्पॉट के रूप में जाना जाता है, बढ़ते समुद्री तापमान और अम्लीकरण के कारण व्यापक स्तर पर ब्लीचिंग का सामना कर रही हैं, जब ये परिस्थितियाँ उनकी सहनशील सीमा से बाहर चली जाती हैं, तो प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा बढ़ जाता है। जैव विविधता में कमी भविष्य के पर्यावरणीय तनावों के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ा देती है।

मछली विविधता और नदी नेटवर्क संपर्क

मीठे जल पारितंत्रों में मछलियों की विविधता नदी नेटवर्क की संरचनात्मक और कार्यात्मक संपर्कता से घनिष्ठ रूप से जुड़ी होती है। नदियाँ पृथक तंत्र नहीं हैं, बल्कि वे परस्पर जुड़े मार्गों का निर्माण करती हैं, जिनके माध्यम से जल, पोषक तत्व, अवसाद और जीव विभिन्न परिदृश्यों में संचरित होते हैं। यह संपर्कता पारिस्थितिक प्रक्रियाओं को बनाए रखने, विभिन्न मछली समुदायों का समर्थन करने तथा जलीय पारितंत्रों की दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए अत्यंत आवश्यक है। हालांकि, जलवायु परिवर्तन और मानव हस्तक्षेप इन संपर्कों को तेजी से बाधित कर रहे हैं, जिससे मछलियों की विविधता और पारितंत्र स्वास्थ्य पर गंभीर खतरे उत्पन्न हो रहे हैं।

संरक्षण की चुनौतियाँ

जलीय पारितंत्रों के महत्व के प्रति बढ़ती जागरूकता के बावजूद, उनका संरक्षण एक जटिल और बहुआयामी चुनौती बना हुआ है। जलवायु परिवर्तन के प्रभाव पहले से मौजूद मानवजनित दबावों के साथ मिलकर और अधिक गंभीर हो जाते हैं, कई प्रमुख चुनौतियाँ जलीय पारितंत्रों के संरक्षण और पुनर्स्थापन में बाधा उत्पन्न करती हैं।

आवासीय क्षरण और खंडन जलीय पारितंत्रों की संवेदनशीलता को और बढ़ा देते हैं। बाँध निर्माण, नदी का चैनलीकरण, वनों की कटाई, शहरी विस्तार और आर्द्रभूमि का सूखना जैसी गतिविधियों ने प्राकृतिक आवासों को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। ये परिवर्तन जल गुणवत्ता को खराब करते हैं और भोजन, प्रजनन तथा आश्रय के लिए आवश्यक आवासों की उपलब्धता को कम करते हैं। नीतिगत और प्रशासनिक सीमाएँ भी संरक्षण के लिए बड़ी बाधाएँ प्रस्तुत करती हैं। कई क्षेत्रों में पर्यावरणीय नियम या तो अपर्याप्त हैं या उनका प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो पाता। कमजोर संस्थागत ढाँचा, विभिन्न प्रशासनिक निकायों के बीच समन्वय की कमी और अपर्याप्त वित्तीय संसाधन संरक्षण उपायों के कार्यान्वयन को बाधित करते हैं। इसके अतिरिक्त, नीतियों में अक्सर जलवायु परिवर्तन के पहलुओं को शामिल नहीं किया जाता, जिससे प्रबंधन रणनीतियाँ पुरानी और अप्रभावी हो जाती हैं। स्थानीय समुदायों और आदिवासी समूहों की भागीदारी का अभाव भी संरक्षण प्रयासों की सफलता को सीमित करता है।

वैज्ञानिक नवाचार और प्रौद्योगिकी

विज्ञान और प्रौद्योगिकी में प्रगति जलीय पारितंत्रों की निगरानी, प्रबंधन और पुनर्स्थापन के लिए शक्तिशाली उपकरण प्रदान करती है। रिमोट सेंसिंग और भौगोलिक सूचना प्रणाली बड़े पैमाने पर पर्यावरणीय परिवर्तनों जैसे भूमि उपयोग, जल गुणवत्ता और आवास वितरण की निगरानी में सक्षम हैं। ये उपकरण डेटा आधारित निर्णय लेने को सुदृढ़ करते हैं और पारिस्थितिक आकलन की सटीकता बढ़ाते हैं। जैव प्रौद्योगिकी आधारित विधियाँ, जैसे पर्यावरणीय डीएनए विश्लेषण और आनुवंशिक निगरानी, जैव विविधता के आकलन और आक्रामक प्रजातियों की पहचान के लिए उभरते हुए प्रभावी उपकरण हैं। ये तकनीकें पारंपरिक विधियों की तुलना में तेज, सटीक और गैर-आक्रामक विकल्प प्रदान करती हैं, जिससे संरक्षण कार्यों की दक्षता और सटीकता में वृद्धि होती है।

भविष्य की दिशाएँ

जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में जलीय पारितंत्रों के सामने उपस्थित जटिल चुनौतियों का समाधान करने के लिए दूरदर्शी और अनुकूलनशील रणनीतियों की आवश्यकता है, जो वैज्ञानिक प्रगति और वैश्विक सहयोग पर आधारित हों। इस दिशा में सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता बहुविषयक अनुसंधान को बढ़ावा देने की है, जिसमें पारिस्थितिकी, जलवायु विज्ञान, जलविज्ञान, सामाजिक व आर्थिक अध्ययन और नीतिगत विश्लेषण का समन्वय हो। ऐसा दृष्टिकोण विभिन्न तनाव कारकों के प्रति पारितंत्र की प्रतिक्रियाओं को समग्र रूप से समझने में सहायक होता है और प्रभावी प्रबंधन रणनीतियों के विकास को समर्थन देता है।

जलवायु मॉडलों का पारिस्थितिक आंकड़ों के साथ एकीकरण भविष्य के अनुसंधान का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। पूर्वानुमानित जलवायु परिदृश्यों को प्रजातियों के वितरण मॉडल, जलविज्ञानीय प्रक्रियाओं और पारितंत्र गतिशीलता के साथ जोड़ने से प्रभाव आकलन की सटीकता बढ़ सकती है और अनुकूलन-आधारित प्रबंधन रणनीतियों को दिशा मिल सकती है। यह एकीकरण संवेदनशील क्षेत्रों और प्रजातियों की पहचान करने में सहायक होगा, जिससे लक्षित संरक्षण प्रयास संभव हो सकेंगे।

दीर्घकालिक निगरानी कार्यक्रम पर्यावरणीय परिवर्तनों को समझने और संरक्षण उपायों की प्रभावशीलता का

मूल्यांकन करने के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। जल गुणवत्ता, जैव विविधता और पारितंत्र कार्यप्रणाली से संबंधित निरंतर डेटा संग्रह प्रवृत्तियों और उभरते खतरों की पहचान में मदद करता है। रिमोट सेंसिंग और स्वचालित सेंसर जैसे उन्नत निगरानी उपकरण डेटा की सटीकता और उपलब्धता को बढ़ाते हैं, जिससे समय पर निर्णय लेना संभव होता है।

वैश्विक सहयोग को सुदृढ़ करना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि जलवायु परिवर्तन और जलीय पारितंत्रों का क्षरण सीमाओं से परे समस्याएँ हैं। अनुसंधान, नीति निर्माण और संसाधन प्रबंधन में अंतरराष्ट्रीय सहयोग ज्ञान के आदान प्रदान, क्षमता निर्माण और समन्वित कार्रवाई को बढ़ावा देता है। साझा ढाँचे और साझेदारियाँ सामान्य चुनौतियों का समाधान करने और क्षेत्रीय तथा वैश्विक स्तर पर जलीय संसाधनों के सतत प्रबंधन को सुनिश्चित करने में सहायक होती हैं।

जलीय पारितंत्र जलवायु परिवर्तन और मानवजनित दबावों के संयुक्त प्रभावों के कारण व्यापक परिवर्तन का सामना कर रहे हैं। बढ़ते तापमान, परिवर्तित जल चक्र, महासागरीय अम्लीकरण, ऑक्सीजन की कमी और प्रदूषण पारितंत्र की संरचना और कार्यप्रणाली को प्रभावित कर रहे हैं, जिससे जैव विविधता में गिरावट, प्रजातियों का विस्थापन और पारितंत्र सेवाओं में कमी हो रही है। ये चुनौतियाँ प्रभावी संरक्षण और पुनर्स्थापन रणनीतियों की तत्काल आवश्यकता को रेखांकित करती हैं। जलीय पारितंत्रों की स्थिरता मानव कल्याण से जुड़ी हुई है, क्योंकि ये खाद्य सुरक्षा, जल आपूर्ति, जलवायु नियंत्रण और आर्थिक समर्थन जैसी आवश्यक सेवाएँ प्रदान करते हैं। इन पारितंत्रों का संरक्षण केवल पर्यावरणीय प्राथमिकता ही नहीं, बल्कि सामाजिक व आर्थिक आवश्यकता भी है। इन चुनौतियों का समाधान एकीकृत, सहभागी और दूरदर्शी दृष्टिकोणों के माध्यम से संभव है, जो वैज्ञानिक ज्ञान, नीतिगत समर्थन और सामुदायिक भागीदारी को एक साथ लाते हैं। जलीय पारितंत्र का संरक्षण एक सतत भविष्य सुनिश्चित करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। सुदृढ़ शासन, बहुविषयक अनुसंधान और वैश्विक सहयोग द्वारा समर्थित सामूहिक प्रयास ही इन तंत्रों को आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रख सकते हैं।

राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है:

महात्मा गांधी

हिंदी का प्रयोग करें, गर्व का अनुभव करें।

मत्स्य एवं कृषि क्षेत्र में केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) उत्पादन तकनीक का महत्व

आशीष सिंह[1], संतोष कुमार[1], दिनेश कुमार[2], सीपी सिंह[2], शशांक सिंह[2], वैभव त्रिपाठी[1] एवं तनुज भारती[1]

[1]भाकृअप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

[2]आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

प्रकृति के संरक्षण और कृषि के साथ-साथ पशुओं के विकास के लिए समान रूप से कारगर साबित होने वाले वर्मीकम्पोस्ट के बारे में हमें कितनी जानकारी है यह खाद बनाने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली एक अनोखी और प्राकृतिक विधि है, जो मिट्टी की गुणवत्ता को बढ़ाती है और पौधों को पोषण प्रदान करती है।

वर्मी कम्पोस्ट

वर्मीकम्पोस्ट एक जैविक प्रक्रिया है, जिसमें केंचुओं एवं लाभकारी सूक्ष्मजीवों की सहायता से जैविक कचरे को उच्च गुणवत्ता वाली प्राकृतिक खाद में परिवर्तित किया जाता है। यह एक गैर-थर्मोफिलिक एवं बायो-ऑक्सीडेटिव प्रक्रिया है, जिसमें केंचुए जैविक पदार्थों को विघटित कर बारीक, पीट जैसी संरचना वाली खाद तैयार करते हैं। वर्मीकम्पोस्ट में उच्च छिद्रता, उत्तम वातन, जलधारण क्षमता, जल निकास, सूक्ष्मजीवी सक्रियता तथा उत्कृष्ट पोषक तत्व एवं बफरिंग क्षमता पाई जाती है, जो मिट्टी की उर्वरता एवं पौधों की वृद्धि के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। इसमें उपलब्ध पोषक तत्व एवं खनिज पौधों को संतुलित पोषण प्रदान करते हैं तथा मिट्टी के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में सुधार करते हैं। वर्मीकम्पोस्ट टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देने के साथ-साथ कृषि, घरेलू, औद्योगिक एवं अस्पतालों से निकलने वाले जैविक कचरे के सुरक्षित प्रबंधन में भी उपयोगी है। यह मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों जैसे बैसिलस, स्यूडोमोनास एवं स्ट्रेप्टोमाइसेस की वृद्धि को बढ़ावा देता है, जो रोगजनक सूक्ष्मजीवों के नियंत्रण में सहायक होते हैं। केंचुओं को 'किसानों का मित्र' तथा 'प्रकृति का हल चलाने वाला' कहा जाता है, क्योंकि वे मिट्टी के बड़े कणों एवं पत्तियों को तोड़कर सूक्ष्मजीवों द्वारा अपघटन की प्रक्रिया को तेज करते हैं। केंचुए एरोबिक एवं एनारोबिक सूक्ष्मजीवों की सहायता से जैविक कचरे को पचाकर उसे मूल्यवान वर्मीकम्पोस्ट में परिवर्तित करते हैं।

केंचुआ

केंचुए जैविक कचरे को उपयोगी "काले सोने" अर्थात वर्मीकम्पोस्ट में बदलने की अद्भुत क्षमता रखते हैं। Charles Darwin ने केंचुओं को "मानव जाति के अनदेखे सैनिक" तथा Aristotle ने "पृथ्वी की आंत" कहा था, क्योंकि वे विभिन्न प्रकार के कार्बनिक पदार्थों को पचाकर मिट्टी की उर्वरता बढ़ाते हैं। केंचुओं द्वारा प्रभावित मिट्टी, सूक्ष्मजीव एवं जीव-जंतुओं के क्षेत्र को "ड्रिलोस्फीयर" कहा जाता है, जिसमें उनके बिल, कास्ट एवं अन्य संरचनाएँ शामिल होती हैं। केंचुए कार्बन चक्र, मिट्टी निर्माण, सेल्यूलोज के अपघटन तथा ह्यूमस निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनकी गतिविधियाँ मिट्टी के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों को गहराई से प्रभावित करती हैं। केंचुए जैविक कचरे का अधिकांश भाग आधे पचे हुए रूप में बाहर निकालते हैं, जिसे "कास्ट" कहा जाता है। उनकी आंत में उपस्थित सूक्ष्मजीव, एंजाइम एवं हार्मोन कार्बनिक पदार्थों के तीव्र अपघटन में सहायता करते हैं और 4–8 सप्ताह में वर्मीकम्पोस्ट तैयार कर देते हैं, जबकि पारंपरिक कम्पोस्टिंग में लगभग 20 सप्ताह का समय लगता है। केंचुओं की आहार नली में एमाइलेज, सेल्युलेस, प्रोटीज, लाइपेस एवं यूरेज़ जैसे पाचन एंजाइम पाए जाते हैं, जो जैविक पदार्थों को सूक्ष्म कणों में बदलकर सूक्ष्मजीवों द्वारा विघटन को आसान बनाते हैं। उनकी आंत से गुजरने के बाद कार्बनिक पदार्थ सूक्ष्मजीवों एवं एंजाइमों के साथ मिलकर आंशिक रूप से पचे हुए "कास्ट" के रूप में बाहर निकलते हैं, जो आगे चलकर परिपक्व वर्मीकम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाते हैं। केंचुए एनेलिडा संघ के अंतर्गत आने वाले लंबे, बेलनाकार, खंडित अकशेरुकी जीव हैं। वे उभयलिंगी होते हैं तथा उनकी जीवन अवधि 3–7 वर्ष तक हो सकती है। इनके शरीर में उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन, वसा एवं कार्बोहाइड्रेट पाए जाते हैं। केंचुए मिट्टी में जैविक पदार्थों के अपघटन को तेज कर मिट्टी की उर्वरता, सूक्ष्मजीवी गतिविधि एवं पौधों की वृद्धि में महत्वपूर्ण

योगदान देते हैं, इसलिए उन्हें टिकाऊ कृषि एवं जैविक अपशिष्ट प्रबंधन का महत्वपूर्ण घटक माना जाता है।

केंचुआ खाद और कम्पोस्ट खाद की तुलना

विशेषता	केंचुआ खाद (Vermicom-post)	कम्पोस्ट खाद (Compost)
पकने की अवधि	1–1.5 माह	लगभग 4 माह
नाइट्रोजन (N)	2.5–3.0 प्रतिशत	0.5–1.5 प्रतिशत
फास्फोरस (P)	1.5–2.0 प्रतिशत	0.5–0.9 प्रतिशत
पोटाश (K)	1.5–2.0 प्रतिशत	1.2–1.4 प्रतिशत
सूक्ष्म एवं अन्य तत्व	अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में उपलब्ध	अपेक्षाकृत कम मात्रा में उपलब्ध
प्रति हेक्टेयर आवश्यकता	लगभग 2 टन	लगभग 5 टन

खाद निकालना

भोजन देने के 30–40 दिनों बाद केंचुए जैविक कचरे को काले दानेदार वर्मीकम्पोस्ट में बदल देते हैं। खाद तैयार होने पर पानी देना बंद कर दिया जाता है, जिससे केंचुए नीचे चले जाते हैं। फिर ऊपर की तैयार खाद को निकालकर अलग कर लिया जाता है। धूप में रखने पर केंचुए और नीचे चले जाते हैं, जिससे कम्पोस्ट आसानी से अलग हो जाता है। नीचे बचे केंचुओं सहित कम्पोस्ट को दोबारा कल्चर बॉक्स में डालकर अगला चक्र शुरू किया जाता है।

मिट्टी की उर्वरता में वर्मीकम्पोस्ट की भूमिका

केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) पौधों की वृद्धि, मिट्टी की उर्वरता तथा फसल उत्पादकता बढ़ाने में अत्यंत लाभकारी है। इसमें नाइट्रेट, फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम एवं मैग्नीशियम जैसे आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध रूप में पाए जाते हैं। इसका सूक्ष्म दानेदार ढांचा मिट्टी में सूक्ष्मजीवी गतिविधियों को बढ़ाता है तथा पोषक तत्वों को लंबे समय तक सुरक्षित रखता है। वर्मीकम्पोस्ट लाभकारी सूक्ष्मजीवों, एंटीबायोटिक एवं हार्मोन जैसे जैव रसायनों के निर्माण को बढ़ावा देता है, जिससे पौधों की वृद्धि एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार होता है। यह कार्बनिक पदार्थों के अपघटन को तेज कर मिट्टी की संरचना, जलधारण क्षमता और उर्वरता को बेहतर बनाता है। इसके उपयोग से मिट्टी जनित रोगों में कमी आती है तथा फसल उत्पादन में वृद्धि होती है। वर्मीकम्पोस्ट में कार्बनिक कार्बन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, तांबा, जिंक एवं सल्फर पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं, जो पौधों के संतुलित पोषण के लिए आवश्यक हैं।

वर्मीकम्पोस्ट बनाते समय ध्यान रखने योग्य बातें

कम समय में अच्छी गुणवत्ता वाली वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए निम्न बातोंपर विशेष ध्यान देना अति आवश्यक है।

1. वर्मी बेड में केंचुए डालने से पहले गोबर एवं जैविक कचरे का 15–20 दिनों तक आंशिक विच्छेदन करना आवश्यक है।
2. आंशिक विच्छेदन की पहचान यह है कि ढेर में हाथ डालने पर गर्मी महसूस न हो।
3. वर्मी बेड में 30–40% नमी बनाए रखें, क्योंकि अधिक या कम नमी में केंचुए सही कार्य नहीं करते।
4. तापमान 20–27°C के बीच होना चाहिए तथा बेड को तेज धूप से बचाना चाहिए।
5. ताजे गोबर का सीधे उपयोग न करें; इसे 4–5 दिन ठंडा होने दें।
6. जैविक कचरे में कम से कम 20% गोबर मिलाना आवश्यक है।
7. कांग्रेस घास को फूल आने से पहले गोबर के साथ मिलाकर उपयोग करने से अच्छी खाद बनती है।
8. कचरे का pH लगभग 7.0 (उदासीन) बनाए रखें; इसके लिए राख मिलाई जा सकती है।
9. वर्मीकम्पोस्टिंग के दौरान किसी भी प्रकार के कीटनाशकों का प्रयोग न करें।
10. खाद की पलटाई या कम्पोस्ट निकालते समय खुरपी या फावड़े का उपयोग न करें, ताकि केंचुओं को नुकसान न पहुंचे।

वर्मीकम्पोस्ट बनाने की विधियाँ

सामान्य विधि

वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन के लिए आवश्यकतानुसार क्षेत्र का चयन किया जाता है, जबकि मध्यम वर्ग के किसानों हेतु

लगभग 100 वर्गमीटर क्षेत्र पर्याप्त माना जाता है। अच्छी गुणवत्ता की खाद के लिए सीमेंट एवं ईंटों से 3 मीटर लंबी, 1 मीटर चौड़ी तथा 30–50 सेमी ऊँची पक्की क्यारियाँ बनाई जाती हैं। क्यारियों को तेज धूप एवं वर्षा से बचाने तथा केंचुओं के बेहतर प्रजनन हेतु छप्पर एवं हरे नेट से ढकना आवश्यक होता है। क्यारियों में पत्तियाँ, घास, सब्जियों व फलों के छिलके तथा गोबर जैसे जैविक पदार्थ भरने से पहले 15–20 दिनों तक सड़ने के लिए रखा जाता है। अधसड़ा कचरा केंचुओं के लिए उत्तम भोजन होता है, जिसे क्यारियों में लगभग 50 सेमी ऊँचाई तक भरा जाता है। इसके 3–4 दिन बाद केंचुए छोड़े जाते हैं तथा नमी बनाए रखने के लिए पानी का छिड़काव कर क्यारियों को गीली बोरियों से ढक दिया जाता है। इस विधि से 1 टन जैविक कचरे से लगभग 0.6–0.7 टन वर्मीकम्पोस्ट प्राप्त होती है।

चक्रीय चार हौद विधि

इस विधि में 12×12×2.5 फीट आकार का गड्ढा बनाकर उसे ईंटों की सहायता से चार बराबर क्यारियों में विभाजित किया जाता है। प्रत्येक क्यारी लगभग 5.5×5.5×2.5 फीट की होती है तथा विभाजक दीवारों में केंचुओं एवं हवा के आवागमन हेतु छिद्र बनाए जाते हैं। क्यारियों को क्रमवार एक-एक माह के अंतराल पर जैविक कचरे से भरा जाता है और पानी छिड़ककर पॉलीथिन से ढक दिया जाता है ताकि अपघटन प्रक्रिया शुरू हो सके। पहले गड्ढे का कचरा अधसड़ा होने एवं ताप कम होने पर उसमें लगभग 5 किग्रा केंचुए छोड़े जाते हैं। नमी बनाए रखने हेतु नियमित पानी का छिड़काव किया जाता है। धीरे-धीरे केंचुए विभाजक दीवारों के छिद्रों से अन्य क्यारियों में पहुंचकर वहां भी वर्मीकम्पोस्ट बनाना शुरू कर देते हैं। चार माह में सभी गड्ढे भर जाते हैं और पहले गड्ढे में तैयार खाद प्राप्त हो जाती है, जिसे निकालकर पुनः कचरा भर दिया जाता है। इस विधि से एक गड्ढे में लगभग 10 क्विंटल कचरे से 7 क्विंटल वर्मीकम्पोस्ट प्राप्त होती है। चार गड्ढों से वर्ष में तीन चक्रों द्वारा लगभग 84 क्विंटल खाद तथा 100 किग्रा केंचुए प्राप्त किए जा सकते हैं।

वर्मीकॉम्पोस्ट के लाभ

वर्मीकम्पोस्ट मिट्टी की गुणवत्ता एवं उर्वरता बढ़ाने में अत्यंत उपयोगी है। यह पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान कर उनकी वृद्धि एवं उत्पादन क्षमता में सुधार करता है। वर्मीकम्पोस्ट प्राकृतिक विधि से तैयार होने के कारण प्रदूषण कम करने में सहायक होता है तथा लाभकारी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को बढ़ावा देता है। इसमें रोग एवं कीट नियंत्रण के गुण पाए जाते हैं, जिससे फसलें विभिन्न बीमारियों और हानिकारक कीटों से सुरक्षित रहती हैं। वर्मीकम्पोस्ट पौधों के लिए पोषण का एक प्रभावी स्रोत है, जो सतत कृषि एवं पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके उपयोग से मिट्टी की








संरचना, जलधारण क्षमता एवं खाद्य क्षमता में सुधार होता है। साथ ही यह प्राकृतिक एवं जैविक खेती को प्रोत्साहित कर जलवायु संरक्षण में भी योगदान देता है। वर्मीकम्पोस्ट कम लागत में घर या खेत पर आसानी से तैयार किया जा सकता है, इसलिए यह किसानों एवं उद्यान प्रेमियों के लिए एक लाभकारी एवं पर्यावरण-अनुकूल विकल्प है।

वर्मीवाश बनाना

वर्मीवाश एक तरल जैविक घोल है, जिसे पत्तियों पर छिड़काव के लिए उपयोग किया जाता है। इसे 10–25 लीटर क्षमता वाली प्लास्टिक बाल्टी या टोंटी लगे मिट्टी के मटके में तैयार किया जाता है। बाल्टी में सबसे नीचे ईंट और पत्थर, फिर रेत, उसके ऊपर मिट्टी व पुराना कम्पोस्ट तथा सबसे ऊपर हरी घास एवं पत्तियों की परत लगाई जाती है। इसके बाद इसमें 100–120 केंचुए छोड़े जाते हैं। लगभग एक माह बाद ऊपर एक छोटे छिद्रयुक्त मटके से पानी धीरे-धीरे रिसता रहता है। केंचुओं द्वारा बनाए गए सूक्ष्म छिद्रों से गुजरते समय पानी में उनके शरीर से निकलने वाले कोलाइडल पदार्थ, पोषक तत्व एवं वृद्धि हार्मोन मिल जाते हैं। यह तरल नीचे लगी टोंटी से एकत्र किया जाता है, जिसे वर्मीवाश कहते हैं। वर्मीवाश पौधों की वृद्धि बढ़ाने के साथ-साथ कीट नियंत्रण में भी सहायक होता है।

मत्स्य क्षेत्र में केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) का महत्व

केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) मत्स्य पालन में एक महत्वपूर्ण जैविक खाद के रूप में उपयोग की जाती है। यह तालाब की उर्वरता बढ़ाकर प्राकृतिक भोजन उत्पादन में सहायक होती है। वर्मीकम्पोस्ट में नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश जैसे आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, जो तालाब में फाइटोप्लैंकटन एवं जूप्लैंकटन की वृद्धि को बढ़ावा देते हैं। ये सूक्ष्म जीव मछलियों के प्राकृतिक भोजन के रूप में कार्य करते हैं, जिससे मछलियों की वृद्धि दर एवं उत्पादन में वृद्धि होती है। वर्मीकम्पोस्ट रासायनिक उर्वरकों का पर्यावरण-अन

मत्स्य एवं कृषि किसानों के लिए केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) के लाभ

केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) कृषि एवं मत्स्य पालन दोनों क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयोगी एवं लाभकारी जैविक खाद है। यह कम लागत में तैयार होने वाली पर्यावरण-अनुकूल तकनीक है, जो मिट्टी तथा जल की गुणवत्ता में सुधार करती है। कृषि में वर्मीकम्पोस्ट पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान कर मिट्टी की उर्वरता, पौधों की वृद्धि एवं फसल उत्पादन को बढ़ाता है तथा रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करता है। वहीं मत्स्य पालन में इसका उपयोग तालाब की उर्वरता बढ़ाने एवं फाइटोप्लैंकटन तथा जूप्लैंकटन जैसे प्राकृतिक भोजन की वृद्धि के लिए किया जाता है, जिससे मछलियों की वृद्धि एवं उत्पादन में सुधार होता है। यह तालाब के पर्यावरण को संतुलित रखने और जल की गुणवत्ता बनाए रखने में भी सहायक है। वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन के माध्यम से किसान जैविक कचरे का उपयोग कर अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं तथा टिकाऊ, जैविक एवं एकीकृत कृषि-मत्स्य पालन प्रणाली को बढ़ावा दे सकते हैं।

केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) एक लागत प्रभावी एवं पर्यावरण-अनुकूल अपशिष्ट प्रबंधन तकनीक है, जिसमें केंचुओं एवं लाभकारी सूक्ष्मजीवों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पारंपरिक खाद की तुलना में वर्मीकम्पोस्ट के अनेक लाभ हैं, क्योंकि यह उत्कृष्ट जैवउर्वरक के रूप में कार्य करता है तथा मिट्टी के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में सुधार लाता है। इसके उपयोग से मिट्टी की उर्वरता, जलधारण क्षमता एवं सूक्ष्मजीव विविधता में वृद्धि होती है। वर्मीकम्पोस्ट लाभकारी जीवाणुओं एवं पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाता है, जो पौधों को रोगों, कीटों एवं सूत्रकृमियों से सुरक्षा प्रदान करने में सहायक होते हैं। यद्यपि कुछ हानिकारक सूक्ष्मजीवों के प्रसार की संभावना बताई गई है, फिर भी वर्मीकम्पोस्ट में उपस्थित रोग-दमनकारी एवं वृद्धि-वर्धक सूक्ष्मजीव इनके दुष्प्रभावों को काफी हद तक नियंत्रित कर देते हैं। उत्कृष्ट बफरिंग क्षमता एवं पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों से भरपूर वर्मीकम्पोस्ट मृदा सुधार, पौधों की वृद्धि, टिकाऊ कृषि तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए अत्यंत प्रभावी जैविक साधन माना जाता है। इसके साथ ही, वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग कृषि एवं मत्स्य पालन दोनों क्षेत्रों में उत्पादन वृद्धि, लागत में कमी तथा सतत् विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

ग्रामीण मात्स्यिकी विकास एवं सामुदायिक सशक्तिकरण में अंतरराष्ट्रीय संगठनए राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय योजनाओं की भूमिका

अनिल सिंह, शशांक सिंह, दिनेश कुमार, देवर्षि रंजन, सी. पी. सिंह, सुमन डे एवं आर्या सिंह

मात्स्यिकी महाविद्यालय, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

गत कुछ दशकों से, मत्स्यिकी एवं जलीय कृषि विश्व में खाद्य उत्पादन क्षेत्रों में सर्वोच्च स्थान पर हैं। जो वैश्विक खाद्य सुरक्षा, पोषण, स्वास्थ्य, गरीबी उन्मूलन एवं सामाजिक-आर्थिक सुदृढ़ीकरण, सौंदर्य प्रसाधन एवं जैव-उत्पाद विकास, सौंदर्यात्मक एवं मनोरंजनात्मक उपयोग, जल संसाधनों के सतत् उपयोग एवं संरक्षण, भू-जल पुनर्भरण, पर्यावरणीय संसाधन वहनीयता, रोजगार और आजीविका संवर्धन में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता हैं। प्रोटीन-समृद्ध एवं स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग के परिप्रेक्ष्य, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध जलीय संसाधनो का विकास और आजीविका सृजन की अपार संभावनाएँ हैं। जलीय कृषि को उपरोक्त वैश्विक महत्वपूर्ण योगदान के कारण व्यापक रूप से मान्यता प्राप्त हो रही है। अपार संभावनाओं के बावजूद, तीव्र गति से बढ़ती शहरीकरण एवं वैश्विक जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु इन संसाधनों का पूर्ण एवं प्रभावी उपयोग शेष है। जलीय खाद्य प्रणालियाँ अपनी विशाल जैव-विविधता, पारिस्थितिक महत्व तथा आवश्यक पारितंत्र सेवाएँ प्रदान करने की क्षमता के कारण खाद्य उपलब्धता में वृद्धि, पोषण स्तर में सुधार तथा मानव स्वास्थ्य संवर्धन के लिए एक सतत् एवं दक्ष माध्यम प्रस्तुत कर रही हैं।

हालाँकि न केवल वर्तमान खाद्य सुरक्षा चुनौतियों के समाधान में सहायक हैं, बल्कि भावी पीढ़ियों की आजीविका सुनिश्चित करने की दृष्टि से भी अत्यंत आशाजनक हैं। इनके अधिकतम उपयोग एवं सतत् विकास में सुदृढ़ योगदान सुनिश्चित करने हेतु नवाचार तथा जलीय संसाधनों के उत्तरदायी प्रबंधन पर आधारित रूपांतरणात्मक दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। जबकि, यह क्षेत्र जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाएँ, जल-संकट, प्रदूषण, जैव-विविधता क्षरण तथा अन्य मानव-जनित कारको जैसी गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है। वैश्विक स्तर पर मत्स्यिकी एवं जलीय कृषि उत्पादन ने वर्ष 2022 में अभूतपूर्व ऊँचाई प्राप्त की, जो खाद्य सुरक्षा एवं आजीविका में इनके बढ़ते महत्व को दर्शाता है। कुल उत्पादन 223.2 मिलियन टन तक पहुँचा, जिसमें 185.4 मिलियन टन जलीय जीव तथा 37.8 मिलियन टन शैवाल सम्मिलित थे। यह आँकड़े क्षेत्र की सुदृढ़ता एवं संभावनाओं को रेखांकित करते हैं, विशेषकर उस संदर्भ में जब जलीय कृषि वैश्विक खाद्य की पूर्ति हेतु निरंतर विस्तार कर रही है।

आगामी वर्ष में जलीय कृषि की वृद्धि को सतत्, समानता एवं समावेशन के सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए, ताकि इसके लाभ उन क्षेत्रों एवं समुदायों तक पहुँच सकें जो सर्वाधिक आवश्यकता रखते हैं। वर्ष 2022 में प्राथमिक मत्स्यिकी एवं जलीय कृषि क्षेत्र में लगभग 61.8 मिलियन लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ। उल्लेखनीय है कि 2020-22 के दौरान, COVID-19 महामारी से उत्पन्न व्यवधानों के बावजूद, वैश्विक जलीय कृषि उत्पादन में निरंतर वृद्धि देखी गई। खाद्य एवं कृषि संगठन (ए.फए.ओ.) के मत्स्यिकी एवं जलीय कृषि परिदृश्य के अनुसार, वर्ष 2032 तक वैश्विक जलीय खाद्य उत्पादन, उपभोग एवं व्यापार में निरंतर वृद्धि होने की संभावना है, यद्यपि यह वृद्धि पूर्ववर्ती दशकों के अपेक्षाकृत रहेगी। अनुमान है कि 2032 तक जलीय जीवों का कुल वैश्विक उत्पादन 205 मिलियन टन तक पहुँच जाएगा। प्रति व्यक्ति जलीय खाद्य उपभोग में लगभग 10 प्रतिशत की वृद्धि का अनुमान है, जो 2032 तक औसतन 21.3 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष तक पहुँच सकता है। यह वृद्धि मुख्यतः आय स्तर में वृद्धि, शहरीकरण, फसलोत्तर प्रबंधन में सुधार तथा स्वास्थ्यवर्धक एवं प्रोटीन-समृद्ध आहार की ओर परिवर्तित होती खाद्य आदतों के कारण होगी। भारत विविधता एवं समृद्ध जलीय संसाधनों से परिपूर्ण एक देश है, इसमें एफ.ए.ओ. विश्व बैंक, एडीबी, वर्ल्डफिश, एनएसीए, यूएनडीपी और आईएफएडी जैसे अंतरराष्ट्रीय संगठनों के बहुमुखी योगदान के साथ-साथ पीएमएमएसवाई, नीली क्रांति, एनएफडीबी कार्यक्रम, एमजीएनआरईजीए, केसीसी, पीएम-

एमकेएसएसवाई और एफआईडीएफ सहित राष्ट्रीय पहलों का महत्वपूर्ण योगदान है, जिनका सामूहिक उद्देश्य भारत के मत्स्य पालन क्षेत्र को बढ़ावा देना है। मुख्यमंत्री मत्स्य संपदा योजना, निषाद राज बोट योजना और मत्स्य पालक कल्याण कोष जैसी राज्य-स्तरीय योजनाएं जमीनी स्तर पर मत्स्य पालन विकास और कल्याण को और मजबूत कर रही हैं। इतनी तरक्की के बावजूद, ग्रामीण मत्स्य पलको को आधारभूत संरचना, वित्तीय संसाधनों, बाजार अभिगम, पर्यावरण की खराब स्थिति और सीमित तकनीकी क्षमता से जुड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

उपरोक्त सभी योजनाए इन बाधाओं के समाधान हेतु समन्वित नीतिगत समर्थन, सुदृढ़ संस्थागत सहयोग, व्यवस्थित कौशल विकास तथा सक्रिय सामुदायिक सहभागिता की अनिवार्यता पर इनका विशेष बल है। समेकित एवं बहु-आयामी दृष्टिकोण अपनाकर ही ग्रामीण मत्स्यिकी क्षेत्र की संरचनात्मक एवं कार्यात्मक चुनौतियों का प्रभावी निराकरण संभव है। समग्रतः मत्स्य पालन एवं जलीय कृषि का विकास यदि समावेशी, सहभागी तथा सतत् सिद्धांतों के अनुरूप क्रियान्वित किया जाए, तो यह न केवल आजीविका संवर्धन और आय वृद्धि में सहायक सिद्ध होगा, बल्कि ग्रामीण समुदायों के सामाजिक-आर्थिक सुदृढ़ीकरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। साथ ही, यह खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के व्यापक राष्ट्रीय एवं वैश्विक लक्ष्यों की प्राप्ति में प्रभावी योगदान प्रदान करता है। अतः आवश्यक है कि ग्रामीण मत्स्यिकी विकास को प्रोत्साहित किया जाए तथा वंचित क्षेत्रों के सुदृढ़ीकरण हेतु नवोन्मेषी सरकारी कार्यक्रमों एवं योजनाओं के माध्यम से लक्षित हस्तक्षेप किए जाएँ, जिससे सतत् आजीविका, पोषण सुरक्षा तथा ग्रामीण समृद्धि सुनिश्चित की जा सके।

ग्रामीण मत्स्य पालन विकास का महत्व

ग्रामीण मत्स्य पालन विकास, ग्रामीण समुदायों के सामाजिक-आर्थिक ढाँचे को सुदृढ़ करने तथा जल संसाधनों के सतत् उपयोग को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह क्षेत्र लाखों लोगों, विशेषकर लघु एवं सीमांत कृषकों, भूमिहीन परिवारों तथा जल-आधारित आजीविका पर निर्भर समुदायों के लिए रोजगार एवं आय सृजन के व्यापक अवसर प्रदान करता है, जिससे उनकी आजीविका में सुधार तथा गरीबी उन्मूलन को बढ़ावा मिलता है। मत्स्य पालन पोषण सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण आधार है, क्योंकि यह उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन, आवश्यक अमीनो अम्ल एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित करता है, विशेषकर ग्रामीण एवं वंचित क्षेत्रों में। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण मत्स्य पालन का विस्तार अनुपयोगी या अल्प-उपयोगित तालाबों, टैंकों, जलाशयों एवं अन्य जल निकायों के उत्पादक उपयोग को प्रोत्साहित करता है, जिससे ये संसाधन आर्थिक दृष्टि से लाभकारी परिसंपत्तियों में परिवर्तित हो जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में मत्स्य उत्पादन में वृद्धि से न केवल उत्पादकता में सुधार होता है, बल्कि निर्यात संवर्धन के माध्यम से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को भी सुदृढ़ आधार प्राप्त होता है। ग्रामीण मत्स्य पालन विकास महिलाओं की भागीदारी को प्रोत्साहित कर लैंगिक सशक्तिकरण एवं समावेशी विकास को बढ़ावा देता है। स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन से ग्रामीण-शहरी पलायन में कमी आती है तथा ग्रामीण विकास की स्थिरता सुदृढ़ होती है। साथ ही, सामुदायिक स्तर पर संसाधन प्रबंधन, सामूहिक सहभागिता एवं आत्मनिर्भरता की भावना को प्रोत्साहन मिलता है। मत्स्य पालकों एवं कृषकों को आधुनिक तकनीकी ज्ञान, उन्नत प्रबंधन पद्धतियों तथा बाजार तक पहुँच उपलब्ध कराने से उत्पादकता, लाभप्रदता एवं दीर्घकालिक सतत् ता में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त, एकीकृत जलीय कृषि प्रणाली तथा जल संसाधन प्रबंधन जैसे उत्तरदायी दृष्टिकोण पर्यावरण संरक्षण, जैव-विविधता संरक्षण एवं पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में सहायक सिद्ध होते हैं। समग्रतः ग्रामीण मत्स्य पालन एवं सामुदायिक विकास का समन्वित मॉडल जीवन स्तर में सुधार तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था की सुदृढ़ता सुनिश्चित करने की दिशा में एक प्रभावी माध्यम है।

नवीन कार्यक्रम द्वारा ग्रामीण मत्स्यिकी एवं सामुदायिक विकास

ग्रामीण मत्स्यिकी एवं सामुदायिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिए अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर अनेक कार्यक्रम संचालित की जा रही हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न संस्थाएँ और संगठन मत्स्य संसाधनों के सतत् उपयोग, जल कृषि के विकास, तकनीकी सहयोग, प्रशिक्षण तथा ग्रामीण आजीविका सुदृढ़ीकरण के लिए कार्य कर रहे हैं। राष्ट्रीय स्तर पर सरकार द्वारा मत्स्य उत्पादन बढ़ाने,

अंतरराष्ट्रीय योजनाएँ

क्र.सं.	संगठन / कार्यक्रम	स्थापना वर्ष / मुख्यालय	प्रमुख उद्देश्य	ग्रामीण मत्स्य एवं जलीय कृषि में योगदान
1	खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ)	1945, रोम (इटली)	भूख का उन्मूलन, पोषण स्तर में सुधार, वैश्विक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना	मत्स्य समिति कार्यक्रम, उत्तरदायी मत्स्य आचार संहिता, सतत् मत्स्य प्रबंधन, जलवायु अनुकूलन, आजीविका एवं पोषण सुरक्षा को बढ़ावा
2	विश्व बैंक	1944, वॉशिंगटन डी.सी.	सतत् आर्थिक विकास एवं गरीबी उन्मूलन	नीली अर्थव्यवस्था कार्यक्रम, बहुदाता न्यास कोष, वैश्विक मत्स्य कार्यक्रमय क्षेत्रीय मत्स्य परियोजनाएँ; सुशासन सुधार
3	संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम	1965, न्यूयॉर्क	गरीबी उन्मूलन, असमानता में कमी, सतत् विकास को प्रोत्साहन	स्थानीय क्षमता निर्माण, संस्थागत सुदृढ़ीकरण, समावेशी विकास, ग्रामीण एवं मत्स्य समुदायों का सशक्तिकरण
4	अंतरराष्ट्रीय कृषि विकास कोष	1977, रोम (इटली)	ग्रामीण गरीबी एवं भूख का उन्मूलन	कम ब्याज दर पर ऋण एवं अनुदानय कृषि उत्पादकता में वृद्धि, जल एवं भूमि प्रबंधन सुधार, जलवायु लचीलापन, महिला एवं युवा सशक्तिकरण
5	मत्स्य कर्मियों के समर्थन हेतु अंतरराष्ट्रीय सामूहिक संगठन	1986, अंतरराष्ट्रीय गैर-सरकारी संगठन	लघु एवं पारंपरिक मत्स्यकर्मियों के अधिकारों का संरक्षण	नीतिगत मार्गदर्शन, संसाधनों तक पहुँच सुनिश्चित करना, लैंगिक समानता को बढ़ावा, सामुदायिक-आधारित मत्स्य प्रबंधन, सामाजिक न्याय की स्थापना
6	एशिया-प्रशांत क्षेत्र के जलीय कृषि केंद्रों का नेटवर्क	1988, एशिया-प्रशांत क्षेत्र	क्षेत्रीय सहयोग एवं सतत् जलीय कृषि विकास	तकनीकी क्षमता निर्माण, उत्पादकता वृद्धि, ज्ञान आदान-प्रदान, ग्रामीण आजीविका संवर्धन
7	वर्ल्डफिश (विश्व मत्स्य केंद्र)	पेनांग (मलेशिया)	जलीय खाद्य प्रणालियों का रूपांतरण एवं भूख-गरीबी में कमी	उन्नत तिलापिया प्रजाति (गिफ्ट) का विकास, अनुसंधान एवं नवाचार, लघुधारक किसानों की आय एवं पोषण सुरक्षा में वृद्धि
8	बंगाल की खाड़ी कार्यक्रम	2003, क्षेत्रीय स्वतंत्र निकाय	बंगाल की खाड़ी क्षेत्र में लघु मत्स्य विकास एवं उत्तरदायी प्रबंधन	क्षमता निर्माण, नीतिगत सहयोग, समुद्री सुरक्षा, फसलोत्तर तकनीकी सुधार, जलवायु अनुकूलन, क्षेत्रीय समन्वय एवं सुशासन सुदृढ़ीकरण

आधुनिक तकनीकों को बढ़ावा देने, मछुआरों के सामाजिक-आर्थिक उत्थान तथा अवसंरचना विकास के उद्देश्य से अनेक योजनाएँ और कार्यक्रम लागू किए गए हैं। इसी प्रकार राज्य स्तर पर भी स्थानीय परिस्थितियों और संसाधनों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न विकास कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं, जिनके माध्यम से मत्स्य पालन को बढ़ावा देने, रोजगार सृजन करने तथा ग्रामीण समुदायों की आय और जीवन स्तर में सुधार लाने का प्रयास किया जाता है। इन कार्यक्रमों के समन्वित क्रियान्वयन से ग्रामीण मत्स्यिकी क्षेत्र के सतत् विकास तथा सामुदायिक सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण योगदान प्राप्त होता है।

मत्स्य क्षेत्र के विकास में प्रमुख भारतीय संस्थाओं की भूमिका

भारत में मत्स्य क्षेत्र के विकास, अनुसंधान, प्रशिक्षण तथा प्रबंधन के लिए अनेक राष्ट्रीय स्तर की संस्थाएँ कार्यरत हैं, जो विभिन्न क्षेत्रों में अपनी विशिष्ट विशेषज्ञता के माध्यम से मत्स्य संसाधनों के सतत् उपयोग और विकास में महत्वपूर्ण

राष्ट्रीय योजनाएँ

क्र.सं.	योजना / कार्यक्रम	प्रारम्भ वर्ष / मंत्रालय	मुख्य उद्देश्य	प्रमुख घटक	ग्रामीण मत्स्य एवं सामुदायिक विकास में योगदान
1	प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना	2020; मत्स्य पालन विभाग, भारत सरकार	नीली क्रांति के माध्यम से सतत् एवं उत्तरदायी मत्स्य विकास	₹20,050 करोड़ निवेशय केंद्रीय क्षेत्र एवं केंद्र प्रायोजित घटक; अवसंरचना, मूल्य संवर्धन, क्षमता निर्माण	उत्पादन वृद्धि, संसाधन उत्पादकता, बाजार संपर्क, 2.8 करोड़ से अधिक मत्स्यकर्मियों को लाभ, ग्रामीण आजीविका सुरक्षा
2	प्रधानमंत्री मत्स्य किसान समृद्धि-सह-योजना	2024; PMMSY की उप-योजना	क्षेत्र का औपचारिककरण, डिजिटलीकरण एवं संस्थागत सुदृढ़ीकरण	राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफॉर्म; बीमा सहायता; कार्यशील पूंजीय प्रदर्शन आधारित अनुदान	पारदर्शिता, वित्तीय समावेशन, जोखिम न्यूनीकरण, मूल्य श्रृंखला सुदृढ़ीकरण, रोजगार सृजन
3	मत्स्य एवं जलीय कृषि अवसंरचना विकास निधि	भारत सरकार; राष्ट्रीय स्तर	मत्स्य अवसंरचना का विकास एवं आधुनिकीकरण	रियायती वित्तय नाबार्ड एवं राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम के माध्यम से ऋण; क्रेडिट गारंटी समर्थन	हैचरी, कोल्ड स्टोरेज, लैंडिंग सेंटर विकास; ग्रामीण निवेश एवं उत्पादन वृद्धि
4	राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड	2006, मुख्यालय/ हैदराबाद	मत्स्य क्षेत्र की तीव्र एवं सतत् वृद्धि	गहन जलीय कृषि, समुद्री कृषि, शैवाल उत्पादन, सजावटी मत्स्य, ट्राउट पालन; बायोफ्लॉक, RAS, IMTA	उत्पादकता वृद्धि, वैज्ञानिक प्रबंधन, तकनीकी उन्नयन, महिला एवं ग्रामीण रोजगार संवर्धन
5	नीली क्रांति मिशन	सप्तम पंचवर्षीय योजना	समेकित मत्स्य विकास एवं उत्पादन वृद्धि	समुद्री, तटीय एवं अंतर्देशीय मत्स्य एकीकरणय आधुनिक तकनीकय जैव-सुरक्षा	मत्स्य उत्पादन वृद्धि, आय संवर्धन, पारिस्थितिक संतुलन, ग्रामीण समृद्धि
6	किसान क्रेडिट कार्ड	आरबीआई दिशा-निर्देश अनुसार	कार्यशील पूंजी एवं अल्पकालिक ऋण सुविधा	ब्याज अनुदान; शीघ्र पुनर्भुगतान प्रोत्साहन	सुलभ ऋण, वित्तीय लचीलापन, लघु एवं सीमांत मत्स्यपालकों को संस्थागत सहायता
7	महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम	2005; भारत सरकार	ग्रामीण रोजगार एवं आजीविका सुरक्षा	तालाब निर्माण पुनर्निर्माण; मत्स्य भंडारण सुविधा	ग्रामीण रोजगार सृजन, टिकाऊ परिसंपत्ति निर्माण, जलीय कृषि संवर्धन

भूमिका निभाती हैं। मत्स्य विभाग, देश में मत्स्य क्षेत्र से संबंधित नीतियों और योजनाओं का निर्माण, विभिन्न कार्यक्रमों का समन्वय तथा उनके क्रियान्वयन का कार्य करता है। राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड का मुख्य उद्देश्य मत्स्य उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करना, अवसंरचना का विकास तथा जलीय कृषि और ग्रामीण मत्स्य विकास को प्रोत्साहित करना है। भारतीय मत्स्य सर्वेक्षण भारत के विशेष आर्थिक क्षेत्र में समुद्री मत्स्य संसाधनों का सर्वेक्षण, आकलन और मानचित्रण करता है। इसी प्रकार सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ फिशरीज नॉटिकल एंड इंजीनियरिंग ट्रेनिंग मछली पकड़ने से संबंधित तकनीकी एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करता है, जिसमें स्किपर, इंजीनियर, नौका चालक तथा अन्य तकनीकी कर्मियों को प्रशिक्षित किया जाता है। तटीय जलकृषि प्राधिकरण तटीय जलीय कृषि गतिविधियों के विनियमन और निगरानी

राज्य स्तरीय योजनाएँ

क्र. सं.	योजना/संस्था	प्रमुख उद्देश्य	मुख्य प्रावधान/कार्य	लक्षित लाभार्थी	प्रमुख प्रभाव
1	मत्स्य विभाग	सतत् एवं वैज्ञानिक मत्स्य पालन को प्रोत्साहन देना, उत्पादन में वृद्धि करना तथा मछुआरा समुदाय के सामाजिक-आर्थिक स्तर को सुदृढ़ करना	नीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन, हैचरी, तालाब, शीतगृह, मत्स्य बाजार की स्थापना, प्रशिक्षण एवं विस्तार सेवाएँ, संस्थागत ऋण सहायता	मत्स्य पालक, मछुआरे एवं ग्रामीण समुदाय	ग्रामीण आजीविका सुदृढ़ीकरण, खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, महिला सशक्तिकरण, जल संसाधनों का सतत् प्रबंधन
2	मुख्यमंत्री मत्स्य संपदा योजना	किसानों की उत्पादकता में वृद्धि तथा जल संसाधनों का समुचित एवं सतत् उपयोग सुनिश्चित करना	ग्राम सभा के पट्टे वाले तालाबों पर राज्य स्तर पर परियोजनाओं की स्वीकृति, वित्तीय अनुदान एवं तकनीकी सहयोग	ग्रामीण मत्स्य पालक एवं किसान	उत्पादन वृद्धि, आय में सुधार एवं सामुदायिक विकास को बढ़ावा
3	प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना	राष्ट्रीय स्तर पर मत्स्य क्षेत्र का समग्र एवं संरचित विकास	आधारभूत संरचना का विकास, मत्स्य उत्पादन एवं उत्पादकता वृद्धि, प्रसंस्करण एवं निर्यात प्रोत्साहन	देश के सभी मत्स्य पालक एवं उद्यमी	मत्स्य क्षेत्र का आधुनिकीकरण एवं प्रतिस्पर्धात्मकता में वृद्धि
4	मत्स्य पालक कल्याण कोष	मछुआरा एवं मत्स्य पालक समुदाय का सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान	प्राकृतिक आपदा मुआवजा, चिकित्सा सहायता, आवास योजना, शिक्षा सहायता, उपकरण वितरण, विद्युत सब्सिडी, ऋण पर ब्याज अनुदान, महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम	पारंपरिक मछुआरा एवं मत्स्य पालक समुदाय	सामाजिक सुरक्षा, आर्थिक स्थिरता एवं जीवन स्तर में सुधार
5	निशादराज नौका अनुदान योजना	रोजगार सृजन, आय वृद्धि एवं सतत् मत्स्य पालन को प्रोत्साहन	नौका, मत्स्य जाल, लाइफ जैकेट, आइस बॉक्स आदि की खरीद पर अनुदान	पारंपरिक मछुआरे	आधारभूत संसाधनों की उपलब्धता, आय में वृद्धि एवं सतत् मत्स्य प्रबंधन

का कार्य करता है तथा पर्यावरण संरक्षण, मानकों के अनुपालन और सतत् तटीय प्रबंधन को सुनिश्चित करता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद देश में कृषि एवं मत्स्य अनुसंधान और उच्च शिक्षा की राष्ट्रीय प्रणाली का समन्वय और मार्गदर्शन करती है। अनुसंधान के क्षेत्र में सेंट्रल मरीन फिशरीज रिसर्च इंस्टीट्यूट समुद्री मत्स्य संसाधनों और समुद्री पारितंत्र के प्रबंधन पर कार्य करता है, जबकि सेंट्रल इनलैंड फिशरीज रिसर्च इंस्टीट्यूट नदियों, झीलों और जलाशयों जैसे अंतर्देशीय जल स्रोतों में मत्स्य संसाधनों के अध्ययन और विकास से संबंधित अनुसंधान करता है। सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ फिशरीज टेक्नोलॉजी मत्स्य उत्पादों के पूर्व एवं पश्चात् फसल प्रौद्योगिकी, प्रसंस्करण, संरक्षण और मूल्य संवर्धन के क्षेत्र में तकनीक विकसित करता है। मीठे पानी की जलीय कृषि के विकास के लिए सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ फ्रेशवाटर एक्वाकल्चर प्रजनन, बीज उत्पादन और उत्पादन तकनीकों पर अनुसंधान करता है, जबकि सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ ब्रैकिशवाटर एक्वाकल्चर खारे और अर्ध-खारे पानी की जलीय कृषि प्रणालियों के विकास पर कार्य करता है। नेशनल ब्यूरो ऑफ फिश जेनेटिक रिसोर्सेज मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण, जैव विविधता प्रबंधन और जर्मप्लाज्म के संरक्षण का कार्य करता है। पर्वतीय और ठंडे जल क्षेत्रों के मत्स्य विकास के लिए सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ कोल्डवाटर फिशरीज रिसर्च शीत जल मत्स्य संसाधनों पर अनुसंधान करता है। इसके अतिरिक्त सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ फिशरीज

एजुकेशन मत्स्य विज्ञान के क्षेत्र में उच्च शिक्षा, अनुसंधान और मानव संसाधन विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

ग्रामीण मत्स्य पालन एवं सामुदायिक विकास की चुनौतियाँ

ग्रामीण मत्स्य पालन और सामुदायिक विकास अनेक चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, जो इनके सतत् विकास तथा ग्रामीण आजीविका में योगदान को सीमित करती हैं। प्रमुख बाधाओं में ग्रामीण मछुआरों और मत्स्य पालकों के बीच जागरूकता एवं तकनीकी ज्ञान की कमी शामिल है, जिसके कारण आधुनिक जलीय कृषि पद्धतियों और वैज्ञानिक प्रबंधन तकनीकों को अपनाने में कठिनाई होती है। हैचरी, फीड मिल, शीतगृह, भंडारण एवं विपणन सुविधाओं जैसी आधारभूत संरचना का अभाव उत्पादकता और लाभप्रदता को प्रभावित करता है। विशेष रूप से लघु एवं सीमांत मछुआरों के लिए संस्थागत ऋण एवं वित्तीय सहायता तक सीमित पहुँच एक निरंतर समस्या बनी हुई है। कमजोर विस्तार सेवाएँ और अपर्याप्त प्रशिक्षण नई तकनीकों एवं श्रेष्ठ प्रथाओं के प्रसार को धीमा कर देते हैं, जबकि कमजोर बाजार संपर्क और बिचैलियों पर निर्भरता के कारण उत्पादकों को उचित मूल्य नहीं मिल पाता। पर्यावरणीय समस्या जैसे जल प्रदूषण, आवासीय क्षेत्र (हैबिटेट) का क्षरण, मौसमी जल संकट तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से मत्स्य स्वास्थ्य और उत्पादन के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं। सामाजिक-आर्थिक अवरोध, जैसे गरीबी, अशिक्षा और लैंगिक असमानता, वंचित वर्गों की भागीदारी को सीमित करते हैं। इसके अतिरिक्त, विभिन्न सरकारी विभागों के बीच समन्वय की कमी और नीतियों के कमजोर क्रियान्वयन से विकास प्रयासों की गति धीमी हो जाती है। संरक्षण एवं भंडारण सुविधाओं के अभाव में पोस्ट-हार्वेस्ट हानि अधिक होती है, जिससे आर्थिक बोझ बढ़ता है। योजना निर्माण एवं प्रबंधन में सामुदायिक भागीदारी का अभाव स्थानीय स्वामित्व और दीर्घकालिक स्थिरता को प्रभावित करता है। इन चुनौतियों के समाधान हेतु एक समग्र रणनीति की आवश्यकता है, जिसमें कौशल विकास, आधारभूत संरचना सुदृढ़ीकरण, वित्तीय सहायता, संस्थागत क्षमता निर्माण तथा सक्रिय सामुदायिक सहभागिता को शामिल किया जाए, ताकि ग्रामीण मत्स्य पालन का सतत् एवं समावेशी विकास सुनिश्चित हो सके।

ग्रामीण मत्स्य पालन और जलीय कृषि अनेक विकासशील देशों, विशेषकर भारत में, सतत् आजीविका विकास और खाद्य सुरक्षा की आधारशिला हैं। सामुदायिक आधारित पहलों के साथ इस क्षेत्र के एकीकरण ने न केवल उत्पादकता में वृद्धि की है, बल्कि वंचित वर्गों के सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण को भी प्रोत्साहित किया है। अंतरराष्ट्रीय संगठनों, राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय योजनाओं तथा संस्थागत ढाँचों के संयुक्त प्रयासों ने सतत् मत्स्य प्रबंधन की मजबूत नींव रखी है। फिर भी, अपर्याप्त आधारभूत संरचना, वित्तीय संसाधनों तक सीमित पहुँच, कमजोर विस्तार सेवाएँ तथा जलवायु परिवर्तन से संबंधित जोखिम विकास में बाधा उत्पन्न करते हैं। दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए भविष्य की रणनीतियों में तकनीकी नवाचार, जलवायु-सहिष्णु (क्लाइमेट-रेजिलिएंट) पद्धतियों का विकास, बाजार विविधीकरण तथा लघु एवं ग्रामीण मछुआरों को प्राथमिकता देने वाली समावेशी नीतियों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। अनुसंधान संस्थानों, सरकारी एजेंसियों और स्थानीय समुदायों के बीच मजबूत समन्वय और अनुकूलनशील प्रबंधन को बढ़ावा देना आवश्यक है। सहभागी शासन व्यवस्था, महिलाओं की बढ़ती भागीदारी और लाभों के न्याय संगत वितरण को सुनिश्चित कर ग्रामीण मत्स्य पालन को सतत् विकास को एक आदर्श मॉडल के रूप में विकसित किया जा सकता है। अंततः नवाचार, संस्थागत सहयोग और उत्तरदायी प्रबंधन के माध्यम से मत्स्य क्षेत्र का रूपांतरण न केवल ग्रामीण आजीविका को सुदृढ़ करेगा, बल्कि राष्ट्रीय समृद्धि और वैश्विक खाद्य सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण योगदान देगा।

मछलियों में *एडवर्डसिएला इक्टालुरी* संक्रमण: कारण, लक्षण एवं रोकथाम

चन्द्रभूषण कुमार, देवर्षि रंजन, तमाल सेठ, अमन राज, पी. के. प्रधान एवं नीरज सूद

भाकृअनुप - राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

एडवर्डसिएला इक्टालुरी एक ग्राम-निगेटिव, फैकल्टेटिव इंट्रासेल्युलर जीवाणु है, जो मुख्यतः कैटफिश प्रजातियों में एक गंभीर एवं आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रोग उत्पन्न करता है। इस जीवाणु द्वारा उत्पन्न रोग को कैटफिश में एंटेरिक सेप्टीसीमिया ऑफ कैटफिश (ESC) कहा जाता है, जबकि पंगास में इसे बैसिलरी नेक्रोसिस ऑफ पंगासियस (BNP) के नाम से जाना जाता है। इस जीवाणु की प्रथम पहचान वर्ष 1976 में संयुक्त राज्य अमेरिका में हुई थी, किंतु वर्तमान समय में इसका प्रसार एशिया, अमेरिका, अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया तथा यूरोप सहित विश्व के अनेक भागों में हो चुका है। हाल ही में भारत में भी इस रोग की उपस्थिति दर्ज की गई है, जहाँ राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा पंगास में इस संक्रमण की पुष्टि की गई है। वैश्विक स्तर पर मत्स्य पालन के तीव्र विस्तार, विशेषकर गहन एवं अर्ध-गहन प्रणालियों के विकास के साथ, यह रोग एक प्रमुख चुनौती के रूप में उभरकर सामने आया है।

भारत जैसे देश में, जहाँ अंतर्स्थलीय मत्स्य उत्पादन लगभग 13.91 मिलियन टन (2023-24) तक पहुँच चुका है और इसमें निरंतर वृद्धि हो रही है, वहाँ *एडवर्डसिएला इक्टालुरी* संक्रमण मत्स्य उद्योग के लिए एक संभावित गंभीर खतरा है। विशेष रूप से पंगास एवं अन्य कैटफिश प्रजातियों की बढ़ती खेती के कारण इस रोग का खतरा और अधिक बढ़ गया है। यह जीवाणु केवल कैटफिश तक सीमित नहीं है, बल्कि अब तक इसे 40 से अधिक मछली प्रजातियों में पाया जा चुका है, जिनमें तिलापिया, ज़ेब्राफिश तथा अन्य मीठे पानी की मछलियाँ शामिल हैं। अतः इसका व्यापक होस्ट रेंज और तीव्र प्रसार क्षमता इसे एक प्रमुख जलीय रोगजनक बनाती है। यह रोग विशेष रूप से 22–28°C तापमान पर अधिक प्रकोप करता है तथा तीव्र संक्रमण की अवस्था में अल्प समय (1–2 सप्ताह) में उच्च मृत्यु दर, जो सामान्यतः 37% तक तथा कुछ मामलों में 50–100% तक हो सकती है। इसके अतिरिक्त, यह जीवाणु जल एवं तलछट में लंबे समय तक जीवित रह सकता है तथा बायोफिल्म बनाकर पुनः संक्रमण का कारण बनता है। अपनी उच्च रोगजनकता, व्यापक प्रसार क्षमता और नियंत्रण से जुड़ी जटिलताओं के कारण, इसे जलीय कृषि के लिए एक प्रमुख और चुनौतीपूर्ण रोगजनक माना जाता है।

रोग का कारण

एडवर्डसिएला इक्टालुरी जीवाणु मछलियों के शरीर में मुख्यतः मुख, गलफड़े तथा नासिका मार्ग के माध्यम से प्रवेश करता है। शरीर में प्रवेश करने के बाद यह आंत्र उपकला को भेदकर रक्त परिसंचरण तंत्र में पहुँच जाता है और रक्त के माध्यम से यकृत, प्लीहा, गुर्दे एवं मस्तिष्क जैसे विभिन्न अंगों में फैलकर संक्रमण उत्पन्न करता है। यह जीवाणु मैक्रोफेज कोशिकाओं के भीतर प्रवेश कर जीवित रहने एवं वृद्धि करने की क्षमता रखता है, जिससे यह मछली की प्रतिरक्षा प्रणाली से बच निकलता है और संक्रमण को अधिक गंभीर बना देता है। इसके अतिरिक्त, यह अम्लीय वातावरण में भी जीवित रह सकता है तथा यूरिया के अपघटन द्वारा अपने आसपास के pH को नियंत्रित कर अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है। जल गुणवत्ता भी इस रोग के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उच्च तापमान, घुलित ऑक्सीजन की कमी, अमोनिया की अधिक मात्रा तथा खराब जल प्रबंधन की स्थिति में मछलियाँ तनावग्रस्त हो जाती हैं, जिससे उनकी प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है और संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है। अधिक स्टॉकिंग घनत्व एवं जैविक अपशिष्ट का संचय भी इस रोग के तीव्र प्रसार को बढ़ावा देता है। इन सभी कारकों के संयुक्त प्रभाव से यह जीवाणु तीव्र गति से फैलकर सेप्टीसीमिया उत्पन्न करता है और बहु-अंग संक्रमण का कारण बनता है।

रोग के लक्षण

- भूख में कमी तथा धीरे-धीरे वजन में गिरावट
- मछलियों का असामान्य व्यवहार, जैसे गोल-गोल तैरना, सिर ऊपर एवं पूंछ नीचे रखना
- सुस्ती, समूह से अलग रहना तथा सतह के पास तैरना
- त्वचा पर घाव एवं शरीर के विभिन्न भागों में लाल धब्बे
- पेट का फूलना एवं शरीर में द्रव संचय
- त्वचा, मांसपेशियों एवं आंतों में रक्तस्राव के लक्षण
- यकृत, गुर्दे एवं प्लीहा में सफेद नोड्यूल या नेक्रोटिक धब्बे
- आंतों में सूजन एवं संक्रमण
- मस्तिष्क में संक्रमण के कारण "सिर में छेद" जैसे लक्षण

सावधानियाँ

- जल गुणवत्ता का उचित प्रबंधन करें
- तालाब या टैंक की नियमित सफाई एवं अपशिष्ट पदार्थों को हटाएँ
- मछलियों की उचित स्टॉकिंग घनत्व बनाए रखें तथा अत्यधिक घनत्व से बचें
- संक्रमित या संदिग्ध मछलियों को तुरंत अलग करें
- नए बीज को पालन से पूर्व क्वारंटाइन में रखें
- संक्रमित पानी, उपकरण या जाल का पुनः उपयोग बिना कीटाणुशोधन के न करें
- फार्म में बाहरी संक्रमण स्रोतों (पक्षी, जानवर, दूषित जल) को नियंत्रित करें
- संतुलित एवं उच्च गुणवत्ता वाला आहार प्रदान करें
- नियमित रूप से मछलियों के स्वास्थ्य एवं व्यवहार का निरीक्षण करें

उपचार एवं नियंत्रण

एडवर्डसिएला इक्टालुरी संक्रमण के नियंत्रण हेतु बीमारी के समय मछलियों को सीमित मात्रा में आहार दें। पानी की गुणवत्ता की नियमित निगरानी करें और आवश्यकता अनुसार आंशिक जल परिवर्तन करें। दवा-मिश्रित आहार का उपयोग केवल जरूरत पड़ने पर करें, जिसमें रोमेट, फ्लोरफेनिकोल, एन्रोफ्लॉक्सासिन एवं डॉक्सीसाइक्लिन का प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन एंटीबायोटिक का उपयोग हमेशा मत्स्य विशेषज्ञ/पशु चिकित्सक की वैज्ञानिक सलाह के अनुसार ही करें। जल उपचार के लिए आयोडीन, पोटेशियम परमैंगनेट, चूना तथा नमक का सीमित मात्रा में प्रयोग कर जल की स्वच्छता बनाए रखें। बीमार या मृत मछलियों को तुरंत हटाकर सुरक्षित निस्तारण करें ताकि संक्रमण न फैले।



चित्र: पंगास में बैसिलरी नेक्रोसिस ऑफ पंगासियस रोग से यकृत गुर्दे एवं प्लीहा में सफेद नोड्यूल

साथ ही, अधिक घनत्व से बचें, गुणवत्तापूर्ण बीज का उपयोग करें और नियमित निगरानी व साफ-सफाई बनाए रखना ही रोग नियंत्रण का सबसे प्रभावी उपाय है।

एडवर्डसीएला इक्टालुरी का संदेह होने पर किसानों को तत्काल क्या कार्रवाई करनी चाहिए

किसान को तुरंत प्रभावित तालाबों या टैंकों को अलग करना चाहिए ताकि बीमारी के फैलाव को रोका जा सके। बिना देरी किए संबंधित ब्लॉक या जिले में मत्स्य पालन अधिकारी, जलीय पशु स्वास्थ्य विशेषज्ञ या मत्स्य रोग वैज्ञानिक को सूचित करना आवश्यक है। संदिग्ध बीमारी के मामले की रिपोर्टिंग 'रिपोर्ट फिश डिजीज' मोबाइल ऐप के माध्यम से भी करनी चाहिए। मृत्यपराय या रोगग्रस्त मछलियों के नमूनों को सावधानीपूर्वक संग्रहित किया जाना चाहिए और सटीक निदान के लिए एक मान्यता प्राप्त प्रयोगशाला में ले जाया जाना चाहिए। इस बीच, किसान को अमोनिया, नाइट्राइट, पीएच, घुलित ऑक्सीजन, और तापमान सहित जल गुणवत्ता पैरामीटर को सुधारने के कदम उठाने चाहिए। मछलियों के व्यवहार और स्वास्थ्य की स्थिति के अनुसार फ़ीडिंग कराया जाना चाहिए। किसी भी दवाई या रसायनों का उपयोग जलीय जन्तु स्वास्थ्य विशेषज्ञों की मार्गदर्शन के अनुसार किया जाना चाहिए।

एडवर्डसिएला इक्टालुरी एक अत्यंत घातक जीवाणु है, जो मछली पालन में भारी आर्थिक नुकसान का कारण बनता है। इसका नियंत्रण मुख्यतः बेहतर जल प्रबंधन, उचित स्टॉकिंग घनत्व, बायोसिक्योरिटी और प्रारंभिक पहचान पर निर्भर करता है। एंटीबायोटिक का उपयोग केवल विशेषज्ञ की सलाह से ही करना चाहिए। समुचित प्रबंधन और वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर इस रोग के प्रभाव को काफी हद तक कम किया जा सकता है, जबकि भविष्य में वैक्सीनेशन एवं उन्नत तकनीकें इसके स्थायी नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

'हिंदी का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है':

महात्मा गांधी

राजभाषा हिंदी - प्रशासन से जनता तक का सेतु।

मत्स्य संबन्धित जूनोटिक रोग: निदान एवं नियंत्रण

देवर्षि रंजन[1], चन्द्रभूषण कुमार[1], अमन राज[1], राजू बैठा[2], पी. के. प्रधान[1] एवं नीरज सूद[1]

[1]भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

[2]भाकृअनुप-केंद्रीय समुद्री मत्स्य अनुसंधान संस्थान, विशाखापत्तनम क्षेत्रीय केंद्र

जूनोटिक रोग वे संक्रामक रोग हैं जो पशुओं से मनुष्यों में तथा कभी-कभी मनुष्यों से पशुओं में संचरित होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, इंसानों में पाए जाने वाले लगभग 60% संक्रामक रोग तथा लगभग 75% उभरते संक्रामक रोग पशु स्रोत से संबंधित हैं। यह तथ्य मानव, पशु और पर्यावरण के बीच घनिष्ठ संबंध को दर्शाता है तथा "वन हेल्थ" दृष्टिकोण की आवश्यकता को स्पष्ट करता है, जिसमें तीनों घटकों को एकीकृत रूप से समझा जाता है। मत्स्य पालन वर्तमान में विश्व का तीव्र गति से विकसित होने वाला खाद्य उत्पादन क्षेत्र है। खाद्य एवं कृषि संगठन (2024) के अनुसार, वर्ष 2022 में वैश्विक मात्स्यिकी एवं मत्स्य पालन से उत्पादन लगभग 223.2 मिलियन टन रहा, जिसमें 130.9 मिलियन टन उत्पादन मत्स्य पालन से प्राप्त हुआ। प्रति व्यक्ति वार्षिक मछली उपभोग 20 किलोग्राम से अधिक हो चुका है। भारत में वर्ष 2023 के दौरान कुल मत्स्य उत्पादन लगभग 17.54 मिलियन टन रहा, जिसमें 75% से अधिक योगदान अंतर्स्थलीय मत्स्य पालन का है। यह क्षेत्र लगभग 2.8 करोड़ लोगों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार प्रदान करता है। मत्स्य क्षेत्र के विस्तार, उच्च स्टॉकिंग घनत्व, जलीय प्रदूषण, एंटीबायोटिक के अनियंत्रित उपयोग, जलवायु परिवर्तन तथा वैश्विक व्यापार के कारण जलीय जीवों में रोगजनकों का प्रसार बढ़ रहा है। मनुष्यों में संक्रमण के प्रमुख मार्गों में कच्ची या अधपकी मछलियों का सेवन, दूषित जल का प्रयोग, तथा खुले घावों या त्वचा संपर्क के माध्यम से रोगजनकों का प्रवेश शामिल है। अध्ययनों के अनुसार, लगभग 46% मछली-जनित जूनोटिक रोग मौखिक मार्ग से, जबकि शेष मामले जल या त्वचा संपर्क के माध्यम से संचरित होते हैं। यद्यपि मछलियों से संबंधित जूनोटिक रोगों की रिपोर्टेड संख्या अन्य पशु-जनित रोगों की तुलना बहुत कम है, परंतु अपर्याप्त निगरानी एवं जागरूकता के कारण वास्तविक स्थिति कम आँकी जा सकती है। जलीय जीवों में पाई जाने वाली अनेक बीमारियाँ उभरते रोगों की श्रेणी में आती हैं, जिनकी जूनोटिक क्षमता के बारे में जानकारी सीमित है। अतः रोग की उत्पत्ति, प्रसार, प्रचलन, नैदानिक लक्षण, जोखिम कारक एवं मानव संपर्क स्रोतों का वैज्ञानिक मूल्यांकन आवश्यक है। अतः मछली-जनित जीवाणु, विषाणु, परजीवी एवं कवकीय रोग केवल पशु स्वास्थ्य का विषय नहीं हैं, बल्कि वे खाद्य सुरक्षा, पोषण सुरक्षा, निर्यात गुणवत्ता और सार्वजनिक स्वास्थ्य से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं। प्रभावी निगरानी, जोखिम मूल्यांकन एवं "वन हेल्थ" आधारित समन्वित रणनीति के माध्यम से इन रोगों की रोकथाम एवं नियंत्रण सुनिश्चित किया जा सकता है।

जूनोटिक रोगों का वर्गीकरण

मछलियों से संबंधित जूनोटिक रोग विभिन्न प्रकार के रोगजनकों तथा जैविक विषाक्त पदार्थों के कारण उत्पन्न होते हैं। इनका वर्गीकरण रोगजनक के प्रकार, संक्रमण के मार्ग तथा मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव के आधार पर किया जाता है। वैज्ञानिक दृष्टि से मछली-जनित जूनोटिक रोगों को निम्नलिखित प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है (तालिका 1):

संक्रमण के मार्ग

मछलियों से संबंधित जूनोटिक रोग प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष मार्गों से मनुष्यों में संचरित हो सकते हैं। संक्रमण का जोखिम विशेष रूप से मत्स्य पालकों, मछुआरों, प्रसंस्करण कर्मियों, शोधकर्ताओं तथा कच्ची/अधपकी मछली का सेवन करने वाले व्यक्तियों में अधिक होता है। संक्रमित मछलियों के संपर्क में आने पर रोगजनक सूक्ष्मजीव त्वचा, श्लेष्मा या रक्त के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर सकते हैं। मछली को पकड़ने, साफ करने या काटने के दौरान उसके श्लेष्म, रक्त एवं आंतरिक अंगों में उपस्थित जीवाणु जैसे भिब्रियो, एरोमोनास तथा स्ट्रेप्टोकोक्कस मानव त्वचा से संपर्क में आ सकते हैं। त्वचा पर कट, घाव या कांटे से हुए छेदन संक्रमण के प्रमुख प्रवेश द्वार होते हैं, जिससे गंभीर संक्रमण या सेप्सिस तक की स्थिति उत्पन्न हो सकती है, विशेषकर कमजोर प्रतिरक्षा वाले व्यक्तियों

तालिका 1. मछलियों से मनुष्यों में संचरित होने वाले प्रमुख जूनोटिक रोगजनकों का वर्गीकरण एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य महत्व

श्रेणी	प्रमुख कारक/रोगजनक	संचरण का तरीका	प्रमुख लक्षण	रोकथाम उपाय
जीवाणु	*विब्रियो* प्रजाति	कच्ची/अधपकी मछली खाना, खुले घाव	दस्त, सेप्सिस, घाव संक्रमण	70°C पर पकाना, घाव ढकना
	एरोमोनास प्रजाति	दूषित जल, मछली संपर्क	दस्त, त्वचा संक्रमण	स्वच्छ जल, दस्ताने उपयोग
	स्ट्रेप्टोकोकस प्रजाति	संक्रमित मछली संपर्क	मेनिन्जाइटिस, सेप्सिस	जैव-सुरक्षा, स्वच्छता
	साल्मोनेला ई. कोलाई	दूषित भोजन/जल	जठरांत्रशोथ	स्वच्छ प्रसंस्करण, HACCP
परजीवी	*एनीसाकिस* प्रजाति	कच्ची समुद्री मछली	पेट दर्द, एलर्जी	फ्रीजिंग (-20°C), अच्छी तरह पकाना
	डिफिलोबोथ्रियम प्रजाति	अधपकी मछली	एनीमिया	पूर्ण पकाना
	क्लोनोर्किस प्रजाति	कच्ची मीठे जल की मछली	यकृत रोग	अच्छी तरह पकाना
विषाणु	नोरोवायरस	दूषित समुद्री भोजन	उल्टी, दस्त	स्वच्छता, शीत श्रृंखला
	हेपेटाइटिस-ए विषाणु	दूषित जल/शेलफिश	पीलिया	स्वच्छ जल, टीकाकरण
फफूंद	*स्पोरोथ्रिक्स* प्रजाति	घाव संपर्क	त्वचा गांठ/अल्सर	दस्ताने, घाव देखभाल
	कैंडिडा प्रजाति	कमजोर प्रतिरक्षा	त्वचा/सिस्टमिक संक्रमण	स्वच्छता, प्रतिरक्षा सुदृढ़ीकरण
विषाक्तता	सिगुआटॉक्सिन	विषैली रीफ मछली	तंत्रिका लक्षण	संदिग्ध मछली से परहेज
	टेट्रोडोटॉक्सिन	पफर मछली	लकवा, श्वसन अवरोध	प्रशिक्षित प्रसंस्करण
	स्कोम्ब्रोटॉक्सिन (हिस्टामिन)	खराब भंडारण	एलर्जी, चेहरा लाल होना	0-4°C शीत श्रृंखला

में। कच्ची या अधपकी मछली का सेवन संक्रमण का महत्वपूर्ण माध्यम है। एनीसाकिस, डिफिलोबोथ्रियम एवं क्लोनोर्किस जैसे परजीवी अधपकी मछली के माध्यम से मानव शरीर में प्रवेश कर जठरांत्र या यकृत संबंधी रोग उत्पन्न कर सकते हैं। दूषित समुद्री खाद्य पदार्थों के सेवन से जीवाणुजनित जठरांत्रशोथ एवं विषाक्तता भी हो सकती है। पर्याप्त तापमान पर पकाने से अधिकांश रोगजनक नष्ट हो जाते हैं। दूषित जल, बर्फ, उपकरण एवं प्रसंस्करण सतहें भी संक्रमण के स्रोत बन सकते हैं। औद्योगिक अपशिष्ट या सीवेज से प्रभावित जल में रोगजनकों की संख्या अधिक हो सकती है। एक्वाकल्चर प्रणालियों में उच्च स्टॉकिंग घनत्व एवं अपर्याप्त स्वच्छता रोग प्रसार को बढ़ाते हैं। प्रसंस्करण के दौरान क्रॉस-संदूषण, जैसे एक ही उपकरण का बिना धुलाई पुनः उपयोग या हाथों की स्वच्छता की कमी, संक्रमण के प्रसार में योगदान देती है। इस प्रकार संक्रमण के मार्ग बहुआयामी हैं, जिनमें प्रत्यक्ष संपर्क, खाद्य सेवन, जलजनित स्रोत एवं प्रसंस्करण संबंधी कारक सम्मिलित हैं। (चित्र 1)।

जोखिम कारक

मछली-जनित जूनोटिक रोगों के प्रसार में अनेक जोखिम कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, विशेषकर जलीय कृषि एवं प्रसंस्करण इकाइयों में। कुछ प्रमुख कारकों का विवरण नीचे दिया गया है:

अधिक घनत्व में मछली पालन: सीमित स्थान में अधिक मछलियों के पालन से घुलित ऑक्सीजन की कमी, अमोनिया/नाइट्राइट की वृद्धि एवं जैविक अपशिष्ट संचय होता है, जिससे मछलियों में तनाव बढ़ता है और रोगजनकों का प्रसार तेज होता है।



चित्र 1. मछली-जनित जूनोटिक रोगों के संक्रमण के प्रमुख मार्ग (स्रोत: https://www.justdial.com/india/Fishing-Equipment तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) से निर्मित)

खराब जलीय गुणवत्ता: pH, तापमान, DO, अमोनिया आदि का असंतुलन रोगजनक सूक्ष्मजीवों (जैसे *विब्रियो*, *एरोमोनास* **आदि**) की वृद्धि को बढ़ावा देता है। नियमित जल परीक्षण एवं उचित फिल्ट्रेशन की कमी संक्रमण जोखिम बढ़ाती है।

जैव-सुरक्षा का अभाव: प्रवेश-नियंत्रण, उपकरणों की स्वच्छता, रोगग्रस्त मछलियों का पृथक्करण एवं कीटाणुशोधन में कमी से संक्रमण एक स्थान से दूसरे स्थान तक फैल सकता है।

अपर्याप्त शीत श्रृंखला: पकड़ने के बाद 0-4°C तापमान पर संरक्षण न होने या परिवहन/भंडारण में तापमान उतार-चढ़ाव से सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और खाद्यजनित संक्रमण का खतरा बढ़ता है।

जल प्रदूषण: औद्योगिक अपशिष्ट, सीवेज एवं कृषि अपवाह से दूषित जल में रोगजनक एवं विषैले तत्व उपस्थित हो सकते हैं, जो मछलियों में संचित होकर मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं।

नैदानिक लक्षण

मछली-जनित जूनोटिक रोगों के नैदानिक लक्षण संक्रमण के प्रकार, रोगजनक की प्रकृति तथा व्यक्ति की प्रतिरक्षा स्थिति पर निर्भर करते हैं। त्वचा संपर्क से होने वाले संक्रमण में लालिमा, सूजन, दर्द, फोड़े, अल्सर या ग्रैनुलोमा विकसित हो सकते हैं। खुले घावों के माध्यम से संक्रमण गहरे ऊतकों तक फैल सकता है। यदि संक्रमण रक्त में फैल जाए तो बुखार, ठंड लगना, कमजोरी, निम्न रक्तचाप तथा सेप्टीसीमिया जैसी गंभीर स्थिति उत्पन्न हो सकती है। कच्ची या



चित्र 2. मछली-जनित संक्रमण नियंत्रण हेतु उत्पादन, प्रसंस्करण और उपभोक्ता स्तर की बहु-स्तरीय रणनीति (स्रोत: कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) से निर्मित)

अधपकी मछली के सेवन से जठरांत्र संबंधी लक्षण जैसे पेट दर्द, दस्त, उल्टी, मतली और ऐंठन दिखाई देते हैं। दीर्घकालिक परजीवी संक्रमण में एनीमिया, वजन में कमी तथा यकृत या आंत्र संबंधी जटिलताएँ विकसित हो सकती हैं। कुछ मामलों में एलर्जिक प्रतिक्रियाएँ जैसे पित्ती, खुजली, त्वचा पर चकत्ते तथा श्वसन कष्ट भी देखे जाते हैं। गंभीर विषाक्तता की स्थिति में चक्कर, सुन्नता, मांसपेशियों की कमजोरी या पक्षाघात जैसे तंत्रिका संबंधी लक्षण प्रकट हो सकते हैं। कमजोर प्रतिरक्षा वाले व्यक्तियों में ये लक्षण अधिक तीव्र और जटिल हो सकते हैं।

निदान एवं नियंत्रण

मछली-जनित जूनोटिक रोगों के प्रभावी प्रबंधन हेतु सटीक एवं समयबद्ध निदान आवश्यक है। रोग-इतिहास (कच्ची/अधपकी मछली सेवन, जल संपर्क आदि) के साथ माइक्रोबायोलॉजिकल कल्चर एवं एंटीबायोटिक संवेदनशीलता परीक्षण द्वारा जीवाणु की पहचान की जाती है। ELISA जैसे सीरोलॉजिकल परीक्षण तथा PCR आधारित आणविक तकनीकें त्वरित एवं सटीक निदान प्रदान करती हैं। परजीवी संक्रमण में मल परीक्षण, एंडोस्कोपी या बायोप्सी सहायक होते हैं। उपचार रोगजनक एवं संक्रमण की तीव्रता

पर निर्भर करता है। जीवाणु संक्रमण में संवेदनशीलता परीक्षण के आधार पर एंटीबायोटिक का प्रयोग किया जाना चाहिए, ताकि एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध कम हो। परजीवी संक्रमण में प्राजिक्वांटेल या एल्बेंडाजोल प्रभावी हैं। जठरांत्र लक्षणों में पुनर्जलीकरण एवं सहायक उपचार आवश्यक है, जबकि विषाक्तता के मामलों में त्वरित आपातकालीन चिकित्सा और श्वसन समर्थन आवश्यक हो सकता है। नियंत्रण एवं रोकथाम बहु-स्तरीय रणनीति पर आधारित है (चित्र 2)। मत्स्य पालन में जल गुणवत्ता की निगरानी, उचित स्टॉकिंग घनत्व, क्वारंटीन एवं जैव-सुरक्षा आवश्यक हैं। प्रसंस्करण स्तर पर HACCP सिद्धांतों एवं शीत श्रृंखला (0-4°C) का पालन करना चाहिए। उपभोक्ता स्तर पर मछली को कम से कम 70°C पर अच्छी तरह पकाना तथा व्यक्तिगत स्वच्छता बनाए रखना संक्रमण जोखिम को कम करता है।

मछलियों से संबंधित जूनोटिक रोग वर्तमान समय में वैश्विक सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए एक महत्वपूर्ण एवं उभरती हुई चुनौती हैं। वैश्वीकरण, जलवायु परिवर्तन, जल प्रदूषण तथा गहन एक्वाकल्चर पद्धतियों के कारण इन रोगों का जोखिम बढ़ रहा है। यद्यपि अधिकांश संक्रमण सीमित होते हैं, फिर भी कुछ मामलों में ये गंभीर अथवा घातक परिणाम उत्पन्न कर सकते हैं, विशेषकर संवेदनशील समूहों में। इनकी रोकथाम के लिए वैज्ञानिक मत्स्य प्रबंधन, नियमित रोग निगरानी (Surveillance), त्वरित निदान, जैव-सुरक्षा उपाय तथा एंटीमाइक्रोबियल दवाओं के विवेकपूर्ण उपयोग की आवश्यकता है। प्रसंस्करण स्तर पर HACCP, शीत श्रृंखला का पालन और गुणवत्ता नियंत्रण अनिवार्य हैं, जबकि उपभोक्ता स्तर पर उचित तापमान पर पकाना और व्यक्तिगत स्वच्छता महत्वपूर्ण है। अंततः, सतत् मत्स्य पालन प्रणाली एवं "वन हेल्थ" दृष्टिकोण को अपनाकर मानव, जलीय जीव और पर्यावरणीय स्वास्थ्य के बीच संतुलन स्थापित किया जा सकता है, जो दीर्घकालिक सार्वजनिक स्वास्थ्य सुरक्षा की कुंजी है।

हिंदी आम बोलचाल की 'महाभाषा' है:

जॉर्ज ग्रियर्सन

हिंदी हमारी माँ है, राजभाषा हमारा गौरव है।

मछली पालन में जैव सुरक्षा का महत्व: एक व्यापक मार्गदर्शिका

वैभव त्रिपाठी, ललित कुमार त्यागी, रजनी चंद्रन एवं राजीव कुमार सिंह

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

जैव सुरक्षा आधुनिक मत्स्य पालन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है, जिसका मुख्य उद्देश्य रोगों की रोकथाम, नियंत्रण तथा उत्पादन की निरंतरता को सुनिश्चित करना है। यह केवल एक तकनीक नहीं, बल्कि कई परस्पर जुड़ी प्रबंधन प्रक्रियाओं का समुच्चय है, जिनके माध्यम से रोगकारक जीवों के प्रवेश, प्रसार और स्थायित्व को नियंत्रित किया जाता है। यदि किसी मत्स्य फार्म में जैव सुरक्षा उपायों का समुचित पालन किया जाए, तो रोग प्रकोपों में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है और उत्पादन को स्थिर एवं लाभकारी बनाया जा सकता है।

पहचान और नियमित निगरानी

जैव सुरक्षा की पहली और सबसे महत्वपूर्ण कड़ी है नियमित निगरानी, जो मत्स्य फार्म में किसी भी संभावित रोग के प्रारंभिक संकेतों की पहचान में सहायक होती है। इससे शीघ्र उपचार या नियंत्रण उपाय अपनाकर आर्थिक हानि को रोका जा सकता है। मछलियों के दैनिक व्यवहार जैसे भोजन ग्रहण की मात्रा, तैरने की शैली, समूहगत गति पर निरंतर ध्यान देना चाहिए। भूख में कमी, सतह पर अधिक समय बिताना, गोल-गोल घूमना, सुस्ती, या शरीर का रंग फीका पड़ना ये सभी तनाव या संक्रमण के प्रारंभिक संकेत हैं। साथ ही, शरीर पर घाव, लाल धब्बे, गलफड़ों का रंग बदलना, पंखों का गलना या पेट का फूलना रोग की उपस्थिति का संकेत देते हैं। जल गुणवत्ता मानक जैसे पी-एच, तापमान, घुलित ऑक्सीजन, अमोनिया और नाइट्राइट के स्तर का नियमित परीक्षण आवश्यक है। इन मानकों में विचलन मछलियों की प्रतिरोधक क्षमता को घटा देता है। रोग, मृत्यु दर, जल गुणवत्ता और उपचार से संबंधित सभी जानकारी का अभिलेख रखना फार्म प्रबंधन का अभिन्न अंग है, जिससे भविष्य में रोग रुझानों और नियंत्रण रणनीतियों की बेहतर योजना बनाई जा सके।

स्वच्छता और कीटाणुशोधन

मत्स्य फार्म में स्वच्छता बनाए रखना जैव सुरक्षा का आधार है। यदि फार्म परिसर साफ-सुथरा और सुव्यवस्थित रहेगा, तो रोगकारक सूक्ष्मजीवों के पनपने की संभावना स्वतः कम हो जाएगी। तालाब के आसपास गंदगी, कीचड़ या सड़न नहीं होनी चाहिए, क्योंकि यह जीवाणु और फफूंद के विकास को बढ़ावा देता है। मृत मछलियों का निपटान अत्यंत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। उन्हें खुले में फेंकने के बजाय चूना डालकर गड्ढे में दबाना या जलाना उचित होता है। उपकरणों की नियमित सफाई और कीटाणुशोधन भी अनिवार्य है।

आवश्यक होने पर निम्नलिखित कीटाणुनाशकों का उपयोग किया जा सकता है—

- पोटेशियम परमैंगनेट (2–5 ppm)
- ब्लीचिंग पाउडर (10–20 ppm)
- आयोडीन घोल (50 ppm)
- चूना (100–200 किग्रा/हेक्टेयर)

फार्म में प्रवेश के समय श्रमिकों के लिए कीटाणुशोधन की व्यवस्था, जैसे फुटबाथ (1% ब्लीच घोल), अत्यंत प्रभावी उपाय है। साथ ही, प्रत्येक तालाब के लिए अलग-अलग उपकरणों का उपयोग करना चाहिए, ताकि संक्रमण एक स्थान से दूसरे स्थान तक न फैले।

क्वारंटीन और पृथक्करण

क्वारंटीन और पृथक्करण जैव सुरक्षा की तीसरी और सबसे मजबूत दीवार हैं। इनका उद्देश्य संभावित संक्रमित मछलियों को स्वस्थ आबादी से दूर रखना है। नई खरीदी गई बीज मछलियों को मुख्य तालाब में डालने से पहले 14-21 दिनों तक अलग क्वारंटीन टैंक में रखना चाहिए, जहाँ उनका स्वास्थ्य परीक्षण और उपचार किया जाए।

यदि मुख्य आबादी में कोई रोग दिखाई दे तो प्रभावित तालाब को तुरंत अलग कर देना चाहिए। उस तालाब के उपकरण या पानी को अन्य तालाबों से संपर्क में नहीं लाना चाहिए। संक्रमित तालाब के पानी को बाहर निकालने से पहले क्लोरीन या चूना उपचार अवश्य करें। मूल सिद्धांत — नए को पुराने के साथ और बीमार को स्वस्थ के साथ न मिलाएँ।

प्रक्रिया	अनुशंसित अवधि/ मात्रा	विवरण
क्वारंटीन अवधि	5-6 दिन	नई बीज मछलियों को मुख्य तालाब में डालने से पहले अलग रखना
क्वारंटीन टैंक की क्षमता	मुख्य तालाब का 5–10%	स्वतंत्र जल आपूर्ति और वायु प्रवाह प्रणाली आवश्यक
टैंक की कीटाणुशोधन	1% ब्लीच या 100 भाग प्रति दस लाख आयोडीन	उपयोग से पहले
उपचार	फॉर्मेलिन स्नान (25 भाग प्रति दस लाख, 30 मिनट) या नमक स्नान (2–3%)	आवश्यकता अनुसार

उपकरण और श्रमिक सुरक्षा

उपकरणों और श्रमिकों की सुरक्षा जैव सुरक्षा की महत्वपूर्ण कड़ी है। सभी उपकरणों को उपयोग से पहले और बाद में साफ़ एवं कीटाणुरहित करना चाहिए। कीटाणुशोधन के बाद उपकरणों को धूप में 4-6 घंटे सुखाना प्राकृतिक कीटाणुशोधन का प्रभावी तरीका है।

श्रमिकों के लिए उपाय:

- साफ कपड़े, दस्ताने और बूट का प्रयोग।
- फार्म में प्रवेश नियंत्रित रखना।
- आगंतुकों के लिए "प्रवेश पंजिका" (लॉग बुक) रखना।
- किसी श्रमिक में त्वचा संक्रमण या एलर्जी होने पर उसे अस्थायी रूप से कार्य से अलग रखना।

प्राकृतिक प्रतिरक्षा वृद्धि

मछलियों की प्रतिरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ बनाना जैव सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण एवं दीर्घकालिक आधार है। जब मछलियों को संतुलित एवं पोषक आहार प्रदान किया जाता है, तो उनकी रोगों के प्रति स्वाभाविक प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। यह न केवल रोगों की संभावना को कम करता है, बल्कि मछलियों की वृद्धि, जीवितता तथा समग्र स्वास्थ्य को भी बेहतर बनाता है। इस संदर्भ में प्राकृतिक पूरकों का उपयोग विशेष रूप से लाभकारी माना जाता है। प्रोबायोटिक्स जैसे बैसिलस तथा लैक्टोबैसिलस जीवाणु आंतों के सूक्ष्मजीव संतुलन को बनाए रखते हैं, जिससे पाचन क्रिया में सुधार होता है और रोगजनक जीवों के विरुद्ध सुरक्षा मिलती है। इसी प्रकार लहसुन, हल्दी, नीम और तुलसी जैसे औषधीय पौधों में प्राकृतिक जीवाणुरोधी एवं रोगप्रतिरोधक गुण पाए जाते हैं, जो मछलियों की प्रतिरक्षा प्रणाली को सक्रिय एवं सशक्त बनाते हैं। इसके अतिरिक्त, विटामिन—विशेषकर विटामिन C एवं E—मछलियों के शरीर में एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करते हैं और प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साथ ही यह भी आवश्यक है कि जल गुणवत्ता को संतुलित रखा जाए तथा अत्यधिक घनत्व से बचा जाए। खराब जल गुणवत्ता और भीड़भाड़ वाली स्थिति मछलियों में तनाव उत्पन्न करती है, जिससे उनकी प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है और वे रोगों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाती हैं। अतः उचित पोषण के साथ-साथ अनुकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों का प्रबंधन भी प्रतिरक्षा वृद्धि के लिए अत्यंत आवश्यक है।

चुनौतियाँ एवं संभावित समाधान

मत्स्य पालन में जैव सुरक्षा उपायों का महत्व तो सर्वविदित है, किन्तु व्यवहारिक स्तर पर इन्हें लागू करना विशेषकर छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए आसान नहीं होता। सीमित संसाधन, तकनीकी जानकारी की कमी तथा स्थानीय स्तर पर समन्वय का अभाव कई बार इन उपायों के प्रभावी क्रियान्वयन में बाधा उत्पन्न करते हैं। परिणामस्वरूप, एक ही क्षेत्र में स्थित विभिन्न मत्स्य फार्मों के बीच रोगों का प्रसार तेजी से हो सकता है, जिससे सामूहिक रूप से आर्थिक हानि होती है। इन चुनौतियों में प्रमुख रूप से उच्च लागत एक महत्वपूर्ण समस्या है, क्योंकि क्वारंटीन टैंक, कीटाणुनाशक, उपकरणों की पृथक व्यवस्था तथा निगरानी प्रणाली पर अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, कई किसानों को जैव सुरक्षा के वैज्ञानिक सिद्धांतों एवं उनके व्यावहारिक उपयोग की पर्याप्त जानकारी नहीं होती। प्रशिक्षण एवं जागरूकता के अभाव में वे आवश्यक सावधानियाँ नहीं अपना पाते। साथ ही, यदि किसी क्षेत्र में कुछ किसान लापरवाही

बरतते हैं, तो उनके फार्म से रोग फैलकर अन्य फार्मों को भी प्रभावित कर सकते हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए सामूहिक एवं संस्थागत प्रयास आवश्यक हैं। क्षेत्र के सभी किसानों द्वारा एक समान जैव सुरक्षा मानकों का पालन करने हेतु समूह आधारित (cluster-based) मॉडल अपनाया जा सकता है, जिससे रोग नियंत्रण अधिक प्रभावी हो सके। इसके साथ ही, सरकारी एवं अनुसंधान संस्थानों द्वारा नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्यशालाएँ एवं जागरूकता अभियान आयोजित किए जाने चाहिए, ताकि किसानों को नवीनतम तकनीकों एवं प्रबंधन उपायों की जानकारी प्राप्त हो सके।

आर्थिक बाधाओं को कम करने के लिए आवश्यक उपकरणों, कीटाणुनाशकों एवं अवसंरचना पर अनुदान या सब्सिडी प्रदान करना भी एक प्रभावी उपाय है। आधुनिक तकनीकों जैसे जल गुणवत्ता सेंसर, मोबाइल आधारित अनुप्रयोग एवं जी.आई.एस. आधारित निगरानी प्रणाली का उपयोग कर रोग जोखिम का प्रारंभिक आकलन किया जा सकता है, जिससे समय रहते नियंत्रण उपाय अपनाए जा सकें। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक मत्स्य फार्म में मानक संचालन प्रक्रिया (SOP) का विकास और उसका पालन अत्यंत आवश्यक है। इसमें प्रवेश नियंत्रण, उपकरणों की नियमित सफाई, बीज मछलियों का परीक्षण, क्वारंटीन व्यवस्था तथा रोग संबंधी अभिलेखों का संधारण शामिल होना चाहिए। इस प्रकार, यदि इन चुनौतियों का समाधान समन्वित प्रयासों, तकनीकी सहयोग एवं जागरूकता के माध्यम से किया जाए, तो जैव सुरक्षा उपायों को प्रभावी रूप से लागू कर मत्स्य पालन को अधिक सुरक्षित, टिकाऊ एवं लाभकारी बनाया जा सकता है।

तालिका 1: मत्स्य पालन में जैव सुरक्षा के प्रमुख लाभ

लाभ	विवरण
रोग नियंत्रण	रोगों के तेजी से फैलने और मृत्यु दर में उल्लेखनीय कमी
उत्पादन वृद्धि	स्वस्थ मछलियाँ तेजी से बढ़ती हैं, जिससे उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि होती है
आर्थिक लाभ	रोगों पर होने वाले खर्च में कमी से शुद्ध आय में सुधार
उत्पाद की बेहतर गुणवत्ता	उच्च पोषण मूल्य और बाजार में बेहतर मूल्य प्राप्ति
पर्यावरणीय स्थिरता	रसायनों/एंटीबायोटिक्स के अंधाधुंध उपयोग में कमी से जल स्रोत स्वच्छ रहते हैं

जैव सुरक्षा मत्स्य पालन की आर्थिक, पर्यावरणीय और सामाजिक स्थिरता की आधारशिला है। इसका समुचित पालन न केवल रोग नियंत्रण में सहायक है, बल्कि स्वस्थ, टिकाऊ और लाभदायक मत्स्य उत्पादन की दिशा में एक सशक्त कदम है।

राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।

महात्मा गांधी

गंगा नदी में विदेशी मछली प्रजातियाँ: जैव विविधता, पारिस्थितिकीय प्रभाव एवं प्रबंधन रणनीतियाँ

आशीष सिंह, सुरेन्द्र कुमार मौर्य एवं अंकित सिंह
भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

प्रस्तावना

गंगा नदी, जिसका उद्गम हिमालय स्थित गंगोत्री हिमनद से होता है, भारत की सबसे बड़ी तथा सांस्कृतिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण नदी प्रणाली है। यह नदी देश की लगभग 43 प्रतिशत जनसंख्या को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जीवन, आजीविका और जल संसाधन उपलब्ध कराती है तथा दक्षिण एशिया की सबसे समृद्ध मीठे जल की मत्स्य जैव-विविधताओं में से एक का संरक्षण करती है। देशज मछलियाँ जैसे कतला (*कतला कतला*), रोहू (*लेबियो रोहिता*), मृगल (*सिरिहिनस मृगाला*), विभिन्न कैटफिश तथा नाइफ फिश (फीदरबैक) प्रजातियाँ स्थानीय मत्स्य व्यवसाय की आधारशिला हैं और नदी पारितंत्र के पारिस्थितिकीय संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

हालाँकि, पिछले कुछ दशकों में गंगा नदी में विदेशी मछली प्रजातियों के प्रवेश और स्थापना में चिंताजनक वृद्धि देखी गई है। इन प्रजातियों को मुख्यतः मत्स्य पालन, कृत्रिम संचयन, सजावटी मत्स्य व्यापार तथा आकस्मिक पलायन के माध्यम से विभिन्न जलीय प्रणालियों में पहुँचाया गया है। एक बार प्राकृतिक जल निकायों में स्थापित हो जाने के बाद ये विदेशी प्रजातियाँ देशज मत्स्य जैव-विविधता के लिए गंभीर पारिस्थितिकीय खतरा उत्पन्न करती हैं। भारत की मीठे जल की पारिस्थितिक प्रणालियाँ तीव्र गति से बढ़ते मत्स्य पालन तथा अपर्याप्त जैव-सुरक्षा उपायों के कारण जैविक आक्रमणों के प्रति अधिक संवेदनशील होती जा रही हैं। इसी प्रकार, गंगा नदी बेसिन में किए गए अध्ययनों में मत्स्य विविधता के स्वरूप में परिवर्तन की जानकारी मिली है, जिसमें विदेशी मछली प्रजातियों की संख्या और प्रभुत्व विशेष रूप से मानव-प्रभावित एवं परिवर्तित आवासों में बढ़ता हुआ पाया गया। विदेशी प्रजातियों की बढ़ती उपस्थिति न केवल देशज मछलियों के लिए भोजन एवं आवास संबंधी प्रतिस्पर्धा को बढ़ाती है, बल्कि यह नदी के खाद्य-जाल, पारिस्थितिकीय प्रक्रियाओं तथा मत्स्य संसाधनों की दीर्घकालिक स्थिरता को भी प्रभावित कर सकती है। इस प्रकार, गंगा नदी में विदेशी मछली प्रजातियों की उपस्थिति और उनके संभावित प्रभावों का अध्ययन वर्तमान समय में अत्यंत आवश्यक हो गया है, ताकि देशज मत्स्य जैव-विविधता के संरक्षण तथा सतत मत्स्य प्रबंधन के लिए प्रभावी रणनीतियाँ विकसित की जा सकें।

विदेशी मछली प्रजातियों की अवधारणा

विदेशी प्रजातियाँ वे जीव हैं जिन्हें उनके प्राकृतिक वितरण क्षेत्र से बाहर किसी अन्य स्थान पर स्थानांतरित किया जाता है। जब ये नई परिस्थितियों में सफलतापूर्वक स्थापित होकर तेजी से फैलने लगती हैं और स्थानीय जैव-विविधता को प्रभावित करती हैं, तब इन्हें आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ कहा जाता है। मत्स्य क्षेत्र में विदेशी प्रजातियों का उपयोग कई कारणों से किया जाता है, जैसे—

- मत्स्य उत्पादन में वृद्धि
- तीव्र वृद्धि दर
- बेहतर बाजार मूल्य
- खेल मत्स्य पालन
- सजावटी मत्स्य व्यापार
- जैविक नियंत्रण

हालाँकि, अनेक मामलों में इनके लाभों की तुलना में पारिस्थितिकीय हानियाँ अधिक गंभीर सिद्ध हुई हैं।

भारत में विदेशी मछलियों का परिचय

भारत में विदेशी मछलियों का प्रवेश मुख्यतः 1950 के दशक के बाद प्रारंभ हुआ। हरित क्रांति तथा नीली क्रांति कार्यक्रमों के अंतर्गत कई विदेशी कार्प प्रजातियों को देश में लाया गया।

भारत में प्रमुख विदेशी मछलियाँ निम्नलिखित हैं—

(क) ग्रास कार्प (*क्टेनोफैरिंगोडॉन इडेला*)

यह चीन की मूल निवासी प्रजाति है। इसे जलीय खरपतवार नियंत्रण तथा तीव्र वृद्धि के कारण भारत में लाया गया। यह मुख्यतः शाकाहारी होती है।

(ख) सिल्वर कार्प (*हाइपोफ्थैल्मिक्थिस मोलिट्रिक्स*)

यह तीव्र वृद्धि वाली प्लवकभक्षी प्रजाति है। भारत में बहुपोषणीय मत्स्य पालन के लिए इसका उपयोग किया गया।

(ग) बिगहेड कार्प (*हाइपोफ्थैल्मिक्थिस नोबिलिस*)

यह भी चीन की मूल निवासी प्रजाति है तथा मुख्यतः जूप्लवक पर निर्भर रहती है।

(घ) कॉमन कार्प (*साइप्रिनस कार्पियो*)

यह विश्व की सबसे व्यापक रूप से वितरित विदेशी मछलियों में से एक है। इसकी उच्च सहनशीलता इसे अत्यधिक सफल बनाती है।

(ङ) नाइल तिलापिया (*ओरियोक्रोमिस निलोटिकस*)

अफ्रीका की मूल निवासी यह प्रजाति वर्तमान समय में विश्व की सबसे अधिक संवर्धित मछलियों में से एक है।

(च) अफ्रीकी कैटफिश (*क्लैरियस गैरीपिनस*)

यह अत्यंत आक्रामक प्रजाति है और कई देशों में प्रतिबंधित की जा चुकी है।

(छ) पंगासियस (*पैंगेसियानोडॉन हाइपोफ्थैल्मस*)

दक्षिण-पूर्व एशिया की यह प्रजाति तीव्र वृद्धि एवं उच्च उत्पादन क्षमता के कारण लोकप्रिय है।

(ज) सकरमाउथ कैटफिश (*टेरिगोप्लिक्थिस डिसजंक्टिवस*)

यह एक्वेरियम व्यापार के माध्यम से भारत में आई और बाद में प्राकृतिक जल निकायों में फैल गई।

गंगा नदी में विदेशी मछलियों का प्रसार

गंगा नदी में विदेशी मछली प्रजातियों का प्रसार मुख्यतः मत्स्य पालन गतिविधियों, बाढ़ के दौरान मत्स्य फार्मों से पलायन, सजावटी मत्स्य व्यापार, जलवायु परिवर्तन तथा मानवजनित पर्यावरणीय परिवर्तनों के कारण हुआ है। कॉमन कार्प, ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, तिलापिया और पंगासियस जैसी विदेशी प्रजातियाँ प्रारंभ में मत्स्य उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से भारत में लाई गई थीं, लेकिन बाद में वे प्राकृतिक जल निकायों में पहुँचकर स्थापित हो गईं। बढ़ते प्रदूषण, आवासीय क्षरण, बांध निर्माण तथा जल प्रवाह में कमी ने देशज मछलियों के लिए प्रतिकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कीं, जबकि विदेशी प्रजातियाँ इन परिस्थितियों में भी आसानी से जीवित रहने और प्रजनन करने में सक्षम रहीं। इनके तीव्र विकास, उच्च प्रजनन क्षमता, व्यापक भोजन व्यवहार तथा अनुकूलनशीलता ने इनके प्रसार को और बढ़ावा दिया। साथ ही, जैव-सुरक्षा उपायों की कमी तथा विदेशी प्रजातियों के अनियंत्रित संवर्धन ने भी उनकी संख्या में वृद्धि की। परिणामस्वरूप, विदेशी मछलियाँ गंगा नदी में स्थापित होकर देशज मत्स्य जैव-विविधता और पारिस्थितिकीय संतुलन के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती बन गई हैं।

गंगा नदी की देशज मछली जैव-विविधता पर प्रभाव

विदेशी मछली प्रजातियाँ भोजन, आवास एवं प्रजनन स्थलों के लिए देशज मछलियों के साथ प्रतिस्पर्धा करती हैं, जिससे स्थानीय प्रजातियों की संख्या में कमी आ सकती है। इसके अतिरिक्त, ये जलीय खाद्य-जाल में परिवर्तन उत्पन्न कर पारिस्थितिकीय संतुलन को प्रभावित करती हैं तथा कुछ मामलों में रोगों और आनुवंशिक प्रदूषण के माध्यम से देशज जैव-विविधता के लिए खतरा बन जाती हैं।

जलीय पारितंत्र एवं खाद्य-जाल पर प्रभाव

विदेशी मछली प्रजातियाँ जलीय पारितंत्र की संरचना, कार्यप्रणाली तथा जैविक संतुलन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती हैं। ये प्लवकों, जलीय पौधों, कीटों तथा अन्य जलीय जीवों का अत्यधिक उपभोग कर खाद्य-जाल की प्राकृतिक संरचना में परिवर्तन उत्पन्न करती हैं। कई विदेशी

प्रजातियाँ देशज मछलियों के साथ भोजन एवं आवास के लिए प्रतिस्पर्धा करती हैं, जिससे स्थानीय प्रजातियों की संख्या और विविधता में कमी आ सकती है। कुछ प्रजातियाँ नदी की तलहटी को विचलित कर जल की पारदर्शिता को कम करती हैं तथा पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण को प्रभावित करती हैं। इसके अतिरिक्त, विदेशी मछलियों की बढ़ती संख्या ऊर्जा प्रवाह एवं ट्रॉफिक संरचना में बदलाव लाकर संपूर्ण जलीय पारितंत्र की स्थिरता को प्रभावित कर सकती है। परिणामस्वरूप, नदी की पारिस्थितिकीय कार्यक्षमता, जैव-विविधता तथा मत्स्य संसाधनों की उत्पादकता पर दीर्घकालिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

विदेशी मछलियों के प्रबंधन एवं नियंत्रण की रणनीतियाँ

गंगा नदी में विदेशी मछली प्रजातियों के बढ़ते प्रसार को नियंत्रित करने के लिए प्रभावी प्रबंधन एवं नियंत्रण रणनीतियों का अपनाया जाना आवश्यक है। सबसे पहले, विदेशी मछलियों के आयात, संवर्धन तथा वितरण पर कठोर जैव-सुरक्षा (Biosecurity) नियम लागू किए जाने चाहिए, ताकि नई आक्रामक प्रजातियों के प्रवेश को रोका जा सके। मत्स्य फार्मों और जलीय कृषि इकाइयों में उचित संरचनात्मक प्रबंधन अपनाकर बाढ़ या अन्य कारणों से मछलियों के प्राकृतिक जल निकायों में पलायन को रोकना चाहिए। नदी तंत्र में विदेशी प्रजातियों की नियमित निगरानी एवं सर्वेक्षण के माध्यम से उनके प्रसार का समय-समय पर आकलन किया जाना आवश्यक है।

देशज मछली प्रजातियों के संरक्षण एवं पुनर्स्थापन कार्यक्रमों को बढ़ावा देकर उनकी जनसंख्या और जैव-विविधता को सुदृढ़ किया जा सकता है। सजावटी मत्स्य व्यापार पर प्रभावी नियंत्रण तथा विदेशी एक्वेरियम मछलियों को प्राकृतिक जल निकायों में छोड़ने के प्रति जन-जागरूकता बढ़ाना भी महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त, वैज्ञानिक अनुसंधान, स्थानीय समुदायों की सहभागिता तथा सतत मत्स्य प्रबंधन नीतियों के माध्यम से विदेशी मछलियों के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है। इन उपायों के समन्वित क्रियान्वयन से गंगा नदी की देशज मत्स्य जैव-विविधता और पारिस्थितिकीय संतुलन का दीर्घकालिक संरक्षण सुनिश्चित किया जा सकता है।

गंगा नदी में विदेशी मछली प्रजातियों का बढ़ता प्रसार देशज मत्स्य जैव-विविधता और पारिस्थितिकीय संतुलन के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती है। ये प्रजातियाँ भोजन, आवास एवं प्रजनन स्थलों के लिए स्थानीय मछलियों से प्रतिस्पर्धा करती हैं तथा जलीय खाद्य-जाल को प्रभावित करती हैं। इसलिए विदेशी प्रजातियों के प्रभावी नियंत्रण, देशज मछलियों के संरक्षण, जैव-सुरक्षा उपायों के सुदृढ़ीकरण तथा सतत मत्स्य प्रबंधन रणनीतियों को अपनाना गंगा नदी की जैव-विविधता के संरक्षण के लिए आवश्यक है।

मत्स्य क्षेत्र में साइबर सुरक्षा: भूमिका, चुनौतियाँ, जोखिम, तकनीकी समाधान एवं भविष्य की संभावनाएँ

अजेय कुमार पाठक[1], विकास कुमार[1], रवि कुमार[1], सत्य प्रकाश[2], युसुरा शर्फ़[1]

[1]भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

[2]भाकृअनुप-केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षण संस्थान, मुंबई

वर्तमान समय में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने विश्व में अनुमानतः सभी क्षेत्रों के पारम्परिक कार्यशैली में बदलाव किया है और मत्स्य क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है। पारम्परिक मत्स्य पालन अब धीरे-धीरे स्मार्ट मत्स्य कृषि में परिवर्तित हो रहा है, जिसमें इंटरनेट ऑफ थिंग्स, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, क्लाउड कंप्यूटिंग, वृहद् डेटा वैश्लिषिकी, ब्लॉकचेन, ड्रोन, जीआईएस तथा उपग्रह आधारित प्रणालियों के माध्यम से विकसित स्वचालित प्रणालियों का मत्स्य पालन कृषि में नियत समय में सटीक निगरानी और प्रबन्धन में हो रहा है। इन आधुनिक तकनीकों ने मत्स्य उत्पादन, संसाधन प्रबंधन एवं निगरानी, आपूर्ति श्रृंखला, गुणवत्ता नियंत्रण तथा विपणन को अधिक सटीक और प्रभावी बनाया है। विभिन्न क्षेत्रों में इन डिजिटल प्रणालियों के बढ़ते उपयोग से साइबर अपराध एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय बन गया है और इस बढ़ते साइबर अपराध से निजात पाने के लिए साइबर सुरक्षा आवयशक है। साइबर सुरक्षा का उद्देश्य डिजिटल नेटवर्क, कंप्यूटर प्रणालियों, डेटाबेस तथा संवेदनशील सूचनाओं की अनाधिकृत पहुँच, डेटा चोरी, हैकिंग, रैनसमवेयर, मैलवेयर तथा अन्य साइबर हमलों से सुरक्षित रखना है। यदि मत्स्य क्षेत्र की डिजिटल प्रणालियाँ साइबर हमलों का शिकार होती हैं, तो निःसंदेह मत्स्य के उत्पादन, व्यापार, निर्यात, अनुसंधान तथा राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

परिचय

भारत विश्व के प्रमुख मत्स्य उत्पादक देशों में से एक है। मत्स्य पालन देश की अर्थव्यवस्था, पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन तथा ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लाखों परिवार प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मत्स्य पालन व्यवसाय और पोषण आहार पर निर्भर हैं। विगत कुछ वर्षों में डिजिटल इंडिया अभियान के अंतर्गत मत्स्य क्षेत्र में अनेक डिजिटल तकनीकों का समावेश हुआ है।

आज मत्स्य कृषि क्षेत्रों में विभिन्न सेंसर जल की गुणवत्ता की निगरानी करते हैं, जीपीएस आधारित नौकाएँ समुद्री एवं जल निकायों में मार्ग निर्धारित करती हैं। मोबाइल ऐप किसानों को मौसम एवं बाजार की जानकारी प्रदान करते हैं तथा ब्लॉकचेन आधारित प्रणालियाँ मत्स्य उत्पादों की अनुरक्षण क्षमता सुनिश्चित करती हैं। निःसन्देह इन सभी तकनीकों से उत्पादन क्षमता और दक्षता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। किन्तु, डिजिटल तकनीकों की उपयोगिता एवं उस पर बढ़ती निर्भरता के कारण साइबर जोखिम भी तेजी से बढ़े हैं। यदि कोई साइबर हमलावर मत्स्य कृषि क्षेत्र के स्वचालित प्रणाली को नियंत्रित कर लेता है, जल गुणवत्ता आंकलन करने वाले सेंसरों के डेटा में परिवर्तन कर देता है या मत्स्य निर्यात से संबंधित डेटा चोरी कर लेता है, तो इससे भारी आर्थिक नुकसान हो सकता है। इसलिए, डिजिटल मत्स्य पालन के क्षेत्र के लिए साइबर सुरक्षा अत्यंत आवश्यक हो गई है।

मत्स्य पालन क्षेत्र के डिजिटलीकरण में उपयोग तकनीकें

डिजिटल परिवर्तन ने मत्स्य पालन उद्योग के लगभग प्रत्येक चरण को काफी प्रभावित किया है। प्रमुख डिजिटल तकनीकें निम्नलिखित हैं—

- इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT)
- कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI)
- मशीन अधिगम
- वृहद् डेटा विश्लेषण
- क्लाउड कंप्यूटिंग
- ब्लॉकचेन
- भोगोलिक सुचना प्रणाली एवं दूर संवेदन
- ड्रोन तकनीक

- स्मार्ट सेंसर
- मोबाइल एप्लीकेशन

इन तकनीकों के माध्यम से जल की गुणवत्ता, मछलियों के स्वास्थ्य, रोग, उत्पाद एवं उत्पादन का वास्तविक समय में विश्लेषण कर निगरानी एवं प्रबंधन किया जाता है।

साइबर सुरक्षा का अर्थ एवं महत्व

साइबर सुरक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो कंप्यूटर नेटवर्क, डिजिटल उपकरण, सर्वर, क्लाउड प्लेटफॉर्म तथा डेटाबेस को जागरूकता एवं विभिन्न एप्लीकेशन और टूल्स के माध्यम से साइबर अपराध से सुरक्षित रखती है। मत्स्य पालन क्षेत्र में साइबर सुरक्षा का महत्व निम्न कारणों से बढ़ गया है—

- अनुसंधान संस्थानों के वैज्ञानिक डेटा की सुरक्षा
- उत्पाद एवं उत्पादन संबंधी डेटा की सुरक्षा
- मत्स्य कृषकों की व्यक्तिगत जानकारी की सुरक्षा
- ऑनलाइन भुगतान की सुरक्षा
- निर्यात डेटा की गोपनीयता
- सरकारी योजनाओं के डेटा की सुरक्षा
- स्मार्ट मत्स्य क्षेत्रों के निगरानी एवं प्रबन्धन की सुरक्षा

मत्स्य क्षेत्र में साइबर खतरों का विश्लेषण

डिजिटल मत्स्य प्रबंधन प्रणाली में इंटरनेट ऑफ थिंग्स, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, क्लाउड कंप्यूटिंग, जीआईएस, रिमोट सेंसिंग (RS) ड्रोन तथा ब्लॉकचेन जैसी तकनीकों के उपयोग से उत्पादन, निगरानी और आपूर्ति श्रृंखला अधिक प्रभावी एवं दक्ष बनी है। किंतु, इन तकनीकों की बढ़ती परस्पर निर्भरता ने साइबर जोखिमों को बढ़ा दिया है। हाल के अध्ययनों के अनुसार, मत्स्य एवं खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में डिजिटल अवसंरचना पर साइबर हमले आर्थिक हानि, आपूर्ति व्यवधान तथा डेटा की विश्वसनीयता पर गंभीर प्रभाव डाल सकते हैं। साइबर हमले में प्रयुक्त कुछ हमले निम्नलिखित हैं जिनके बारे में संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है।

रैनसमवेयर (Ransomware)

रैनसमवेयर एक ऐसा साइबर हमला है, जिसमें हमलावर किसी संस्थान के सर्वर, कंप्यूटर या डेटाबेस को इनक्रिप्ट कर उसकी पहुँच लक्ष्य तक रोक देते हैं तथा डेटा वापस देने के बदले फिरौती की मांग करते हैं। यदि ऐसा हमला किसी मत्स्य प्रसंस्करण इकाई, शीत भण्डारण या निर्यात कंपनी पर होता है तो उत्पादन, वितरण और निर्यात पूरी तरह बाधित हो सकते हैं।

फिशिंग (Phishing)

फिशिंग ईमेल, नकली वेबसाइट या मोबाइल संदेशों के माध्यम से सुरक्षा कोड, बैंक विवरण, लॉगिन एवं अन्य व्यक्तिगत जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करता है। मत्स्य सहकारी समितियों, अनुसंधान संस्थानों तथा सरकारी विभागों में यह एक सामान्य साइबर खतरा है।

इंटरनेट ऑफ थिंग्स उपकरणों पर साइबर हमला

स्मार्ट मत्स्य फार्मों में संचालित सेंसर जल तापमान, घुलित ऑक्सीजन, पीएच, अमोनिया तथा मछलियों की वृद्धि की वास्तविक समय में निगरानी करते हैं। यदि इन सेंसरों से प्राप्त डेटा में छेड़छाड़ होती है, तो गलत निर्णय लिए जा सकते हैं, जिससे उत्पाद और उत्पादन दोनों प्रभावित हो सकता है। आईओटी आधारित प्रणालियों में सुरक्षित प्रमाणीकरण, इनक्रिप्टसन और नियमित फर्मवेयर अद्यतन आवश्यक हैं।

डेटा चोरी

मत्स्य उद्योग में उत्पादन, अनुसंधान, प्रजनन कार्यक्रम, निर्यात अनुबंध तथा ग्राहकों की जानकारी पर डेटा अत्यंत मूल्यवान होती है। चोरी के माध्यम से डेटा का अनधिकृत उपयोग आर्थिक प्रतिस्पर्धा को प्रभावित कर सकता है।

आपूर्ति श्रृंखला पर साइबर हमला

आधुनिक मत्स्य उद्योग में पकड़, प्रसंस्करण, पैकेजिंग, परिवहन और विपणन सभी डिजिटल प्रणालियों से जुड़े हैं। यदि इनमें से किसी एक प्रणाली पर हमला हो जाए तो पूरी आपूर्ति श्रृंखला प्रभावित हो सकती है। इसलिए प्रत्येक चरण पर साइबर सुरक्षा आवश्यक हैं।

मलवेयर

मलवेयर कंप्यूटर सिस्टम को नुकसान पहुँचाने वाले वायरस, ट्रोजन, स्पाइवेयर एवं वर्म के रूप में हानिकारक कंप्यूटर प्रोग्राम होते हैं, जो कंप्यूटर सिस्टम के संचालन में बाधा उत्पन्न करते हैं और डेटा को इनक्रिप्ट कर देते हैं।

क्लाउड डेटा लीक

यदि क्लाउड सर्वर की सुरक्षा सुदृढ़ और मजबूत न हो तो डेटा की संवेदनशीलता एवं गोपनीयता भंग हो सकती है और सार्वजनिक हो सकता है।

मत्स्य पालन एवं उद्योग क्षेत्र में साइबर सुरक्षा की प्रमुख चुनौतियाँ

मत्स्य पालन एवं उद्योग क्षेत्र में साइबर सुरक्षा से जुडी कई प्रमुख चुनौतियाँ हैं, जो निम्नवत हैं।

- साइबर सुरक्षा विशेषज्ञों की कमी
- पुराने कंप्यूटर सिस्टम
- कमजोर पासवर्ड
- नियमित अपडेट का अभाव
- कर्मचारियों में जागरूकता की कमी
- छोटे मत्स्य उद्यमों में सीमित बजट
- असुरक्षित एवं सार्वजनिक वाईफाई (Wi-Fi) का उपयोग
- उपकरणों में प्रबल सुरक्षा का अभाव

साइबर सुरक्षा के तकनीकी समाधान

कृत्रिम बुद्धिमत्ता

एआई आधारित सुरक्षा प्रणालियाँ नेटवर्क में होने वाली असामान्य गतिविधियों का विश्लेषण कर संभावित साइबर हमलों की प्रारंभिक अवस्था में पहचान कर सकती हैं। मशीन लर्निंग एल्गोरिद्म सामान्य और असामान्य नेटवर्क व्यवहार में अंतर पहचानकर स्वतः चेतावनी प्रदान करते हैं। मत्स्य प्रबंधन में एआई का उपयोग केवल उत्पादन बढ़ाने तक सीमित नहीं है, बल्कि साइबर सुरक्षा को भी सुदृढ़ करता है।

ब्लॉकचेन

ब्लॉकचेन एक विकेन्द्रीकृत डिजिटल बहीखाता तकनीक है जिसमें दर्ज जानकारी को बिना अनुमति के परिवर्तित करना अत्यंत कठिन है। मत्स्य उद्योग में इसका उपयोग निम्न कार्यों में किया जा सकता है—

- मछलियों की उत्पत्ति
- अवैध मत्स्य शिकार की रोकथाम
- गुणवत्ता प्रमाणीकरण
- सुरक्षित डिजिटल अभिलेख
- आपूर्ति श्रृंखला की पारदर्शिता

ब्लॉकचेन एवं आईओटी का संयुक्त उपयोग मत्स्य उत्पादों की पकड़ से लेकर उपभोक्ता तक के प्रत्येक चरण का सुरक्षित डिजिटल रिकॉर्ड तैयार कर सकता है।

क्लाउड सुरक्षा

क्लाउड आधारित डेटा संग्रहण से बड़े पैमाने पर मत्स्य डेटा को सुरक्षित रखा जा सकता है। क्लाउड सुरक्षा के लिए निम्न उपाय आवश्यक हैं—

- डेटा एन्क्रिप्शन
- नियमित बैकअप
- एक्सेस कंट्रोल
- मल्टी-फैक्टर प्रमाणीकरण
- क्लाउड ऑडिट

मल्टी-फैक्टर ऑथेंटिकेशन

केवल पासवर्ड पर्याप्त नहीं है। ओटीपी, बायोमेट्रिक अथवा अन्य हार्डवेयर सुरक्षा कुंजी का उपयोग कर अनाधिकृत पहुँच को काफी हद तक रोका जा सकता है।

नेटवर्क सुरक्षा

नेटवर्क सुरक्षा हेतु निम्नलिखित उपकरणों/ तकनीकों का उपयोग किया जाना चाहिए।

- फायरवाल/ एकीकृत खतरा प्रबंधन (Firewall/ Unified Threat Management)
- घुसपैठ पहचान प्रणाली (Intrusion Detection System)
- घुसपैठ रोकथाम प्रणाली (Intrusion Prevention System)
- वर्चुअल निजी नेटवर्क (Virtual Private Network)
- शून्य विश्वास आर्किटेक्चर (Zero Trust Architecture)

मत्स्य पालन एवं उद्योग क्षेत्र में साइबर सुरक्षा हेतु सर्वोत्तम अभ्यास

- नियमित डेटा बैकअप
- मजबूत पासवर्ड नीति
- एंटीवायरस का उपयोग
- समय-समय पर सॉफ्टवेयर अपडेट
- फायरवॉल की स्थापना
- कर्मचारियों का प्रशिक्षण
- साइबर सुरक्षा ऑडिट
- नेटवर्क मॉनिटरिंग

चित्र–1 : स्मार्ट मत्स्य प्रणाली में साइबर सुरक्षा ढाँचा

आईओटी युक्त सेंसर (IoT Sensors)
↓
सुरक्षित गेटवे (Secure Gateway)
↓
एआई (AI) आधारित खतरे का पता लगाना
(Threat Detection)
↓
आईडीएस एवं आईपीएस से एकीकृत फायरवाल
(Firewall integrated with IDS/IPS)
↓
ब्लाकचैन (Blockchain) आधारित सुरक्षित रिकॉर्ड
↓
क्लाउड डेटाबेस (Cloud Database - Encrypted))
↓
डैशबोर्ड (Dashboard) एवं मोबाइल एप्प (Mobile App)

भारत में साइबर सुरक्षा की वर्तमान स्थिति

भारत विश्व के प्रमुख मत्स्य उत्पादक देशों में से एक है तथा अंतर्देशीय और समुद्री दोनों प्रकार के मत्स्य संसाधनों में समृद्ध है। भारत सरकार द्वारा **प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना**, **डिजिटल इंडिया**, **ई-गवर्नेंस** तथा **ब्लू इकोनॉमी** जैसी पहलों के माध्यम से मत्स्य क्षेत्र का तीव्र डिजिटलीकरण किया जा रहा है और इससे मत्स्य किसानों का पंजीकरण, मत्स्य उत्पादन का अभिलेखीकरण, मौसम संबंधी सूचना, रोग निगरानी, बाजार सूचना तथा आपूर्ति श्रृंखला का डिजिटलीकरण संभव हो रहा है ।

डिजिटल प्रणालियों के विस्तार के साथ-साथ साइबर सुरक्षा की आवश्यकता भी बढ़ी है। यदि मत्स्य उत्पादन, मत्स्य बीज वितरण, निर्यात डेटा, भुगतान प्रणाली अथवा अनुसंधान संबंधी डेटाबेस पर साइबर हमला होता है, तो निश्चित तौर पर इसका प्रभाव केवल किसी एक संस्था तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि सम्पूर्ण मत्स्य अर्थव्यवस्था प्रभावित हो सकती है। भारत में अनेक अनुसंधान संस्थान, विश्वविद्यालय तथा सरकारी एजेंसियाँ मत्स्य क्षेत्र में डिजिटल तकनीकों के सुरक्षित उपयोग पर कार्य कर रही हैं। भविष्य में एकीकृत साइबर सुरक्षा ढाँचा (Integrated Cyber Security Framework) विकसित करना अत्यंत आवश्यक होगा।

सरकारी पहल एवं नीतिगत उपाय

भारत सरकार तथा विभिन्न संस्थानों द्वारा साइबर सुरक्षा सुदृढ़ और मजबूत करने के लिए अनेक प्रयास किए जा रहे हैं।

प्रमुख पहलें

1. **भारतीय कंप्यूटर इमरजेंसी प्रतिक्रिया** टीम द्वारा साइबर घटनाओं की निगरानी एवं दिशा-निर्देश।
2. **राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा नीति** के माध्यम से डिजिटल अवसंरचना की सुरक्षा।
3. **डिजिटल भारत कार्यक्रम** के अंतर्गत सुरक्षित ई-गवर्नेंस प्रणाली।
4. **प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना** के माध्यम से डिजिटल मत्स्य प्रबंधन।
5. **राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म** के विकास की दिशा में प्रयास।
6. **साइबर स्वच्छता केंद्र** द्वारा मलवेयर हटाने एवं साइबर जागरूकता को बढ़ावा।
7. राज्य स्तर पर ई-मत्स्य सेवाओं एवं डिजिटल डेटाबेस का विकास।

इन पहलों के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए साइबर सुरक्षा प्रशिक्षण, तकनीकी मानकीकरण तथा संस्थागत समन्वय आवश्यक है।

मत्स्य क्षेत्र में साइबर सुरक्षा की भविष्य की संभावनाएँ

मत्स्य क्षेत्र में डिजिटल परिवर्तन अभी प्रारंभिक अवस्था में है। आगामी वर्षों में निम्नलिखित तकनीकों का महत्व और अधिक बढ़ेगा—

कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित साइबर सुरक्षा

एआई युक्त सुरक्षा प्रणालियाँ नेटवर्क ट्रैफिक का निरंतर विश्लेषण करके असामान्य गतिविधियों की पहचान करेंगी तथा संभावित साइबर हमलों को स्वतः रोक सकेंगी।

डिजिटल ट्विन

मत्स्य क्षेत्रों का वर्चुअल मॉडल तैयार कर साइबर हमलों तथा तकनीकी विफलताओं का पूर्व परीक्षण किया जा सकेगा।

क्वांटम क्रिप्टोग्राफी

भविष्य में संवेदनशील वैज्ञानिक एवं व्यावसायिक डेटा की सुरक्षा हेतु क्वांटम आधारित इनक्रिप्सन तकनीकों का उपयोग बढ़ेगा।

ब्लॉकचेन आधारित स्मार्ट आपूर्ति श्रृंखला

उत्पादन से उपभोक्ता तक के प्रत्येक चरण का अपरिवर्तनीय डिजिटल रिकॉर्ड उपलब्ध होगा, जिससे खाद्य सुरक्षा, गुणवत्ता नियंत्रण एवं निर्यात विश्वसनीयता में सुधार होगा।

5G एवं एज कम्प्यूटिंग

5G नेटवर्क और एज कम्प्यूटिंग के माध्यम से सेंसर डेटा का तीव्र एवं सुरक्षित विश्लेषण संभव होगा तथा विलंब (Latency) में कमी आएगी।

साइबर जोखिम पूर्वानुमान प्रणाली

भविष्य में एआई एवं वृहद् डेटा के माध्यम से साइबर जोखिमों का पूर्वानुमान लगाकर समय रहते सुरक्षा उपाय किए जा सकेंगे।

इन तकनीकों से मत्स्य उत्पादन अधिक सुरक्षित, पारदर्शी तथा टिकाऊ बनाया जा सकेगा।

नीतिगत सुझाव

मत्स्य क्षेत्र में साइबर सुरक्षा को सुदृढ़ करने हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं—

1. प्रत्येक मत्स्य संस्थान में साइबर सुरक्षा नीति लागू की जाए।
2. सभी डिजिटल उपकरणों का नियमित और सही तरीके से सुरक्षा ऑडिट कराया जाए।
3. कर्मचारियों एवं मत्स्य किसानों के लिए साइबर सुरक्षा प्रशिक्षण अनिवार्य बनाया जाए।
4. इंटरनेट ऑफ थिंग्स उपकरणों में सुरक्षित प्रमाणीकरण एवं नियमित फर्मवेयर अपडेट सुनिश्चित किए जाएँ।
5. सभी संवेदनशील एवं गोपनीय डेटा को इनक्रिप्टेड रूप में संग्रहीत किया जाए।
6. क्लाउड आधारित सुरक्षित बैकअप प्रणाली विकसित की जाए।
7. ब्लॉकचेन आधारित मत्स्य अनुरक्षण क्षमता प्रणाली को बढ़ावा दिया जाए।
8. CERT-In तथा मत्स्य संस्थानों के बीच समन्वित साइबर प्रतिक्रिया तंत्र विकसित किया जाए।
9. विश्वविद्यालयों में मत्स्य साइबर सुरक्षा विषय पर विशेष प्रशिक्षण एवं शोध को प्रोत्साहित किया जाए।
10. सार्वजनिक-निजी सहभागिता (PPP) के माध्यम से सुरक्षित डिजिटल अवसंरचना विकसित की जाए।

मत्स्य क्षेत्र में साइबर सुरक्षा को सुदृढ़ करने हेतु निम्नलिखित सुझाव उपयोगी हो सकते हैं—

1. प्रत्येक मत्स्य संस्थान में साइबर सुरक्षा नीति लागू की जाए।
2. कर्मचारियों को नियमित साइबर सुरक्षा प्रशिक्षण दिया जाए।
3. सभी डिजिटल प्रणालियों का समय-समय पर सुरक्षा परीक्षण कराया जाए।
4. IoT उपकरणों के लिए सुरक्षित प्रमाणीकरण अपनाया जाए।

5. डेटा का नियमित बैकअप लिया जाए।
6. क्लाउड आधारित सुरक्षित डेटा संग्रहण को बढ़ावा दिया जाए।
7. राष्ट्रीय स्तर पर मत्स्य साइबर सुरक्षा ढाँचा विकसित किया जाए।
8. अनुसंधान संस्थानों एवं उद्योगों के बीच सहयोग बढ़ाया जाए।
9. साइबर बीमा (Cyber Insurance) को प्रोत्साहित किया जाए।
10. कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित साइबर सुरक्षा समाधान अपनाए जाएँ।

डिजिटल परिवर्तन ने मत्स्य क्षेत्र को अधिक उत्पादक, पारदर्शी एवं आधुनिक बनाया है। स्मार्ट सेंसर, आईओटी, एआई, क्लाउड कंप्यूटिंग तथा ब्लॉकचेन जैसी तकनीकों ने मत्स्य पालन, संसाधन प्रबंधन तथा विपणन प्रणाली में क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। किंतु, इन तकनीकों के साथ साइबर हमलों का जोखिम भी बढ़ा है। डेटा चोरी, रैनसमवेयर, फिशिंग, मैलवेयर तथा आईओटी उपकरणों पर हमले उत्पाद, उत्पादन और व्यापार को प्रभावित कर सकते हैं।

इसलिए साइबर सुरक्षा को केवल सूचना प्रौद्योगिकी का विषय न मानकर मत्स्य क्षेत्र के सतत विकास का अनिवार्य अंग माना जाना चाहिए। मजबूत साइबर नीतियाँ, आधुनिक सुरक्षा तकनीकें, प्रशिक्षित मानव संसाधन, नियमित सुरक्षा ऑडिट तथा सरकारी सहयोग के माध्यम से मत्स्य पालन एवं उद्योग क्षेत्र को साइबर खतरों से सुरक्षित बनाया जा सकता है। यदि भारत डिजिटल मत्स्य प्रबंधन के साथ प्रभावी एवं सटीक साइबर सुरक्षा उपायों को अपनाता है, तो वह वैश्विक मत्स्य उद्योग में अपनी प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता को और अधिक सुदृढ़ कर सकता है तथा खाद्य सुरक्षा, आर्थिक विकास और निर्यात वृद्धि के लक्ष्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है।

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।

नरेंद्र मोदी

हिंदी सरल है, सहज है, सबकी है।

मानव जीवन में मछली की महत्ता के दृष्टिगत मछलियों का संरक्षण समय की आवश्यकता

प्रिया त्रिपाठी[1], अभिषेक कुमार सिंह[1], ब्रह्म प्रकाश[1] एवं अखिलेश कुमार मिश्र[2]

[1]भाकृअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

[2]भाकृअनुप – राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

मछली जल में रहने वाली एक अत्यंत महत्वपूर्ण जीव है। मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ मछलियों का मनुष्य से गहरा संबंध रहा है। नदियों, तालाबों, झीलों, समुद्रों और अन्य जलाशयों में पाई जाने वाली मछलियाँ मानव जीवन के लिए भोजन, रोजगार, आय और पर्यावरणीय संतुलन का महत्वपूर्ण आधार हैं। भारत जैसे विशाल देश में मत्स्य पालन लाखों लोगों की आजीविका का साधन है। आज मछली केवल भोजन का साधन मात्र ही नहीं रह गई है, अपितु यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था, पोषण सुरक्षा और जलीय-जैव विविधता का भी महत्वपूर्ण अवयव बन चुकी है।

पौष्टिक आहार के रूप में मछली

मछली मानव के लिए पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्धक भोजन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इसमें उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन पाया जाता है, जिससे शरीर के विकास, मांसपेशियों की मजबूती, वजन नियंत्रण, हड्डियों की सेहत, घाव के भरने तथा बेहतर क्यपचय जैसे कई आवश्यक लाभ मिलते हैं। प्रोटीन शरीर की कोशिकाओं तथा ऊतकों के निर्माण का मुख्य आधार है। मछली में कई आवश्यक विटामिन और खनिज भी पाए जाते हैं। मछलियों में ओमेगा-3 फैटी एसिड की भरपूर मात्रा पाई जाती है यह मुख्य रूप से ईपीए और डीएचए रूपों में होता है। मानव शरीर में ओमेगा-3 फैटी एसिड हृदय की धड़कन और रक्तचाप को नियंत्रित रखने, याददाश्त और मानसिक कार्यप्रणाली को बेहतर बनाने तथा शरीर में सूजन और जोड़ों के दर्द से राहत दिलाने जैसे विभिन्न महत्वपूर्ण कार्य करता है। सैल्मन, मैकेरल, सार्डिन तथा रोहू ओमेगा-3 फैटी एसिड से भरपूर प्रमुख मछलियाँ हैं। उपरोक्त पोषण गुणों के कारण से मछली हमारे संतुलित आहार का महत्वपूर्ण हिस्सा बन जाती है। बच्चों, युवाओं और वयस्कों के लिए उचित पोषण अत्यंत आवश्यक है। ऐसे में मछली प्रोटीन और अन्य पोषक तत्वों की पूर्ति में योगदान दे सकती है। हालांकि भोजन के रूप में मछली का सेवन हमेशा स्वच्छ और सुरक्षित स्रोत से किया जाना चाहिए।

मानव स्वास्थ्य में मछली का महत्व

मछली में पाए जाने वाले पोषक तत्व शरीर को स्वस्थ रखने में योगदान देते हैं। मछली का संतुलित सेवन शरीर को आवश्यक प्रोटीन और अन्य पोषक तत्व प्रदान करता है। मछली के विभिन्न भागों से प्राप्त तेल और अन्य उत्पादों का उपयोग खाद्य तथा औद्योगिक क्षेत्रों में भी किया जाता है। इस प्रकार मछली मानव जीवन में स्वास्थ्य और पोषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

रोजगार और आजीविका का महत्वपूर्ण साधन

भारत में बड़ी संख्या में लोग मछली पालन, मछली पकड़ने, मछली बेचने, परिवहन, भंडारण और प्रसंस्करण से जुड़े हुए हैं। मछुआरा समुदाय के लिए मछली उनकी मुख्य आजीविका का साधन है। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण क्षेत्रों में तालाबों और जलाशयों में मत्स्य पालन करके किसान अपनी आय बढ़ा सकते हैं।

मत्स्य पालन से केवल मछली पालने वाले लोगों को ही नहीं, बल्कि जाल बनाने वाले, नाव चलाने वाले, मछली बेचने वाले, परिवहन करने वाले और मछली प्रसंस्करण से जुड़े लोगों को भी रोजगार मिलता है। इस प्रकार यह एक बड़े रोजगार क्षेत्र का निर्माण करता है।

किसानों की आय बढ़ाने में मछली पालन की भूमिका एवं देश की अर्थव्यवस्था में योगदान

आज अनेक किसान पारंपरिक खेती के साथ-साथ मछली पालन को भी अपना रहे हैं। खेतों के पास बने तालाबों और अन्य जलाशयों में वैज्ञानिक तरीके से मछली पालन

किया जा सकता है। इससे कृषकों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। कई स्थानों पर मछली पालन को कृषि, पशुपालन और अन्य गतिविधियों के साथ जोड़कर आय के विभिन्न स्रोत विकसित किए जा रहे हैं। यदि मछली पालन वैज्ञानिक ढंग से किया जाए, तो जल, चारा और उपलब्ध संसाधनों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है। इससे ग्रामीण परिवारों की आर्थिक स्थिति मजबूत करने में सहायता मिलती है। मत्स्य पालन देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देता है। मछली और मछली से बने उत्पादों का देश के विभिन्न क्षेत्रों में व्यापार होता है। इसके अतिरिक्त, कुछ मत्स्य उत्पादों का विदेशों में भी निर्यात किया जाता है। इससे व्यापार को बढ़ावा मिलता है और लोगों को रोजगार के नवीन अवसर प्राप्त होते हैं। मत्स्य क्षेत्र के विकास से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलती है। यह क्षेत्र छोटे उत्पादकों, किसानों और स्थानीय व्यापारियों के लिए आय का महत्वपूर्ण साधन बन सकता है।

ग्रामीण विकास में मछली पालन में महिलाओं की भूमिका

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर सीमित होने के कारण मछली पालन का विशेष महत्व है। तालाब, झील और अन्य जल संसाधन ग्रामीण लोगों के लिए आय का साधन बन सकते हैं। छोटे स्तर पर मछली पालन शुरू करके ग्रामीण परिवार अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं। इससे ग्रामीण क्षेत्रों से रोजगार की तलाश में शहरों की ओर होने वाले पलायन को कम करने में भी सहायता मिल सकती है। मत्स्य क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। महिलाएँ मछली की सफाई, प्रसंस्करण, पैकिंग, बिक्री और छोटे स्तर के व्यापार में योगदान देती हैं। स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से महिलाएँ मछली से जुड़े विभिन्न कार्यों को अपनाकर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन सकती हैं। इस प्रकार मत्स्य क्षेत्र महिलाओं के लिए भी रोजगार और आय के अतिरिक्त अवसर सृजित करता है।

पर्यावरणीय संतुलन में वैज्ञानिक और शैक्षणिक महत्व

मछलियाँ जलीय पारिस्थितिकी तंत्र का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। वे जल में खाद्य श्रृंखला और जैविक संतुलन बनाए रखने में सहायता करती हैं। मछली की विभिन्न प्रजातियाँ जलाशयों की जैव-विविधता को समृद्ध बनाती हैं। किसी जलाशय में मछलियों की संख्या और विविधता उस जल-पर्यावरण की स्थिति के बारे में भी महत्वपूर्ण जानकारी दे सकती है। मछलियों के लिए मत्स्य पालन ऐसा होना चाहिए जिससे न सिर्फ वर्तमान पीढ़ी की सभी मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी हों और भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी जल संसाधन और मछली प्रजातियाँ सुरक्षित रहें। इसके लिए वैज्ञानिक और टिकाऊ मत्स्य पालन अति आवश्यक है। जल प्रदूषण को कम करना, प्राकृतिक जलाशयों का संरक्षण करना और मछली संसाधनों का संतुलित उपयोग करना मछलियों पर वैज्ञानिक अध्ययन और अनुसंधान के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। वैज्ञानिक मछलियों के जीवन-चक्र, प्रजनन, व्यवहार, भोजन और पर्यावरण के साथ उनके संबंधों का अध्ययन करते हैं। मछलियों के अध्ययन से जलीय जीव-जगत और जैव-विविधता को समझने में सहायता मिलती है। विद्यार्थियों के लिए भी मछलियाँ जीव-विज्ञान और पर्यावरण अध्ययन का महत्वपूर्ण विषय हैं।

मत्स्य पालन के विकास हेतु आवश्यक कदम

मत्स्य पालन के विकास के लिए वैज्ञानिक तकनीकों और आधुनिक संसाधनों का उपयोग आवश्यक है। मछली पालकों को प्रशिक्षण, गुणवत्तापूर्ण मत्स्य बीज, उचित आहार, ऋण, बीमा और सरकारी योजनाओं का लाभ मिलना चाहिए। जलाशयों का संरक्षण, जल प्रदूषण पर नियंत्रण, बेहतर भंडारण एवं परिवहन व्यवस्था तथा उचित बाजार सुविधा उपलब्ध कराना आवश्यक है। इन कदमों से ग्रामीण क्षेत्रों में न सिर्फ रोजगार बढ़ेगा, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था भी मजबूत होगी।

एक्वारियम में मछलियों का प्रजनन प्रबंधन

एक्वारियम में मछलियों का प्रजनन प्रबंधन एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से मछलियों की संख्या बढ़ाने, स्वस्थ संतानों का विकास करने और विभिन्न प्रजातियों को सुरक्षित रखने का प्रयास किया जाता है। एक्वारियम में मछलियों का सफल प्रजनन केवल नर और मादा मछलियों को एक साथ रखने से संभव नहीं होता, बल्कि इसके लिए जल की गुणवत्ता, तापमान, ऑक्सीजन, प्रकाश, भोजन और प्रजनन के लिए उपयुक्त वातावरण का विशेष ध्यान रखना भी आवश्यक होता है।

प्रजनन योग्य मछलियों का चयन

एक्वारियम में प्रजनन के लिए स्वस्थ, सक्रिय और परिपक्व नर तथा मादा मछलियों का चयन किया जाना चाहिए। कमजोर, रोगी या अत्यधिक तनावग्रस्त मछलियों को प्रजनन के लिए नहीं चुनना चाहिए। मछलियों की प्रजाति के अनुसार, नर और मादा की पहचान की जाती है। कुछ प्रजातियों में नर अधिक चमकीले रंग के होते हैं, जबकि मादा का शरीर अपेक्षाकृत बड़ा और गोल हो सकता है। स्वस्थ माता-पिता से सामान्यतः मजबूत और स्वस्थ संतानों के विकास की संभावना अधिक होती है।

जल की गुणवत्ता का प्रबंधन

प्रजनन के लिए स्वच्छ और गुणवत्तापूर्ण जल अत्यंत आवश्यक है। एक्वारियम के पानी में गंदगी, अत्यधिक अपशिष्ट या हानिकारक पदार्थ होने पर मछलियों के स्वास्थ्य और प्रजनन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए समय-समय पर पानी की सफाई और आंशिक जल परिवर्तन किया जाना चाहिए। जल में पर्याप्त ऑक्सीजन बनाए रखने के लिए उचित वायु संचार की व्यवस्था भी आवश्यक होती है।

उचित तापमान और वातावरण

मछलियों के प्रजनन पर जल का तापमान महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। विभिन्न मछली प्रजातियों के लिए अलग-अलग तापमान उपयुक्त हो सकता है। इसलिए प्रजाति की आवश्यकताओं के अनुसार तापमान बनाए रखना चाहिए। अचानक तापमान परिवर्तन से मछलियों को तनाव हो सकता है और प्रजनन प्रक्रिया प्रभावित हो सकती है। एक्वारियम में पौधे, पत्थर, गुफानुमा संरचनाएँ या अन्य सुरक्षित स्थान उपलब्ध कराने से मछलियों को प्राकृतिक वातावरण जैसा अनुभव मिल सकता है।

संतुलित आहार की व्यवस्था

प्रजनन से पहले और प्रजनन के दौरान मछलियों को पौष्टिक और संतुलित आहार देना आवश्यक है। उचित आहार से मछलियों की शारीरिक क्षमता और प्रजनन क्षमता बेहतर होती है। भोजन की मात्रा इतनी होनी चाहिए कि मछलियाँ उसे आसानी से खा सकें और एक्वारियम में भोजन का अवशेष जमा न हो। अधिक भोजन से जल प्रदूषित हो सकता है, जो मछलियों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भी सिद्ध हो सकता है।

अंडों और नवजात मछलियों की सुरक्षा

कई मछली प्रजातियाँ अंडे देती हैं, जबकि कुछ प्रजातियाँ सीधे बच्चों को जन्म देती हैं। अंडे देने वाली मछलियों में अंडों की सुरक्षा बहुत महत्वपूर्ण होती है। कई बार बड़ी मछलियाँ अंडों या नवजात मछलियों को खा सकती हैं। इसलिए आवश्यकतानुसार अंडों या नवजात मछलियों को अलग प्रजनन टैंक में रखा जा सकता है। नवजात मछलियों को छोटे आकार का उपयुक्त भोजन देना चाहिए, ताकि उनका विकास भली-भांति हो सके।

प्रजनन टैंक की व्यवस्था

प्रजनन के लिए अलग टैंक की व्यवस्था करना अधिक प्रभावी माना जाता है। इसमें पानी की गुणवत्ता, तापमान और भोजन का बेहतर नियंत्रण किया जा सकता है। प्रजनन टैंक में तेज जल प्रवाह से बचना चाहिए, क्योंकि इससे अंडों या छोटे बच्चों को नुकसान हो सकता है। टैंक में ऐसे स्थान बनाए जा सकते हैं जहाँ मछलियाँ अंडे दे सकें और नवजात मछलियों को छिपने के लिए सुरक्षित स्थान भी मिल सके।

रोग नियंत्रण और स्वच्छता

प्रजनन के दौरान मछलियाँ रोगों के प्रति संवेदनशील हो जाती हैं। इसलिए एक्वारियम की नियमित सफाई और निरीक्षण आवश्यक है। किसी बीमार मछली को स्वस्थ मछलियों से अलग रखना चाहिए, ताकि रोग का संक्रमण अन्य मछलियों में न फैले। स्वच्छ जल और उचित देखभाल से मछलियों में होने वाले रोगों की संभावना को कम किया जा सकता है।

प्रजनन के बाद देखभाल

प्रजनन के बाद नर और मादा मछलियों तथा नवजात मछलियों की विशेष देखभाल करनी चाहिए। नवजात मछलियों को पर्याप्त भोजन और सुरक्षित वातावरण प्रदान करना आवश्यक है। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं, उन्हें उनकी प्रजाति और आकार के अनुसार उचित टैंक में स्थानांतरित किया जा सकता है। इस दौरान पानी की गुणवत्ता और भोजन की नियमित निगरानी आवश्यक होती है।

मछलियों का संरक्षण क्यों आवश्यक है?

मछलियाँ जलीय पारिस्थितिकी तंत्र का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अवयव हैं। वे जलाशयों में खाद्य श्रृंखला और प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। मछलियों की अनेक प्रजातियाँ जल-पर्यावरण की जैव-विविधता को समृद्ध बनाती हैं। इसलिए मछलियों का संरक्षण केवल मछलियों को बचाने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह जल स्रोतों, जलीय जीव-जंतुओं और सम्पूर्ण पर्यावरण के संरक्षण से जुड़ा हुआ है। आज नदियों, तालाबों, झीलों और अन्य जल स्रोतों में बढ़ता प्रदूषण मछलियों के लिए एक बड़ी समस्या बन गया है। कारखानों का रासायनिक अपशिष्ट, घरेलू गंदा पानी, प्लास्टिक और अन्य कचरा जल स्रोतों को प्रदूषित कर रहे हैं। प्रदूषित जल में रहने से मछलियों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है और कई बार उनकी अकाल मृत्यु भी हो जाती है। इसलिए जल स्रोतों में कचरा और हानिकारक रसायन डालने पर रोक लगाना आवश्यक है।

मछलियों के संरक्षण के लिए अत्यधिक और अवैज्ञानिक ढंग से मछली पकड़ने पर भी नियंत्रण किया जाना अत्यंत आवश्यक है। प्रजनन के मौसम में अत्यधिक मछली पकड़ने से मछलियों की संख्या तेजी से कम हो सकती है। इसी प्रकार छोटी मछलियों को पकड़ने से भविष्य में मछलियों की संख्या और प्रजातियों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए मछली पकड़ने के लिए बनाए गए नियमों का कड़ाई से पालन करना चाहिए और प्रजनन काल में मछली पकड़ने पर प्रतिबंध को सख्ती से लागू करना चाहिए। मछलियों के प्राकृतिक आवासों का संरक्षण भी बहुत आवश्यक है। तालाबों, नदियों, झीलों और आर्द्रभूमियों को अतिक्रमण और प्रदूषण से बचाया जाना चाहिए। जलाशयों में पर्याप्त स्वच्छ जल और प्राकृतिक वातावरण बनाए रखना चाहिए, ताकि मछलियाँ सुरक्षित रूप से रह सकें और प्रजनन कर सकें। विलुप्त होने के खतरे वाली मछली प्रजातियों के संरक्षण के लिए विशेष प्रयास किए जाने चाहिए। मछलियों का संरक्षण आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। लाखों लोग मछली पकड़ने, मछली पालन, मछली के व्यापार और प्रसंस्करण से अपनी आजीविका प्राप्त करते हैं। यदि मछलियों की संख्या लगातार कम होती रही, तो इन लोगों की आय और रोजगार पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इसलिए मछली संसाधनों का संतुलित और वैज्ञानिक उपयोग अत्यंत आवश्यक है। अतः मछलियों का संरक्षण मानव जीवन, पर्यावरण, जैव-विविधता और अर्थव्यवस्था, सभी के लिए नितांत आवश्यक है। जल स्रोतों को स्वच्छ रखना, अत्यधिक मछली पकड़ने पर नियंत्रण करना, छोटी मछलियों और प्रजनन काल की मछलियों की रक्षा करना तथा वैज्ञानिक और टिकाऊ मत्स्य पालन को बढ़ावा देना हम सभी की जिम्मेदारी है। मछलियों और उनके प्राकृतिक आवासों का संरक्षण करके ही हम आने वाली पीढ़ियों के लिए स्वस्थ जल-पर्यावरण और समृद्ध मत्स्य संसाधन सुरक्षित रख सकते हैं।

अंततः कहा जा सकता है कि मानव जीवन में मछली का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। मछली पौष्टिक भोजन का स्रोत होने के साथ-साथ लाखों लोगों के लिए रोजगार और आजीविका का साधन है। यह ग्रामीण विकास, किसानों की आय, महिलाओं के रोजगार और देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती है। इसके साथ ही, मछलियाँ जल-पर्यावरण और जैव-विविधता के संतुलन को बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इसलिए मछलियों और उनके प्राकृतिक आवासों का संरक्षण करना हम सभी की जिम्मेदारी है। वैज्ञानिक और टिकाऊ मत्स्य पालन को बढ़ावा देकर हम मानव जीवन, अर्थव्यवस्था और पर्यावरण—तीनों के लिए बेहतर भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

हिंदी राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है।

डॉ. संपूर्णानंद

हर्बल आहार संवर्धक: मछलियों के स्वास्थ्य और तेज़ विकास के लिए प्राकृतिक उपाय

विशाल सोनी, रवि कुमार एवं वैभव त्रिपाठी

[1]मत्स्य विज्ञान महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मत्स्य पालन (एक्वाकल्चर) आज 'नीली क्रांति' का मुख्य आधार है, जो देश में प्रोटीन की बढ़ती मांग को पूरा करने का एक प्रमुख स्रोत बन गया है। लेकिन इस उद्योग के तीव्र विस्तार के साथ एक गंभीर चुनौती सामने आई है: अधिक घनत्व में पाली जाने वाली मछलियों को स्वस्थ कैसे रखा जाए। अधिक घनत्व वाले पालन के कारण मछलियाँ तनावग्रस्त रहती हैं, जिससे उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर हो जाती है और बीमारियाँ तेजी से फैलती हैं। अतीत में, इन बीमारियों पर काबू पाने के लिए एंटीबायोटिक दवाओं और रासायनिक कीटनाशकों का भारी मात्रा में इस्तेमाल किया जाता था। परंतु, यह समाधान स्वयं एक गंभीर समस्या एंटीबायोटिक प्रतिरोध को जन्म दे रहा था। साथ ही, इन रसायनों के अवशेष मछलियों के शरीर में जमा हो जाते हैं, जो मनुष्यों के लिए स्वास्थ्य जोखिम पैदा करते हैं और पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं। ऐसे में, एक सुरक्षित, टिकाऊ और अत्यंत प्रभावी विकल्प हमारे सामने मौजूद है मछली पालन में हर्बल एवं प्राकृतिक आहार संवर्धक। यह हमारे पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक विज्ञान का अद्भुत संगम है, जो न केवल मछलियों को रोग-मुक्त रखता है बल्कि उनकी वृद्धि दर और समग्र स्वास्थ्य को भी बेहतर बनाता है। यह लेख 'हरित एक्वाकल्चर' के इन्हीं रहस्यों पर प्रकाश डालता है।

हर्बल आहार संवर्धक कैसे काम करते हैं: वैज्ञानिक आधार

सबसे पहले यह समझना जरूरी है कि ये प्राकृतिक पदार्थ मछली के शरीर पर कैसे प्रभाव डालते हैं। यह कोई जादू नहीं, बल्कि ठोस वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है।

प्रतिरक्षा प्रणाली को सक्रिय करना:

लहसुन, अश्वगंधा और गुड़मार जैसी जड़ी-बूटियों में मौजूद सक्रिय यौगिक (जैसे एलिसिन और विथानोलाइड्स) मछली की प्रतिरक्षा प्रणाली को उत्तेजित करते हैं। ये यौगिक लिम्फोसाइट्स और मैक्रोफेज जैसी प्रतिरक्षा कोशिकाओं को सक्रिय करते हैं, जो रोगजनक बैक्टीरिया और वायरस पर प्रभावी हमला करके मछली को बीमारियों से बचाते हैं।

सूक्ष्मजीव-रोधी प्रभाव:

नीम, तुलसी, और हल्दी जैसी जड़ी-बूटियाँ अपने शक्तिशाली सूक्ष्मजीव-रोधी गुणों के लिए जानी जाती हैं। इनमें मौजूद यौगिक (जैसे निम्बिडिन, यूजेनॉल और करक्यूमिन) हानिकारक बैक्टीरिया, वायरस और फंगस की कोशिका झिल्ली को नष्ट कर देते हैं या उनके विकास को रोकते हैं।

पाचन क्षमता एवं पोषण में सुधार:

अदरक, मेथी और प्रोबायोटिक्स जैसे प्राकृतिक उत्पाद मछली के पाचन तंत्र में पाचक एंजाइमों के उत्पादन को बढ़ावा देते हैं। इससे भोजन का बेहतर पाचन होता है और पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ता है। परिणामस्वरूप, मछली की वृद्धि दर और फीड रूपांतरण अनुपात (FCR) में सुधार होता है, बेहतर FCR का मतलब है कम चारे से अधिक वृद्धि, जिसका सीधा लाभ मछली पालक को अधिक उत्पादन के रूप में मिलता है।

ऑक्सीकरण-रोधी (एंटी-ऑक्सीडेंट) गुण

तनाव और प्रदूषण के कारण मछली के शरीर में हानिकारक फ्री रेडिकल्स बनते हैं। हल्दी और तुलसी जैसी जड़ी-बूटियाँ एंटी-ऑक्सीडेंट से भरपूर होती हैं, जो इन फ्री रेडिकल्स को नष्ट करके कोशिकाओं को क्षति से बचाती हैं और समग्र स्वास्थ्य में सुधार करती हैं।

तनाव कम करना

ऊँचे घनत्व, ऑक्सीजन की कमी, या तापमान में उतार-चढ़ाव जैसी स्थितियाँ मछलियों में तनाव का कारण बनती हैं।

एलोवेरा और जटामांसी जैसे प्राकृतिक संवर्धक कोर्टिसोल जैसे तनाव हार्मोन के स्तर को कम करने में मदद करते हैं, जिससे मछलियाँ अधिक स्वस्थ और रोग प्रतिरोधी बनती हैं।

सारणी 1: पारंपरिक बनाम प्राकृतिक पद्धति: तुलनात्मक विश्लेषण

पहलू	पारंपरिक (रासायनिक/ एंटीबायोटिक)	प्राकृतिक (हर्बल एडिटिव्स)
प्रभाव	त्वरित, लेकिन अल्पकालिक	धीमा, लेकिन दीर्घकालिक और स्थायी
अवशेष	मछली और पर्यावरण में हानिकारक अवशेष छोड़ते हैं	कोई हानिकारक अवशेष नहीं
प्रतिरोध	रोगजनकों में प्रतिरोध क्षमता विकसित होती है	प्रतिरोध की संभावना बहुत कम
लागत	महँगे, बार-बार उपयोग की आवश्यकता	स्थानीय स्तर पर उपलब्ध, कम लागत
टिकाऊपन	पर्यावरण के लिए हानिकारक	पर्यावरण के अनुकूल और टिकाऊ

मछली पालन में उपयोगी प्रमुख हर्बल संवर्धक

अब हम उन प्रमुख जड़ी-बूटियों और प्राकृतिक पदार्थों के बारे में जानते हैं जो मछली पालन में लाभकारी सिद्ध हो सकते हैं।

नीम: नीम एक शक्तिशाली जीवाणुरोधी, एंटीवायरल, एंटीफंगल और एंटीपैरासिटिक पौधा है। यह बाहरी परजीवियों (जैसे जूं, लर्निया), फंगल संक्रमण और एरोमोनास जैसे बैक्टीरिया के खिलाफ अत्यंत प्रभावी है।

- **उपयोग विधि:** सूखी नीम की पत्तियों का बारीक पाउडर बनाकर फीड में 1-2% की दर से मिलाएँ।

हल्दी: हल्दी में मौजूद करक्यूमिन एक शक्तिशाली सूजनरोधी, एंटीऑक्सीडेंट और जीवाणुरोधी घटक है। यह लीवर और आंतों के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है और मछलियों को तनाव से बचाता है।

- **उपयोग विधि:** सूखी हल्दी का पाउडर फीड के साथ 0.5% से 1% की दर से मिलाएँ।

तुलसी: तुलसी एक 'एडाप्टोजेन' है, अर्थात यह शरीर को तनाव के अनुकूल बनाने में मदद करती है। इसमें मौजूद यूजेनॉल एक प्रभावी जीवाणुरोधी यौगिक है।

- **उपयोग विधि:** तुलसी की सूखी पत्तियों का पाउडर 1-1.5% की दर से फीड में मिलाएँ।

प्रोबायोटिक्स: प्रोबायोटिक्स लाभकारी सूक्ष्मजीव, जैसे लैक्टोबैसिलस, होते हैं जो आंत में पहुँचकर हानिकारक बैक्टीरिया की जगह ले लेते हैं। मछली पालन में यह पाचन में सुधार करते हैं, आंत की परत को मजबूत बनाते हैं और विटामिन संश्लेषण को बढ़ाते हैं, जिससे बीमारियाँ कम होती हैं। उपयोग का सबसे आसान तरीका है ताजा दही या छाछ को फीड में मिलाना। इसके अलावा बाजार में प्रोबायोटिक पाउडर भी उपलब्ध हैं, जिन्हें निर्देशानुसार दिया जा सकता है।

सारणी 2: प्रमुख जड़ी-बूटियाँ, सक्रिय घटक एवं प्रभाव

जड़ी-बूटी	सक्रिय घटक	प्रमुख प्रभाव	अनुशंसित मात्रा (%)
लहसुन	एलिसिन	प्रतिरक्षा वृद्धि, जीवाणुरोधी	1–2
हल्दी	करक्यूमिन	सूजनरोधी, एंटीऑक्सीडेंट	0.5–1
तुलसी	यूजेनॉल	तनावरोधी, रोग नियंत्रण	1–1.5
नीम	निम्बिडिन	परजीवी एवं फफूंद नियंत्रण	1–2
अदरक	जिंजरॉल	पाचन सुधारक	1

व्यावहारिक मार्गदर्शिका: अपने फार्म पर कार्यान्वयन

चरण 1: तैयारी

- **पाउडर:** जड़ी-बूटियों की पत्तियों या जड़ों को छाया में सुखाकर बारीक पिस लें और एयरटाइट डिब्बे में स्टोर करें।
- **अर्क:** पत्तियों/जड़ों को पानी में उबालकर गाढ़ा अर्क बनाएँ, जिसे सीधे फीड पर स्प्रे किया जा सकता है।

चरण 2: मात्रा निर्धारण एवं मिश्रण

- **मात्रा:** आमतौर पर फीड के कुल वजन का 1% से 2% हर्बल पाउडर प्रभावी रहता है। **उदाहरण:** 1 किलोग्राम फीड में 10 से 20 ग्राम पाउडर। शुरुआत 0.5% (5 ग्राम/किलो) से करें और धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाएँ।
- **मिश्रण विधि:** फीड पेलेट्स लें, उसमें निर्धारित मात्रा में पाउडर डालें। फीड पर थोड़ा पानी या मछली तेल (1-2 मिली/किलो) का हल्का स्प्रे करें ताकि पाउडर अच्छी तरह चिपक जाए। सभी सामग्री को अच्छी तरह मिलाएँ और तुरंत खिलाएँ।

चरण 3: निगरानी एवं सावधानियाँ

- नई फीड शुरू करने के बाद पहले सप्ताह तक मछलियों के व्यवहार और स्वास्थ्य पर नज़र रखें।
- पानी की गुणवत्ता (pH, ऑक्सीजन) बनाए रखें।
- हमेशा ताज़ी एवं उच्च गुणवत्ता वाली जड़ी-बूटियों का ही प्रयोग करें।

सफलता के उदाहरण

आंध्र प्रदेश: एक झींगा फार्म ने एंटीबायोटिक्स का प्रयोग बंद कर लहसुन और हल्दी के अर्क का इस्तेमाल शुरू किया। परिणामस्वरूप, वाइट स्पॉट बीमारी की घटनाओं में उल्लेखनीय कमी आई और उत्पादन की गुणवत्ता बढ़ने से निर्यातकों को बेहतर मूल्य प्राप्त हुआ।

- **बिहार:** एक छोटे स्तर के मछली पालक ने रोहू और कतला मछलियों के आहार में नीम पाउडर और दही का इस्तेमाल किया। इससे बीमारियों में कमी आई, दवाई पर होने वाला खर्च बचा और मछलियों की वृद्धि दर में सुधार हुआ।

भविष्य की संभावनाएँ

औषधीय आहार संवर्धकों पर अनुसंधान तीव्र गति से प्रगति कर रहा है। भविष्य में: नैनो-औषधीय मिश्रण, फाइटोबायोटिक संयोजन और पूर्णतः प्राकृतिक हर्बल फीड मछली पालन को अधिक वैज्ञानिक, पर्यावरण-सम्मत और आर्थिक रूप से लाभकारी बनाएँगे। यह पहल हरित मत्स्य पालन की दिशा में एक सशक्त कदम होगी, जो सुरक्षित, स्वच्छ और टिकाऊ उत्पादन सुनिश्चित करेगी।

हर्बल और प्राकृतिक फीड एडिटिव्स केवल एक विकल्प नहीं हैं, बल्कि आधुनिक मछली पालन की अनिवार्य आवश्यकता बनते जा रहे हैं। यह पद्धति प्रकृति के साथ सहयोग पर आधारित है और इसके तीन प्रमुख लाभ हैं:

आर्थिक लाभ: मछली पालकों का दवा पर खर्च घटता है, और मछली की वृद्धि एवं जीवित रहने की दर बढ़कर मुनाफा बढ़ता है।

स्वास्थ्य लाभ: उपभोक्ताओं को एंटीबायोटिक अवशेषों से मुक्त, स्वच्छ और पौष्टिक मछली मिलती है।

पर्यावरणीय लाभ: तालाब का पारिस्थितिकी तंत्र संतुलित रहता है, जल प्रदूषण नहीं होता और यह पूरी तरह टिकाऊ होता है। इसलिए, अब समय आ गया है कि हम पुराने तरीकों को छोड़कर इस वैज्ञानिक और प्रकृति-सम्मत ज्ञान को अपनाएँ और आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्वस्थ और समृद्ध विरासत का निर्माण करें।

हिंदी राष्ट्रीयता के मूल को सींचती है और उसे दृढ़ करती है।

पुरुषोत्तम दास टंडन

हर्मिट केकड़ा: प्रकृति के छोटे खानाबदोश

टीना जयकुमार टी.के., रेखा एम.यू. एवं टी. टी. अजीत कुमार

भाकृअनुप- राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

हर्मिट केकड़ा पैगुरोइडिया सुपरफैमिली के अनोमुरान डिकैपोड क्रस्टेशियंस से संबंधित होते हैं। ये अद्भुत जीव अपनी अनोखी आदतों के लिए जाने जाते हैं, जिसमें वे सुरक्षा के लिए खाली खोलों में रहते हैं। सच्चे केकड़ा के विपरीत, जिनके शरीर पर पूरी तरह कठोर बाहरी कंकाल होता है, हर्मिट केकड़ा का पेट मुलायम और असुरक्षित होता है। इसलिए, वे छोड़ता समुद्री गैस्ट्रोपोड्स के खोल ढूंढते हैं और उन्हें अपने चलते-फिरते घर बना लेते हैं।

शारीरिक विशेषताएँ और अनुकूलन

हर्मिट केकड़ा में उनकी उधार ली हुई जीवनशैली के अनुरूप कई अनुकूलन देखे जाते हैं। उनके शरीर एक खोल की सर्पिल संरचना में फिट होने के लिए मुड़े होते हैं, और उनके पिछले अंग खुद को खोल में मजबूती से बांधने के लिए संशोधित होते हैं। जब खतरा होता है, तो हर्मिट केकड़ा पूरी तरह से अपने खोल में छिप जाते हैं, और उनके मजबूत पंजे खोल के प्रवेश द्वार की रक्षा करते हैं।

वितरण

दुनिया भर में हर्मिट केकड़ा की 1,000 से अधिक प्रजातियाँ पाई जाती हैं। ये विभिन्न आवासों में पाई जाती हैं, जिनमें रेतीले या कीचड़ से भरी समुद्री तली और कभी-कभी जमीन और पेड़ों पर भी शामिल हैं। ये आवास उनके जीवित रहने के लिए आवश्यक सुरक्षा और संसाधन प्रदान करते हैं, जिससे वे विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों में फलते-फूलते हैं। समुद्री हर्मिट केकड़ा आमतौर पर उथले तटीय जल में पाए जाते हैं, जबकि स्थलीय प्रजातियाँ अक्सर समुद्र के पास नम, जंगलों वाले क्षेत्रों में रहती हैं, जहाँ उन्हें अपने गलफड़ों को नम रखने के लिए पानी की आवश्यकता होती है। ये वातावरण उन प्रजातियों के लिए आदर्श होते हैं जिन्हें अपने जीवन चक्र के लिए जलीय और स्थलीय दोनों परिस्थितियों की आवश्यकता होती है, जो उनकी अनुकूलता को दर्शाता है।

प्रजातियों की विविधता

कुल मिलाकर, लगभग 1200 हर्मिट केकड़ा की प्रजातियाँ पहचानी गई हैं, जो लगभग 135 जीनस और नौ परिवारों में विभाजित हैं। भारतीय तटीय और समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों में हर्मिट केकड़ा की समृद्ध विविधता है, जो स्थानीय जैव विविधता और पारिस्थितिक संतुलन में महत्वपूर्ण योगदान देती है। भारत में, कुल 112 हर्मिट केकड़ा की प्रजातियाँ, जो 26 जीनस और 5 परिवारों से संबंधित हैं, भारतीय जल में पाई गई हैं। विशेष रूप से, डायोजेनिडे परिवार में सबसे अधिक प्रजातियाँ पाई गई हैं, जिसमें 79 प्रजातियाँ दर्ज की गई हैं। विभिन्न क्षेत्रों में इनकी वितरण और विविधता भिन्न होती है। तमिलनाडु में हर्मिट केकड़ा की सबसे अधिक प्रजातियाँ दर्ज की गई हैं, जिसमें 53 प्रजातियाँ शामिल हैं, इसके बाद केरल में 50 प्रजातियाँ, अंडमान और निकोबार द्वीप में 46 प्रजातियाँ, पश्चिम बंगाल में 20 प्रजातियाँ और ओडिशा में 23 प्रजातियाँ दर्ज की गई हैं।

जीवन चक्र

हर्मिट केकड़ा का जीवन चक्र एक आकर्षक प्रक्रिया है, जिसमें कई चरण शामिल होते हैं, जो जलीय लार्वा रूपों से स्थलीय वयस्क जीवन तक संक्रमण करते हैं। हर चरण को समझना महत्वपूर्ण है ताकि इन जीवों के अनोखे जैविक अनुकूलन और उनके जीवित रहने के लिए आवश्यक पर्यावरणीय परिस्थितियों को पहचाना जा सके।

अंडा चरण

हर्मिट केकड़ा अपने जीवन चक्र की शुरुआत अंडों के रूप में करते हैं, जिन्हें आमतौर पर महासागर में छोड़ा जाता है। अंडे प्लवक में तैरते हैं और लगभग 30 दिनों के भीतर लार्वा चरण में विकसित हो जाते हैं।

लार्वा विकास

अंडों से निकलने के बाद, हर्मिट केकड़ा के लार्वा, जिन्हें ज़ोए कहा जाता है, कई विकासात्मक चरणों से गुजरते हैं। प्रारंभिक चरणों में, वे स्वतंत्र तैराक होते हैं और लगभग चार से पाँच लार्वा चरणों से गुजरते हैं, जिसके बाद वे मेगालोप्स कहलाते हैं। इस अवधि के दौरान, वे फाइटोप्लवक खाकर सक्रिय रूप से वृद्धि करते हैं।

किशोर चरण में संक्रमण

लार्वा चरणों के बाद, मेगालोप्स समुद्र तल पर बसते हैं और मेटामॉर्फोसिस से गुजरते हैं, जो उन्हें किशोर हर्मिट केकड़ा में बदल देता है। इस बिंदु पर, वे अपना पहला खोल खोजने लगते हैं—जो उनके जीवन का एक महत्वपूर्ण क्षण होता है, क्योंकि उन्हें अपनी मुलायम उदर की सुरक्षा के लिए एक खोल की आवश्यकता होती है।

वयस्कता और स्थलीय जीवन

एक बार जब वे एक उपयुक्त खोल पा लेते हैं, तो हर्मिट केकड़ा स्थलीय जीवन जी सकते हैं। वयस्कों के पास संशोधित गलफड़े होते हैं, जो उन्हें हवा में सांस लेने की अनुमति देते हैं, जो पानी के बाहर जीवन के लिए आवश्यक होता है। उचित देखभाल और वातावरण के साथ ये केकड़ा 40 वर्षों से अधिक जीवित रह सकते हैं।

प्रजनन प्रक्रिया

जब हर्मिट केकड़ा परिपक्व हो जाते हैं, तो वे प्रजनन में भाग लेते हैं। नर अक्सर मादा को अपने खोल पर टैप करके रिझाते हैं, जिसके बाद मादा अपने पेट पर स्पंज नामक एक द्रव्यमान में निषेचित अंडे ले जाती है, जब तक कि वे समुद्र में छोड़ने के लिए तैयार नहीं हो जाते। एक अकेली मादा एक बार में 1,000 से 30,000 अंडे तक उत्पन्न कर सकती है।

मोल्टिंग प्रक्रिया

हर्मिट केकड़ा जैसे-जैसे बढ़ते हैं, उन्हें समय-समय पर अपने एक्सोस्केलेटन को छोड़ने की आवश्यकता होती है, जिसे मोल्टिंग कहा जाता है, जो उनकी वृद्धि के लिए आवश्यक होता है। यह प्रक्रिया उनके विकास और स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है, जो उन्हें उनके बढ़ते शरीर के आकार को समायोजित करने के लिए अपने पुराने एक्सोस्केलेटन को एक बड़े से बदलने में सक्षम बनाती है।

एक उधार लिए हुए खोल में जीवन

उचित खोल ढूँढना हर्मिट केकड़ा के जीवन में बहुत महत्वपूर्ण होता है। जैसे-जैसे वे बढ़ते हैं, उन्हें समय-समय पर बड़े खोल ढूँढने पड़ते हैं। कभी-कभी यह प्रक्रिया व्यक्तियों के बीच प्रतिस्पर्धा का कारण बन सकती है, और कुछ प्रजातियों में हर्मिट केकड़ा को "वैकेंसी चेन" बनाते हुए देखा गया है। जब एक नया, बड़ा खोल उपलब्ध हो जाता है, तो केकड़ा की एक कतार बनती है, और प्रत्येक क्रैब अपनी बारी में एक बड़ा खोल चुनता है।

आहार और व्यवहार

हर्मिट केकड़ा सर्वाहारी जीव होते हैं और वे विभिन्न प्रकार के जैविक पदार्थ खाते हैं, जिनमें शैवाल, मरे हुए मछली, मृत पदार्थ और प्लवक शामिल हैं। वे अपने पारिस्थितिकी तंत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, मृत जैविक पदार्थों को साफ करके। स्थलीय हर्मिट केकड़ा फलों, सड़े हुए लकड़ी और पत्तियों का सेवन करते हैं।

सामाजिक व्यवहार के संदर्भ में, हर्मिट केकड़े कई अन्य क्रस्टेशियंस की तुलना में अधिक सांप्रदायिक होते हैं। विशेष रूप से, स्थलीय हर्मिट केकड़े बड़े समूहों में रहने के लिए जाने जाते हैं, जो अपने पंजों को आपस में रगड़कर ध्वनि के माध्यम से संचार करते हैं। यह सामाजिक संरचना शैल विनिमय और शिकारियों से सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण है।

पारिस्थितिक भूमिका

हर्मिट केकड़ा समुद्री और स्थलीय दोनों पारिस्थितिक तंत्रों के स्वास्थ्य में योगदान देते हैं। समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों में, वे डिट्रिटस को साफ करके कोरल रीफ और तटीय क्षेत्रों की सफाई करते हैं। जमीन पर, वे जैविक पदार्थों को विघटित करने में मदद करते हैं। हर्मिट केकड़े तटीय पारिस्थितिकी तंत्र में सफाईकर्मी के रूप में एक आवश्यक भूमिका निभाते हैं। वे खाद्य श्रृंखला के माध्यम से पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण और ऊर्जा प्रवाह की दर में तेजी लाते हैं, जिससे उनके आवासों के पारिस्थितिक संतुलन में योगदान होता है।

सांस्कृतिक महत्व

कुछ भारतीय तटीय क्षेत्रों में हर्मिट केकड़ों का महत्वपूर्ण सांस्कृतिक महत्व है। उदाहरण के लिए, लक्षद्वीप में, स्थानीय निवासी पारंपरिक रूप से हर्मिट केकड़ों का उपयोग करते हैं। अपने पारिस्थितिक महत्व के बावजूद, भारत में हर्मिट केकड़े पर्याप्त व्यावसायिक मूल्य नहीं रखते हैं और डिकैपोड क्रस्टेशियंस का एक दुर्लभ अध्ययन समूह बने हुए हैं।

खतरे

हर्मिट केकड़ों को विभिन्न प्रकार के खतरों का सामना करना पड़ता है जो उनकी आबादी और आवास पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। ये खतरे मानवीय गतिविधियों, पर्यावरणीय परिवर्तनों और पारिस्थितिक व्यवधानों से उत्पन्न होते हैं, जो इन अद्वितीय प्राणियों की रक्षा के लिए ठोस संरक्षण प्रयासों की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हैं।

पर्यावास का विनाश

तटीय विकास गतिविधियाँ, जैसे कि रिसॉर्ट्स और समुद्र तट की संपत्तियों का निर्माण, हर्मिट केकड़ों के लिए महत्वपूर्ण आवास विनाश का कारण बनता है। मैंग्रोव, मूंगा चट्टानों और अन्य प्राकृतिक संरचनाओं को हटाने से हर्मिट केकड़े की आबादी पर विनाशकारी प्रभाव पड़ सकता है। जैसे-जैसे उनके प्राकृतिक आवास बदल दिए जाते हैं या समाप्त हो जाते हैं, हर्मिट केकड़े अपने अस्तित्व के लिए आवश्यक आवश्यक संसाधन खो देते हैं।

प्रदूषण

प्रदूषण हर्मिट केकड़ों के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करता है, जिससे उनके स्वास्थ्य और उनके पर्यावरण की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कृषि क्षेत्रों से अपवाह, औद्योगिक निर्वहन और प्लास्टिक कचरा तटीय जल को दूषित कर सकता है जहां हर्मिट केकड़े निवास करते हैं, जिससे उनका पारिस्थितिकी तंत्र कमजोर हो जाता है।। प्लास्टिक प्रदूषण विशेष रूप से चिंताजनक है, क्योंकि हर्मिट केकड़े अक्सर प्लास्टिक की वस्तुओं को सीप समझने की गलती करते हैं, जिससे वे निगल जाते हैं या फंस जाते हैं।

अतिसंग्रह

पालतू पशु व्यापार ने जंगली हर्मिट केकड़े की आबादी को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया है। पालतू जानवरों की दुकानों में बिक्री के लिए अत्यधिक संग्रहण प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र को बाधित करता है और कुछ क्षेत्रों में संख्या में गिरावट का कारण बन सकता है, खासकर जहां हर्मिट केकड़े पहले से ही खतरे में हैं। यह प्रथा न केवल व्यक्तिगत प्रजातियों को खतरे में डालती है बल्कि पारिस्थितिक संतुलन को भी अस्थिर कर सकती है।



गैस्ट्रोपॉड शेल में रहने वाला हर्मिट केकड़ा

जलवायु परिवर्तन

जलवायु परिवर्तन साधु केकड़ों के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करता है, क्योंकि बढ़ते समुद्र के तापमान और समुद्र के अम्लीकरण से समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र बाधित होता है। इसके परिणामस्वरूप उपयुक्त शैलों की उपलब्धता में बदलाव आता है, जिन पर साधु केकड़े सुरक्षा के लिए निर्भर रहते हैं। जैसे-जैसे उनका पर्यावरण बदलता है, हर्मिट केकड़े खुद को पर्याप्त आवास के बिना पा सकते हैं।

आक्रामक प्रजातियाँ

आक्रामक प्रजातियों की शुरूआत, जैसे कि शिकारी जो स्थानीय साधु केकड़े की आबादी को खतरे में डालते हैं, उनके अस्तित्व पर भी विनाशकारी प्रभाव डाल सकते हैं। ये आक्रामक प्रजातियाँ स्थापित पारिस्थितिकी तंत्र को बाधित करती हैं, जिससे संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा होती है या हर्मिट केकड़ों का सीधा शिकार होता है।

प्राकृतिक शैलों में गिरावट

अत्यधिक दोहन और कूड़े, विशेषकर प्लास्टिक कचरे के प्रभाव के कारण प्राकृतिक सीपियों की उपलब्धता कम हो रही है। पर्याप्त प्राकृतिक कवच के बिना, हर्मिट केकड़ों को सुरक्षा के लिए कृत्रिम सामग्रियों पर निर्भर रहना पड़ता है, जो पर्याप्त आश्रय या स्वास्थ्य लाभ प्रदान नहीं कर सकते हैं।

संक्षेप में, हर्मिट केकड़ों के सामने आने वाले खतरे बहुआयामी हैं और बड़े पैमाने पर मानवीय कार्यों और पर्यावरणीय परिवर्तनों से प्रेरित हैं। इन मुद्दों को संबोधित करने के लिए हर्मिट केकड़े की आबादी के अस्तित्व और स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय और वैश्विक संरक्षण प्रयासों की आवश्यकता है।

हर्मिट केकड़े भारत की तटीय जैव विविधता का एक अभिन्न अंग हैं। रिपोर्ट की गई 112 प्रजातियों के साथ, वे विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों में पर्याप्त विविधता प्रदर्शित करते हैं। सफाईकर्मियों के रूप में उनकी भूमिका पारिस्थितिक तंत्र में पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण को बढ़ाती है, और यद्यपि उनके पास महत्वपूर्ण व्यावसायिक मूल्य की कमी है, फिर भी उनके पारिस्थितिक महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता है। संरक्षण प्रयासों का उद्देश्य उनके आवासों की रक्षा करना और तटीय पारिस्थितिक तंत्र में पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखना होना चाहिए।

हिंदी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का बहिष्कार नहीं किया।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो का राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं रिपॉजिटरी : शिक्षा, जन-जागरूकता और जैव विविधता संरक्षण का सशक्त माध्यम

अमित सिंह बिष्ट, रजनी चंद्रन, राजीव कुमार सिंह एवं काजल चक्रबर्ती

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

किसी भी देश की वैज्ञानिक प्रगति केवल प्रयोगशालाओं और अनुसंधान संस्थानों से ही नहीं मापी जाती, बल्कि इस बात से भी आँकी जाती है कि वह अपने ज्ञान, प्राकृतिक धरोहर और वैज्ञानिक उपलब्धियों को समाज तक कितनी प्रभावी ढंग से पहुँचाता है। संग्रहालय इस कार्य में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे अतीत और वर्तमान के बीच सेतु बनकर नई पीढ़ी को ज्ञान, विज्ञान और संस्कृति से जोड़ते हैं।

भारत विश्व के उन चुनिंदा देशों में है जहाँ मीठे पानी, खारे पानी तथा समुद्री क्षेत्रों में अत्यंत समृद्ध मत्स्य जैव विविधता पाई जाती है। इस अमूल्य प्राकृतिक धरोहर के संरक्षण, प्रलेखन, अध्ययन एवं जन-जागरूकता के उद्देश्य से राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ में स्थापित राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं रिपॉजिटरी एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। यह केवल संरक्षित मत्स्य नमूनों का संग्रह नहीं, बल्कि शिक्षा, अनुसंधान, संरक्षण और समाज को जोड़ने वाला राष्ट्रीय ज्ञान केंद्र है।

राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय : भारत की वैज्ञानिक धरोहर

राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं रिपॉजिटरी देश के मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण, प्रलेखन और वैज्ञानिक अध्ययन का प्रमुख केंद्र है। यहाँ देश के विभिन्न नदी तंत्रों, झीलों, आर्द्रभूमियों, पर्वतीय क्षेत्रों तथा समुद्री पारिस्थितिक



छात्र संग्रहालय का भ्रमण करते हुए

तंत्रों से प्राप्त अनेक दुर्लभ एवं महत्वपूर्ण मत्स्य प्रजातियों का वैज्ञानिक संरक्षण किया गया है। संग्रहालय में संरक्षित नमूने, डीएनए बैंक, ऊतक बैंक, मत्स्य कोशिका संग्रह, क्रायो-संरक्षित मत्स्य शुक्राणु, आधुनिक प्रदर्शन तकनीक, डिजिटल सूचना प्रणाली तथा इंटरैक्टिव प्रदर्शन इसे देश के सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक संग्रहालयों में स्थान दिलाते हैं।

विद्यालयी विद्यार्थियों के लिए प्रेरणा का केन्द्र

आज की शिक्षा केवल पुस्तकों तक सीमित नहीं है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भी अनुभवात्मक शिक्षा पर विशेष बल देती है। इस दृष्टि से राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय विद्यार्थियों के लिए एक जीवंत विज्ञान प्रयोगशाला है। जब विद्यालयों के विद्यार्थी यहाँ आते हैं तो वे पहली बार सैकड़ों प्रकार की मछलियों को प्रत्यक्ष रूप से देखते हैं। उन्हें समझ में आता है कि भारत की नदियाँ और जलाशय केवल जल का स्रोत नहीं, बल्कि जैव विविधता के अनमोल भंडार हैं। संग्रहालय में प्रदर्शित विभिन्न राज्यों की राजकीय मछलियाँ, दुर्लभ एवं संकटग्रस्त प्रजातियाँ, जलीय पारिस्थितिकी के मॉडल तथा आधुनिक ऑडियो-वीडियो प्रदर्शन बच्चों में विज्ञान के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं। इससे उनमें पर्यावरण संरक्षण, जल संरक्षण तथा जैव विविधता के प्रति संवेदनशीलता विकसित होती है।

महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के लिए ज्ञान का भंडार

मत्स्य विज्ञान, प्राणी विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी तथा जैव विविधता के विद्यार्थियों के लिए यह संग्रहालय अत्यंत उपयोगी शैक्षणिक संसाधन है। यहाँ उपलब्ध संरक्षित नमूनों का अध्ययन कर विद्यार्थी मत्स्य वर्गीकरण, आकृति विज्ञान, विकासक्रम, जैव विविधता, संरक्षण जीवविज्ञान तथा आनुवंशिकी जैसे विषयों को व्यवहारिक रूप से समझते हैं। संग्रहालय शोधार्थियों को केवल जानकारी ही नहीं देता, बल्कि उन्हें नई शोध दिशाओं की ओर प्रेरित भी करता है।

शोध एवं नवाचार को बढ़ावा

राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय केवल प्रदर्शन स्थल नहीं बल्कि अनुसंधान का महत्वपूर्ण आधार भी है। यहाँ उपलब्ध जैविक संग्रह वैज्ञानिकों को संकटग्रस्त प्रजातियों की पहचान, डीएनए विश्लेषण, प्रजातियों की आनुवंशिक विविधता, संरक्षण



छात्र संग्रहालय का भ्रमण करते हुए



मत्स्य विधालय के छात्र संग्रहालय का भ्रमण करते हुए

रणनीतियों तथा नई वैज्ञानिक तकनीकों के विकास में सहायता प्रदान करते हैं। देश-विदेश के अनेक वैज्ञानिक एवं शोधार्थी इस संग्रहालय की सुविधाओं का लाभ उठाकर गुणवत्तापूर्ण अनुसंधान कर रहे हैं।

आम जनता में पर्यावरण चेतना

किसी भी वैज्ञानिक संस्थान की सफलता तभी सार्थक होती है जब उसका लाभ समाज तक पहुँचे। राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय में आने वाले नागरिक यह समझते हैं कि नदियों का प्रदूषण, अंधाधुंध मत्स्य दोहन तथा जलवायु परिवर्तन किस प्रकार जलीय जैव विविधता को प्रभावित कर रहे हैं। यह संग्रहालय लोगों को यह संदेश देता है कि स्वच्छ नदियाँ, स्वस्थ जलाशय और सुरक्षित जैव विविधता ही आने वाली पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक विरासत है।

मत्स्य कृषकों के लिए उपयोगिता

मत्स्य कृषकों के लिए संग्रहालय एक प्रेरणा केन्द्र है। यहाँ वे देश की विभिन्न आर्थिक महत्व वाली मत्स्य प्रजातियों, उनके संरक्षण तथा वैज्ञानिक मत्स्य पालन के महत्व को समझते हैं। इससे गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन, देशी प्रजातियों का संरक्षण तथा टिकाऊ मत्स्य पालन को बढ़ावा मिलता है।

वैज्ञानिक पर्यटन का नया आयाम

लखनऊ अपनी सांस्कृतिक धरोहरों के साथ-साथ अब वैज्ञानिक पर्यटन के क्षेत्र में भी पहचान बना रहा है। राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय विद्यार्थियों, शोधार्थियों, पर्यटकों तथा प्रकृति प्रेमियों के लिए आकर्षण का प्रमुख केन्द्र बनता जा रहा है। यहाँ आने वाले आगंतुक विज्ञान को केवल पढ़ते नहीं, बल्कि उसे प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं।

जैव विविधता संरक्षण का राष्ट्रीय अभियान

भारत विश्व के जैव विविधता सम्पन्न देशों में अग्रणी है। अनेक देशी मत्स्य प्रजातियाँ आज विभिन्न कारणों से संकट का सामना कर रही हैं। राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय इन प्रजातियों



संग्रहालय का भ्रमण करते हुऐ आगंतुक

के संरक्षण, प्रलेखन तथा भविष्य की पीढ़ियों के लिए उनके वैज्ञानिक अभिलेखन का महत्वपूर्ण केन्द्र है। यह संग्रहालय आने वाली पीढ़ियों को यह संदेश देता है कि जैव विविधता केवल प्राकृतिक संपदा नहीं, बल्कि मानव सभ्यता की आधारशिला है।

विकसित भारत-2047 में योगदान

प्रधानमंत्री द्वारा परिकल्पित "विकसित भारत-2047" के लक्ष्य में विज्ञान, नवाचार, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण तथा जनभागीदारी का महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय इन सभी उद्देश्यों को सशक्त रूप से आगे बढ़ाता है। यह नई पीढ़ी में वैज्ञानिक सोच विकसित करता है, शोध को प्रोत्साहित करता है तथा समाज को प्रकृति संरक्षण के लिए प्रेरित करता है।

भविष्य की दिशा

यदि भविष्य में इस संग्रहालय में डिजिटल गैलरी, वर्चुअल रियलिटी, बच्चों के लिए इंटरैक्टिव विज्ञान गतिविधियाँ, मोबाइल संग्रहालय, बहुभाषीय ऑडियो गाइड तथा नियमित विज्ञान कार्यशालाएँ प्रारम्भ की जाएँ, तो यह देश का अग्रणी प्राकृतिक इतिहास एवं मत्स्य विज्ञान संग्रहालय बन सकता है।

उपसंहार

राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ का राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं रिपॉजिटरी केवल एक संग्रहालय नहीं, बल्कि ज्ञान, विज्ञान, संरक्षण और जन-जागरूकता का राष्ट्रीय आंदोलन है। यह विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करता है, शोधार्थियों को नई दिशा देता है, मत्स्य कृषकों को आधुनिक जानकारी प्रदान करता है तथा आम जनता में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जिम्मेदारी का भाव उत्पन्न करता है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि अधिकाधिक विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय तथा आम नागरिक इस संग्रहालय का भ्रमण करें और भारत की समृद्ध मत्स्य जैव

विविधता को जानें, समझें तथा उसके संरक्षण में सहभागी बनें। जब समाज विज्ञान से जुड़ेगा, तभी प्रकृति का संरक्षण और राष्ट्र का सतत विकास सुनिश्चित होगा। राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय इसी दिशा में एक प्रेरणादायी एवं दूरदर्शी पहल है।



संग्रहालय में छात्रों का समूह

हिंदी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है, जिसे बिना भेद-भाव प्रत्येक भारतीय ग्रहण कर सकता है।

मदन मोहन मालवीय

कृषि 5.0: रोबोटिक्स, AI और IoT से संचालित भविष्य की खेती

संगीता श्रीवास्तव, प्रियंका श्रीवास्तव एवं अभय कुमार श्रीवास्तव

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विश्व तेजी से बदल रहा है, और इसी गति के साथ कृषि क्षेत्र भी एक नई क्रांति का अनुभव कर रहा है जो कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), मशीन लर्निंग, IoT (इंटरनेट ऑफ थिंग्स) और डेटा विश्लेषण जैसी उन्नत तकनीकों को एकीकृत करके कृषि को अधिक टिकाऊ, कुशल और व्यक्तिगत बनाता है। पारंपरिक खेती से मैकेनाइजेशन, डिजिटल कृषि और स्मार्ट फार्मिंग की यात्रा अब एक और उन्नत स्तर- कृषि 5.0 तक पहुँच चुकी है। कृषि 5.0 ऐसा मॉडल है जिसमें रोबोटिक्स, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), एक्सटेंडेड रियलिटी (XR), बिग डेटा और 6G जैसी उभरती तकनीकों का संयोजन किया जाता है, ताकि खेती और पशुपालन के हर चरण को अधिक बुद्धिमान, स्वचालित और सटीक बनाया जा सके। कृषि 5.0 की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह खेत और पशुधन की व्यक्तिगत जरूरतों के आधार पर समाधान प्रदान करने में सक्षम है। यानी हर पौधे, हर भूखंड और हर पशु के लिए अलग-अलग, संदर्भ-आधारित तकनीकी समाधान विकसित किए जा सकते हैं।

कृषि विकास की यात्रा: 1.0 से 5.0 तक

कृषि विकास के 1.0 से 5.0 तक के चरण पारंपरिक, यांत्रिक, और जैविक प्रणालियों से लेकर अब की स्मार्ट और टिकाऊ प्रौद्योगिकियों तक की यात्रा को दर्शाते हैं। कृषि 5.0 को समझने के लिए इसकी विकास यात्रा को जानना महत्वपूर्ण है:

- **कृषि 1.0 (यांत्रिक):** यह कृषि का शुरुआती दौर था जब यांत्रिक उपकरणों का उपयोग शुरू हुआ। इसने उत्पादन बढ़ाने में मदद की, लेकिन इसके साथ पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़े।
- **कृषि 2.0 (जैविक/रासायनिक):** इस चरण में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और आनुवंशिक रूप से संशोधित बीजों का उपयोग शुरू हुआ। इसका उद्देश्य उच्च पैदावार प्राप्त करना था।

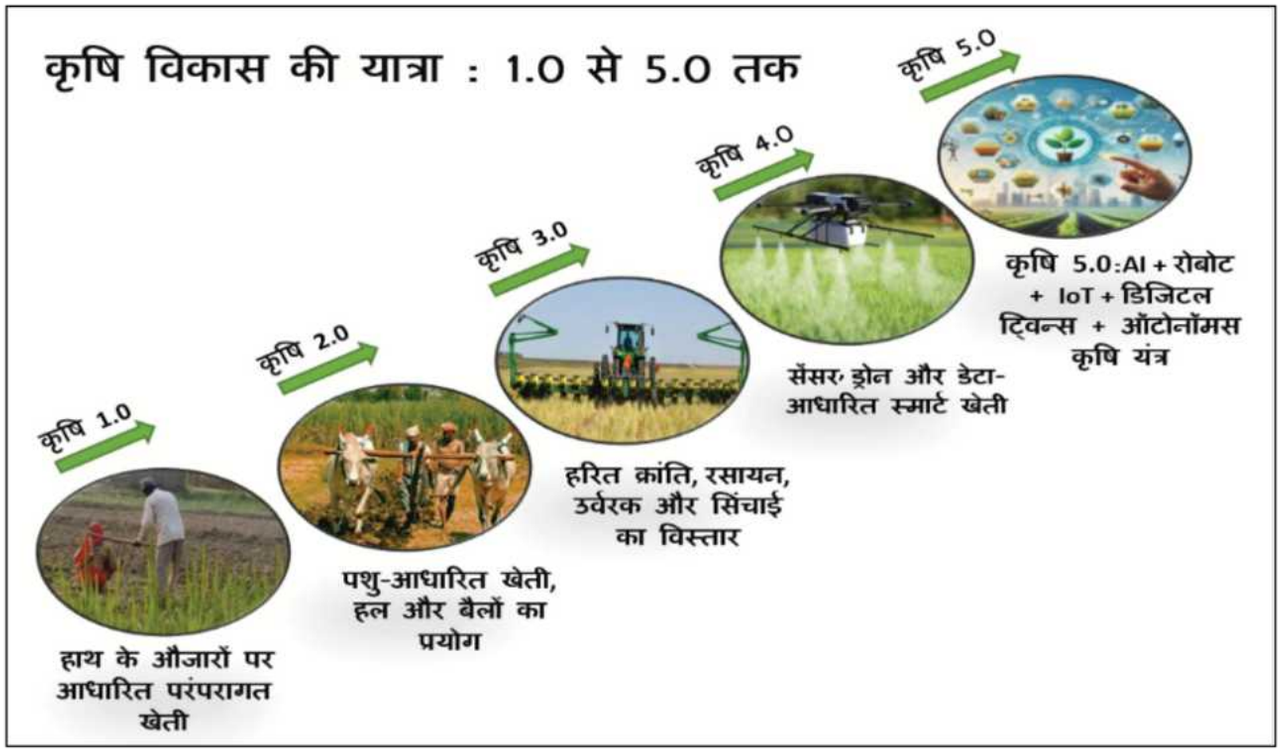

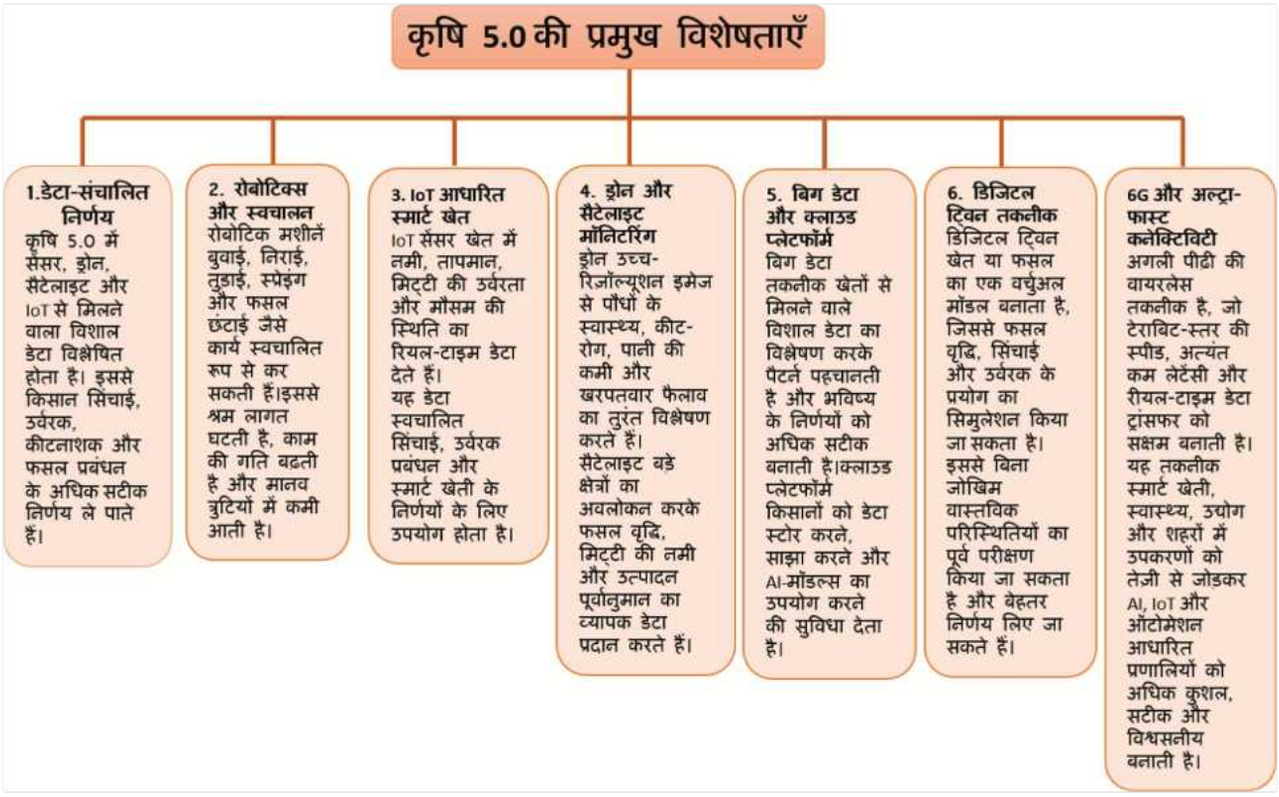

- **कृषि 3.0 (कृषि-प्रौद्योगिकी):** इस दौर में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) का उपयोग शुरू हुआ। सेंसर, जीपीएस और डेटा विश्लेषण जैसी तकनीकों ने खेती को अधिक कुशल बनाया।
- **कृषि 4.0 (स्मार्ट और टिकाऊ):** यह आज का चरण है, जहां कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), रोबोटिक्स और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) जैसी उन्नत तकनीकों का उपयोग होता है। यह सटीक और टिकाऊ खेती पर केंद्रित है।
- **कृषि 5.0 (मानव-केंद्रित):** यह कृषि का भविष्य है, जिसमें मानव और मशीनें मिलकर काम करेंगे। इसका उद्देश्य न केवल उत्पादन बढ़ाना है, बल्कि टिकाऊपन, सामाजिक और पर्यावरणीय कल्याण को भी सुनिश्चित करना है।

कृषि 5.0 का उत्पादकता और खाद्य सुरक्षा पर प्रभाव

AI, IoT और मशीन लर्निंग पर आधारित कृषि 5.0 आधुनिक खाद्य प्रणाली को पूरी तरह बदल रहा है। यह तकनीकों के माध्यम से खेती को अधिक सटीक, तेज और विश्वसनीय बनाता है।

1. उत्पादकता बढ़ाना:

डेटा-आधारित और प्रिसिजन फार्मिंग तकनीकें उत्पादन को प्रभावित करने वाले हर कारक-जैसे मिट्टी का स्वास्थ्य, मौसम जोखिम, पोषक तत्व प्रबंधन और स्वचालित सिंचाई - को सटीक रूप से नियंत्रित करती हैं। इससे फसल उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि होती है।

2. हानि में कमी:

AI-आधारित प्रेडिक्टिव मेंटनेंस, मशीनों में खराबी आने की संभावना पहले ही पहचान लेता है, जिससे काम रुकता नहीं और हानि कम होती है।इसी तरह, फसल रोग और कीटों की शुरुआती पहचान होने से नुकसान काफी कम हो जाता है।

3. आपूर्ति श्रृंखला की मजबूती:

ब्लॉकचेन-आधारित ट्रैसेबिलिटी सिस्टम 'फार्म से थाली' तक खाद्य उत्पादों को ट्रैक करने की सुविधा देते हैं। इससे गुणवत्ता नियंत्रण बेहतर होता है, खाद्य सुरक्षा बढ़ती है और किसानों को नए व बड़े बाजारों तक पहुँचने में मदद मिलती है।

कृषि 5.0 अपनाने की चुनौतियाँ

मुख्य रूप से उच्च लागत, तकनीकी साधनों की सीमित पहुँच और किसानों में डिजिटल कौशल की कमी से जुड़ी हैं। स्मार्ट सेंसर, ड्रोन, AI और IoT जैसी उन्नत तकनीकें छोटे किसानों के लिए महंगी होती हैं, साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट और अवसंरचना की कमी इनके उपयोग में बाधा बनती है। बड़े पैमाने पर डेटा संग्रह होने से डेटा सुरक्षा और गोपनीयता जोखिम भी बढ़ जाते हैं। इसके अलावा, नीतिगत समर्थन, उपकरणों की पारस्परिक संगतता और तकनीक अपनाने पर तुरंत लाभ न मिलने का डर भी किसानों को कृषि 5.0 अपनाने से रोकता है।

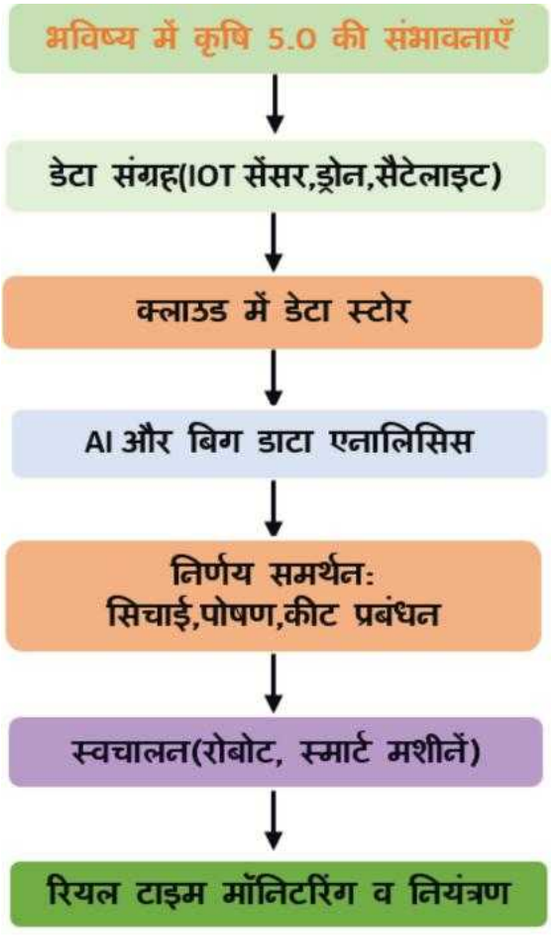

भविष्य में कृषि 5.0 की संभावनाएँ

कृषि 5.0 भविष्य की वह उन्नत कृषि प्रणाली है जिसमें आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस, रोबोटिक्स, IoT, ड्रोन, सैटेलाइट, डिजिटल ट्विन और 6G जैसी तकनीकें खेती को पूरी तरह स्मार्ट, सटीक और स्वचालित बनाती हैं। भविष्य में यह मॉडल संसाधनों के अत्यधिक कुशल उपयोग, मौसम और मिट्टी के अनुसार रीयल-टाइम खेती, कीट-रोगों की शुरुआती पहचान, स्वचालित मशीनों द्वारा बुवाई-सिंचाई-कटाई, और डेटा-आधारित निर्णयों के माध्यम से उत्पादन व गुणवत्ता दोनों में अभूतपूर्व वृद्धि सुनिश्चित करेगा। कृषि 5.0 छोटे किसानों को भी डिजिटल सेवाओं, स्मार्ट बाज़ार कनेक्टिविटी और वित्तीय समाधान उपलब्ध कराकर खेती को अधिक मुनाफ़ाप्रद, टिकाऊ और जलवायु-सहिष्णु बनाने की विशाल संभावनाएँ प्रस्तुत करता है।

कृषि 5.0 का निष्कर्ष यह है कि यह AI, IoT, रोबोटिक्स और डेटा एनालिटिक्स जैसी तकनीकों का उपयोग करके खेती को एक स्मार्ट, स्वचालित और टिकाऊ भविष्य की ओर ले जा रहा है, जिसका लक्ष्य खाद्य सुरक्षा बढ़ाना, पर्यावरणीय प्रभाव को कम करना और किसानों के लिए दक्षता और लाभप्रदता में सुधार करना है, जो पारंपरिक तरीकों को डेटा-संचालित, ज्ञान-आधारित प्रणालियों में बदलकर समावेशिता और संसाधन प्रबंधन पर केंद्रित है, ताकि जलवायु परिवर्तन और बढ़ती खाद्य मांग जैसी चुनौतियों का समाधान किया जा सके। इन चुनौतियों को देखते हुए, यह स्पष्ट है कि कृषि 5.0 को सफलतापूर्वक अपनाने के लिए सरकार, टेक कंपनियों, शोध संस्थानों और कृषि विशेषज्ञों के बीच मजबूत सहयोग की आवश्यकता है। किसानों तक वित्तीय सहायता, सब्सिडी, प्रशिक्षण कार्यक्रम और डिजिटल अवसंरचना पहुँचाना अनिवार्य है। जब ये सभी बाधाएँ धीरे-धीरे दूर होंगी, तब कृषि 5.0 न केवल कृषि उत्पादन को अधिक स्मार्ट और सटीक बनाएगी, बल्कि इसे आर्थिक रूप से मजबूत, पर्यावरण-अनुकूल और भविष्य-प्रधान भी बनाएगी।

सामान्य-स्थिति विश्लेषण मॉडल आधारित स्थायी खुशी

अचल सिंह

भाकृअनुप- राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

मानव सभ्यता ने भौतिक सुविधाओं - बड़ा घर, लक्जरी कार, वातानुकूलित व्यवस्था - में अभूतपूर्व प्रगति की है, परंतु परम सुख या स्थायी खुशी अभी भी एक चुनौती बनी हुई है। प्रस्तुत लेख में मानव मस्तिष्क में प्रतिदिन 6-60 हजार विचारों के प्रवाह के संदर्भ में सामान्य-स्थिति विश्लेषण के माध्यम से स्थायी खुशी के विभिन्न मॉडलों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में पाया गया कि स्थायी खुशी स्थिर अवस्था नहीं, बल्कि गतिशील अवस्था है जिसमें परिवर्तन एक आवश्यक गुण है। सोशियोमेट्रिक स्थिति - समूह से प्राप्त सम्मान और प्रशंसा - का सह-संबंध गुणांक सामाजिक-आर्थिक स्थिति - धन और पद - की तुलना में खुशी के स्तर से अधिक सकारात्मक पाया गया। निष्कर्षतः स्थायी खुशी को प्रयास, उचित मार्गदर्शन, स्थिति-स्वीकार प्रवृत्ति, आंतरिक बदलाव पर केंद्रित ध्यान और आत्म-अनुशासन के समन्वय से परिभाषित किया जा सकता है।

स्थिति विश्लेषण

इस धरा का जन्म बहुत समय पूर्व हुआ और मानव का उद्भव तुलनात्मक रूप से नवीन है। जन्म से ही मानव की सबसे बुनियादी जरूरत शांति और खुशी की तलाश रही है। बच्चा पैदा होते ही रोए नहीं, इसके लिए देखभाल की जाती है और जीवन की अंतिम सांस तक व्यक्ति शांति से रहने का ही प्रयास करता है। प्रश्न यह है कि क्या मानव ऐसी स्थिति का निर्माण कर पाया है जहाँ जीवन पर्यंत खुशी बनी रहे? इस लेख का उद्देश्य दीर्घकालीन परिदृश्य में खुशी को महसूस करने में समर्थ बनाने हेतु विभिन्न सामान्य स्थितियों का मॉडल विश्लेषण करना है। मानव मस्तिष्क में लगभग 10 बिलियन न्यूरॉन का जाल होता है जो 24x7 सक्रिय रहता है। नींद में भी अवचेतन मस्तिष्क सक्रिय रहता है। ऐसे में मस्तिष्क पर कितना बोझ है, इसकी कल्पना की जा सकती है। इसी कारण खुशी का लंबे समय तक बने रहना कठिन प्रतीत होता है।

साहित्य समीक्षा एवं मॉडल विश्लेषण

मॉडल 1: खुशी की वैज्ञानिक प्रकृति

स्थायी खुशी में परिवर्तन, गति, वृद्धि जैसे गुण आवश्यक हैं। यह बंद कमरे में वातानुकूलित व्यवस्था की तरह है, जहाँ सेटिंग में परिवर्तन करके आराम सुनिश्चित किया जा सकता है। भौतिकी के न्यूटन के गति के पहले नियम से इसे समझा जा सकता है: $v = u + at$। यदि गतिहीन जीवन है अर्थात त्वरण $a = 0$, तो समय t के बाद गति $v = 0$ होगी। अमेरिकन कॉलेज ऑफ स्पोर्ट्स मेडिसिन के अनुसार गतिहीन जीवन स्वास्थ्य के लिए धूम्रपान जितना ही खतरनाक है। निष्कर्ष: जिंदगी चलते रहने का नाम है, और खुशी भी गतिशील रहने से ही स्थायी होती है।

मॉडल 2: खुशी विज्ञापन बनाम बुद्धा मॉडल

विज्ञापन एजेंसियां कमोडिटी होल्डिंग आधारित खुशी की वकालत करती हैं, जबकि बुद्धा मॉडल त्याग से खुशी की बात करता है। बिजनेस मॉडल ऑफ हैप्पीनेस कहता है कि आर्थिक विकास से कल्याण होता है, जो स्थायी खुशी का एक कारण मात्र हो सकता है, संपूर्ण कारण नहीं।

मॉडल 3: सामुदायिक जीवन व स्वस्थ वातावरण मॉडल

पारस्परिक सहयोग से एक मजबूत सामुदायिक मंच का निर्माण होता है। समुदाय का आकार, जिसे सामाजिक भागफल (SQ) द्वारा मापा जा सकता है, स्थायी खुशी के आकार को निर्धारित करता है। स्वस्थ वातावरण में सुखद स्थिति से मन-तृप्ति होती है और यह संक्रामक होने के कारण दूसरों के जीवन में भी कल्याण का निर्माण करती है।

मॉडल 4: अद्वितीय कमोडिटी-त्याग मॉडल

अध्ययनों में पाया गया है कि दूसरों को अद्वितीय या अनूठे उपहार देने से अर्जित खुशी, उन उपहारों के स्वामी होने

से अधिक होती है। यह त्याग सामुदायिक खुशी मॉडल के लिए अति-आवश्यक मंच का निर्माण करता है।

मॉडल 5: समूह-सम्मान मॉडल

प्रो. कैमरून एंडरसन, हास स्कूल ऑफ बिजनेस, यू.सी. बर्कले द्वारा 'साइकोलॉजी साइंस' में प्रकाशित अध्ययन दर्शाता है कि साथियों से प्राप्त सम्मान और प्रशंसा, किसी भी कीमती सामान से प्राप्त सम्मान से अधिक मायने रखती है। समूह के लिए सार्थक योगदान देने वाला उदार सदस्य ही उच्च सम्मान प्राप्त करता है।

मॉडल 6: धन-आय एवं सोशियोमेट्रिक स्थिति मॉडल

सोशियोमेट्रिक स्थिति - समूह में आमने-सामने प्राप्त सम्मान - का खुशी से सीधा और सकारात्मक सह-संबंध है, जबकि सामाजिक-आर्थिक स्थिति - समग्र धन - का सह-संबंध कमजोर है। 80 कॉलेज के 14 छात्र समूहों पर किए गए विश्लेषण में उच्च सोशियोमेट्रिक स्थिति वाले छात्रों ने अधिकतम खुशी की सूचना दी। सम्मान महसूस करना ही खुशी को बढ़ाता है, केवल अमीर महसूस करना नहीं। बेहतर सोशियोमेट्रिक स्थिति वाले व्यक्ति के लिये ऐसा कहा जाता है कि इस तरह के लोग जीवन मे संतुष्ट, अधिक सकारात्मक, कम से कम नकारात्मक भावनाएं रखने वाले व खुशी महसूस करने वाले होते है। जैसे-जैसे सोशियोमेट्रिक स्थिति बढ़ती या गिरती है उसी के अनुसार उनकी खुशी का स्तर बढ़ता या गिरता पाया गया है, यह ग्राफ से भी दर्शाया गया है (चित्र.1)।

सोशियोमेट्रिक स्थिति (समूह मे आमने-सामने, दोस्तों या सहकर्मियों से प्राप्त सम्मान और प्रशंसा) व सामाजिक-आर्थिक-स्थिति की तुलना करने पर यह दर्शाया गया कि खुशी-स्तर को सोशियोमेट्रिक स्थिति अधिक प्रभावित करती है, तथा उनमे सहसंबंधी गुणांक भी धनात्मक पाया गया, जो उच्च स्तर खुशी की भावना निर्मित करती है, ऐसा अध्ययनों में पाया गया है ।

मॉडल 7: व्यायाम-गतिविधि मॉडल

नियमित मध्यम व्यायाम हृदय रोग, मधुमेह और स्ट्रोक के जोखिम को कम करता है और 'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन' के सिद्धांत से खुशी का अवसर प्रदान करता है। कृतज्ञता का अभ्यास और सचेतनता भी खुशी को सीखने में सहायक है।

मॉडल 8: प्राकृतिक दुनिया की रक्षा मॉडल

'मॉनिटर ऑन साइकोलॉजी' में एमी नोवोटनी के अनुसार प्राकृतिक दुनिया की अखंडता की रक्षा से स्थायी खुशी आकर्षित होती है। इससे बच्चों में तनाव में कमी, बेहतर स्वास्थ्य, रचनात्मकता और एकाग्रता पाई गई है।

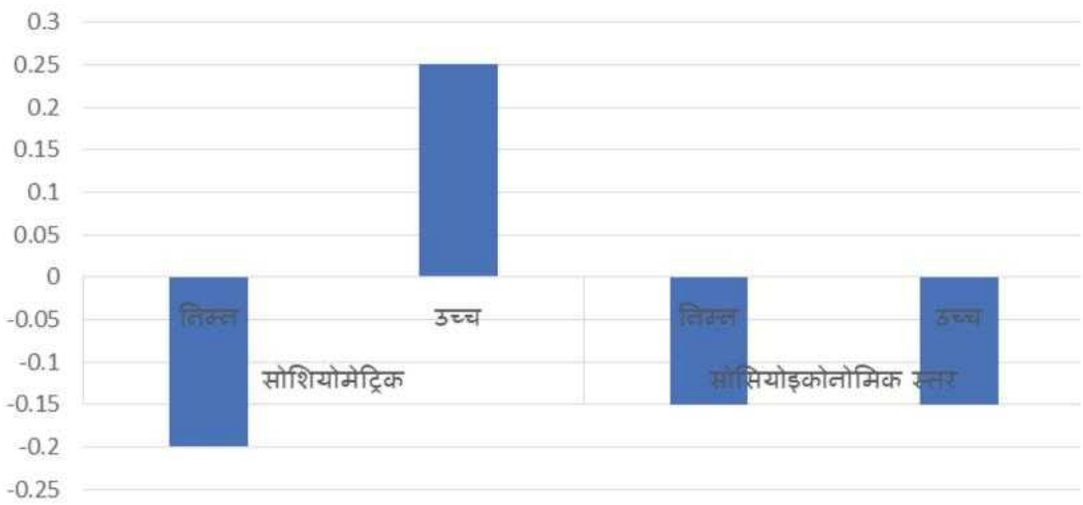

चित्र1: खुशी के स्तर (निम्न/उच्च) का सह-सम्बंध गुणांक के साथ दोनो स्थितियो; सोशियोमेट्रिक व सोशियोइकोनोमिक स्थितियों मे प्रदर्शन

प्रशासनिक दक्षता और समूह-जीत का उदाहरण

प्रशासनिक पदों पर खुशी का स्तर प्रशासनिक कौशल-स्तर को प्रभावित करता है। प्रशिक्षण और सामाजिक समारोहों से कौशल बढ़ाया जा सकता है। इसे खरगोश-कछुआ दौड़ के नए प्रारूप से समझा जा सकता है। यदि मार्ग में समतल, पहाड़ी, नदी और फिनिशिंग लाइन हो तो अकेले कोई नहीं जीत सकता। आवश्यकता-आधारित सहयोग से खरगोश ने कछुए को पहाड़ी पार करने में मदद की और कछुए ने खरगोश को नदी पार करने में। दोनों एक साथ फिनिशिंग लाइन पर पहुँचे। यह समूह-खुशी और उच्च सामाजिक भागफल (SQ) का सर्वोत्तम उदाहरण है।

1. व्यक्ति-विचार उत्पत्ति-आवश्यकता-संतुष्टि संबंध मॉडल से स्थायी खुशी को बनाए रखा जा सकता है।
2. सोशियोमेट्रिक स्थिति सामाजिक-आर्थिक स्थिति से अधिक खुशी को प्रभावित करती है।
3. स्थायी खुशी = खुश रहने का प्रयास + उचित मार्गदर्शन + स्थिति-स्वीकार प्रवृत्ति + आंतरिक बदलाव पर केंद्रित ध्यान + आत्म-अनुशासन।
4. टैगोर की गीतांजलि के अनुसार हर शिशु एक दिव्य संदेश लाता है। मनुष्य जिस अच्छाई के साथ पैदा हुआ है, उसी की खोज में लगा है, जैसे मृग अपनी नाभि में छिपी कस्तूरी की खोज में जीवन भर भटकता है। गोल्डन बुद्धा उस अंतर्निहित अच्छाई का रूपक है।

भारतीय सभ्यता की अविरल धारा प्रमुख रूप से हिंदी भाषा से ही जीवंत तथा सुरक्षित रह पाई है।

अमित शाह

हिंदी जैसी सरल भाषा दूसरी नहीं है।

मौलाना हसरत मोहानी

ग्रामीण क्षेत्रों में जल संरक्षण के विभिन्न उपाय

विनीता सिंह [1] एवं बी.पी.शाही [2]

[1]डी ए वी डिग्री कालेज (लखनऊविश्वविद्यालय), लखनऊ,

[2]कृषि विज्ञान केंद्र, मसौधा, अयोध्या

हमारा भारत गांवों में बसता है। हम सभी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से गांव से जुड़े हैं। भारतीय ग्रामीण जनता आजीविका के लिए मुख्यतः खेती पर निर्भर है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। खेती का सीधा संबंध है जल और हरियाली से, जो हमारे जीवन का आधार है। जहां पानी है, वहां हरियाली है और जहां हरियाली है , वहां जीवन है, खुशहाली है, समृद्धि है। जमीन का भूजल स्तर लगातार नीचे जा रहा है। तालाब, पोखर, कुंए सब सूख रहे हैं ।इसका कारण है, वर्षा जल का सही प्रबंधन न होना और पेड़'पौधों की कमी।

जल संरक्षण केवल पानी बचाना नहीं है बल्कि यह आने वाले पीढ़ियों के लिए जीवन बचाना है।

हरियाली का मतलब केवल पेड़ पौधे नहीं बल्कि स्वस्थ मिट्टी और स्वच्छ हवा भी है।

इसके लिए सबसे पहले हमें अपने पारंपरिक ज्ञान को वापस लाना होगा। हमारे पूर्वज जानते थे कि मानसून प्रधान भारत में जल संचयन कैसे करना है यानी कि वर्षा के पानी की एक-एक बूंद को 'कैच द रेन' की तरह पकड़ना होगा। आज भी गांव के तालाब, कुंए, जोहड और बावडियां ही पानी की 'असली बैंक' सिद्ध हो रही हैं।

इनके बचाव लिए कुछ पारंपरिक तरीके अपनाने होंगे -

1. **पुराने तालाबों, कुंओ आदि का जीर्णोद्धार**: श्रमदान द्वारा इनकी कीचड़/गाद की सफाई और खुदाई करें ताकि यह फिर से बारिश के पानी को जमा कर सकें और नए चेक-डैम भी बनाएं।
2. **सोख्ता गड्ढे** : घर के बाहर जहां हैंड पंप या नहाने का पानी, रसोई का पानी बहता है वहां छोटा सा सोख्ता गड्ढा बनाएं इससे कीचड़ भी नहीं होगा भूजल स्तर भी धीरे-धीरे बढ़ता रहेगा।
3. **मेड़बंदी** : अपने खेत के चारों ओर ऊंची मजबूत मेड़ बनाएं इससे बारिश का पानी बहकर बाहर नहीं जाएगा, खेतों मे ही रहेगा और जमीन के अंदर धीरे-धीरे भूजल रिचार्ज करेगा।
4. **कंटूर बांध या मेड़** : खेतों के ढलान पर छोटे-छोटे अस्थाई बांध या गुली-प्लग(नालाबंदी : जो कि स्थानीय पत्थर, रेत की बोरियों इत्यादि से बनाए जाते हैं) पानी को बहने से रोककर, मृदा-अपरदन व गाद जमाव भी रोकते है और भूजल पुनर्भरण भी होता रहता है।

इसके अलावा जल संरक्षण के कुछ आधुनिक तरीके प्रयोग किए जाएं जैसे कि :

5. **छत वर्षा जल संचयन** : घरों, स्कूलों, आंगनबाड़ी केंद्रों, पंचायत भवन की ऊपरी छत का पानी, पाइप से सीधे कुंए या बोरवेल में रिचार्ज करें।
6. **पोंड लाइनर तकनीकी** : यदि मिट्टी में पानी रिसकर बहता या बर्बाद होता है तो पौंड लाइनर का उपयोग करके वर्षा जल संचयन हेतु कृत्रिम तालाब बनाएं ।
7. **टपक सिंचाई** : फसलों की जड़ों में बूंद बूंद पानी दे जिससे 50% तक पानी बचता है और फसल अच्छी होती है।
8. **फव्वारा सिंचाई** : यदि जमीन या खेत ऊंचा-नीचा हो तो फौव्वारा से सिंचाई करने पर कम पानी से अच्छी पैदावार होती है ।
9. **मल्चिंग :** खेत की मिट्टी को फसल अवशेषों या सूखी घास से ढक दें ताकि धूप से नमी न उड़े। और जमीन में ही बनी रहे, यह सूखे से बचाव करती है।

जल संरक्षण का हरियाली से सीधा नाता है, दोनों एक दूसरे के पूरक है, जहां हरियाली होगी,वहां बादल आकर्षित होकर अच्छी वर्षा करते है और मिट्टी को पानी सोखने में मदद कर भूजल रिचार्ज करते हैं। इसके लिए हमें निम्न पहलों पर अधिक ध्यान केंद्रित करना चाहिए -

1. **अधिक से अधिक वृक्षारोपण** : नदी, नालों, तालाबों आदि के किनारे और खेतों के मेड़ों पर स्थानीय/देशी

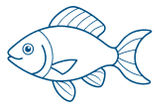

प्रजाति के पेड़ जैसे पीपल, नीम, पाकड़, बरगद आदि लगायें।

2. **मिश्रित खेती** : खेतों के मेड़ो पर फलदार या कीमती लड़कियों के पेड़ जैसे सागवान, शीशम, आम, महुआ, खैर, बबूल लगायें, ये आपको फल देंगे और छांव भी ।
3. **फसल विविधीकरण/चक्र** : ऐसी फसलों को अपनाए जिन्हें कम पानी की आवश्यकता हो जैसे ज्वार, बाजरा, मूंग, चना, उरद, रागी इत्यादि।
4. **नलों की मरम्मत** : घर या खेत, कहीं भी पानी रिसाव हो, तो उसे तुरंत ठीक करायें।
5. **सामुदायिक वानिकी** : गांव के सार्वजनिक स्थान, खाली पड़ी जमीनों पर मियावाकी पद्धति से छोटे स्थान पर घने जंगल विकसित करें या औषधीय पौधे जैसे गिलोय, सहजन, आंवला, ऐलोवेरा, तुलसी आदि लगायें।
6. ग्राम पंचायतों द्वारा क्षेत्र के जल संसाधन व प्रबंधन, जल का सदुपयोग और बर्बादी रोकने के लिए ग्राम सभा में चर्चायें करें, युवा क्लब बनायें, जल-संग्रहण समिति गठित हो और सरकारी योजनाओ जैसे हरियाली, जल-जीवन मिशन, मनरेगा, जल-शक्ति अभियान इत्यादि के माध्यम से वित्तीय व तकनीकी सहायता की जानकारी को जन-जन तक पहुंचाएं। जल संसाधनों के मितव्ययी उपयोग के प्रति लोगो को जागरूक व प्रोत्साहित करें और सामूहिक जन-भागीदारी बढ़ायें।

अंत मे यही कहना है कि पानी बचाएं, पेड़ लगायें, हर घर में वर्षा जल संचयन हो। ये सभी छोटे-छोटे प्रयासों को 'जन आंदोलन' बनाकर बदलाव लाएं, जिससे आने वाली पीढियों के लिए जल सुरक्षा के साथ-साथ पर्यावरणीय संतुलन भी बना रहेगा।

अपने गांव को 'सूखा-मुक्त व हरा भरा गांव' बनाने का संकल्प लें ।

हर शुभ अवसर पर कम से कम एक पौधा अवश्य लगायें और उसकी परवरिश की जिम्मेदारी स्वयं लेकर उसे बड़ा भी करें

याद रखें : जल है तो कल है।

हिंदी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

स्वामी दयानंद

भारतीय भाषाएं नदियां हैं और हिंदी महानदी ।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

एनबीएफजीआर के हम हैं ...शोधकर्ता

अखिलेश कुमार मिश्र
भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

एनबीएफजीआर के हम हैं ...शोधकर्ता
मछलियों का ब्यूरो यह प्यारा...बड़ा लगता
दुर्गम आवासों से है मत्स्य... खोज करता
मछली प्रजातियों की ...पहचान करता
एनबीएफजीआर के हम हैं.. शोधकर्ता
मछली की विविधता है... देश की धरोहर
जलीय जैव संपदा है ...बड़ी ही मनोहर
इसको संजोने की है... हममें तत्परता
एनबीएफजीआर के हम हैं... शोधकर्ता
मत्स्य संसाधनों का... करते हैं संरक्षण
मछली किसानों को... देते हैं प्रशिक्षण
क्षमता निर्माण से... आयवृद्धि करता
एनबीएफजीआर के हम हैं...शोधकर्ता
देशी मछलियों को विदेशी... से बचाता
मछली बीमारियों की...निगरानी करता
रोगाणुरोधी प्रतिरोध से रक्षा... है करता
एनबीएफजीआर के हम हैं...शोधकर्ता
उत्तर दक्षिण पूर्व पश्चिम... पूर्वोत्तर के राज्य सब
होते लाभान्वित... पाकर ब्यूरो से मदद
मात्स्यिकी के क्षेत्र का ...नित विकास करता
एनबीएफजीआर के हम हैं... शोधकर्ता
विशालकाय म्यूजियम और... गंगा एक्वेरियम
मात्स्यिकी विज्ञान के हैं... भव्य आकर्षण
शोध छात्र-छात्राओं का ...मददगार बनता
एनबीएफजीआर के हम हैं ...शोधकर्ता
प्रायद्वीपीय अन्वेषण ...कोच्ची केंद्र करता
अद्भुत मछलियों की ...खोज सदा करता
मात्स्यिकी से जीविका... विकास भी है करता
एनबीएफजीआर के हम हैं ...शोधकर्ता..
एनबीएफजीआर के हम हैं.. शोधकर्ता...



राजभाषा गतिविधियों की झलक






हिंदी कार्यशाला


हिंदी कार्यशाला


हिंदी कार्यशाला
अन्तर्राष्ट्रीय जैव विविधता दिवस : परिप्रेक्ष्य एवं सार्थकता
International Biodiversity Day : Perspective and Significance


राष्ट्रीय वैज्ञानिक हिंदी संगोष्ठी-सह-कार्यशाला
मत्स्य जैवविविधता: प्रबंधन एवं सतत उपयोग
Fish Biodiversity: Management and Sustainable Utilization


राष्ट्रीय वैज्ञानिक हिंदी संगोष्ठी-सह-कार्यशाला / National Scientific Hindi Seminar-Cum-Workshop
मत्स्य जैवविविधता: प्रबंधन एवं सतत उपयोग
Fish Biodiversity: Management and Sustainable Utilization
ABCS


'हिंदी पखवाड़ा एवं रिफॉर्म उत्सव 2026'
राष्ट्रीय वैज्ञानिक हिंदी कार्यशाला
'जलीय जीवों, पर्यावरण एवं समाज पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव'
'Impact of Climate Change on Aquatic Organisms, Environment and Society'
25 सितम्बर, 2026
ABCS



भाकृअनुप– राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो

कैनाल रिंग रोड, डाकघर दिलकुशा, लखनऊ-226002, उत्तर प्रदेश, भारत

ईमेल : director.nbfgr@icar.org.in | वैबसाइट: https://www.nbfgr.res.in/